साहित्य-माला सं० ४

ब्रजभाषा साहित्य का
ऋतु-सौन्दर्य

भाषा काव्य की षट् ऋतु विषयक उत्कृष्ट कविताओं का संकलन

संकलयिता :

प्रभुदयाल मीतल

प्रकाशक :

अग्रवाल प्रेस, मथुरा.

प्रथम संस्करण
आषाढ, सं० २००७ वि०

मूल्य ४)

मुद्रक, प्रकाशक :
प्रभुदयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, अग्रवाल भवन, मथुरा ।

ब्रजसाहित्य माला

प्रभुदयाल मीतल

प्राक्कथन

★

ज्योतिष-शास्त्रियों ने सूर्य की गति की कल्पना करते हुए उसके एक क्रांत वृत्ताकार मार्ग की भी कल्पना की है। सूर्य जितने समय मे इस मार्ग का पूरा चक्कर लगाता है, उसे एक वर्ष कहा जाता है। इस मार्ग पर स्थित सूर्य कभी पृथ्वी के निकट रहता है और कभी इससे दूर हो जाता है। जब सूर्य पृथ्वी के निकट रहता है, तब यहाँ पर गर्मी की अधिकता और शीत की न्यूनता होती है। जैसे-जैसे सूर्य पृथ्वी से दूर होता जाता है, वैसे-वैसे ही यहाँ पर गर्मी की न्यूनता और शीत की अधिकता होती जाती है। इस प्रकार सूर्य की स्थिति से उत्पन्न गर्मी-सर्दी की न्यूनाधिकता ही ऋतुओं का कारण है।

सूर्य के वृत्ताकार मार्ग के ज्योतिषियों ने १२ भाग किये हैं। ज्योतिष शास्त्र में इन १२ भागो को १२ राशियाँ और लोक से १२ महीने कहा जाता है। गर्मी, सर्दी और वर्षा के कारण वर्ष के ६ विभाग किये जाते हैं, जिनको छै ऋतु कहते है। इस प्रकार प्रत्येक ऋतु दो-दो महीनो की होती है। वृत्ताकार मार्ग पर स्थित सूर्य जब छै महीनो तक पृथ्वी के निकट होता है, तब उसे उत्तरायण और शेष छै महीनों तक जब वह पृथ्वी से दूर होता है, तब उसे दक्षिणायन कहते है। उत्तरायण मे शिशिर, बसत और ग्रीष्म तथा दक्षिणायन मे वर्षा, शरद और हेमत ऋतुएँ होती है।

यह क्रम सौर मान के अनुसार है, किंतु सूर्य के अतिरिक्त चद्रमा की गति के अनुसार भी वर्ष और महीनो की गणना की जाती है। चाद्र गणना मे वर्ष का आरभ चैत्र से होता है, इसलिए इस मत के अनुसार ऋतुओ का आरभ भी चैत्र मे पड़ने वाली बसत ऋतु से किया जाता है। सौर गणना मे ऋतुओ का आरभ शिशिर से होता है, जैसा ऊपर लिखा गया है।

प्रकृति के प्रत्येक व्यापार का अनुकूल अथवा प्रतिकूल प्रभाव मानव-जीवन पर पड़ना स्वाभाविक है, इसलिए साहित्य मे ऋतु वर्णन की परिपाटी अत्यत प्राचीन काल से प्रचलित है। सस्कृत साहित्य मे ऋतुओ का बडा मनोरम वर्णन मिलता है। कालिदास कृत 'ऋतु-सहार' इस विषय की प्रमुख रचना है। सस्कृत के अतिरिक्त प्राकृत और अपभ्रश साहित्य मे भी ऋतुओ का सुदर वर्णन किया गया है। हिंदी साहित्य में ब्रजभाषा कवियो की ऋतु वर्णन सबधी एक विशिष्ट शैली है, जिसके अनुसार विक्रम की १६ वीं शती

से अब तक सैकडो कवियों ने ही षट् ऋतु विषयक रचनाएं की है। इस प्रकार ब्रजभाषा में ऋतु वर्णन स बधी विशाल साहित्य प्रस्तुत है, जो काव्य-सौन्दर्य मे अपनी समता नही रखता है। परिष्कृत साहित्य के अतिरिक्त लोक गीतों में भी ऋतु वर्णन अति प्राचीन काल से होता रहा है। यद्यपि अत्यत प्राचीन लोक गीतों के प्रामाणिक नमूने इस समय प्रचुर परिमाण मे उपलब्ध नही हैं, तथापि इस बात के यथेष्ट प्रमाण है कि प्राचीन काल मे लोक गीतो द्वारा ऋतु वर्णन अत्यत विशद रूप मे होता था। वग, गुर्जर एव राजस्थान प्रदेशो के १० वीं से १२ वी शती के अनेक ऋतु गीत अब भी उपलब्ध हैं।

वैष्णव सस्कृति मे कृष्ण और राधा का सर्वोपरि महत्व है, जिसके कारण वैष्णव साहित्य, स गीत एव चित्र कला आदि कृष्ण और राधा की प्रेम-लीलाओ से ही विशेषतया स बधित हैं। लोक-मानस पर भी राधा-कृष्ण की कितनी गहरी छाप है, इसके प्रमाण वे लोक गीत है, जिनमे राधा-कृष्ण का विविध भाँति से वर्णन किया गया है। वग एव गुर्जर प्रदेशों के प्राचीन ऋतु गीतों मे भी कृष्ण-लीला का ही वर्णन मिलता है, किंतु राजस्थान के ऋतु गीत वहाँ के शूरवीरो के वर्णनो से भरे हुए है।

स स्कृत साहित्य मे कालिदास आदि प्राचीन कवियो न सौर मान के अनुसार शिशिर से ऋतु वर्णन का आरभ किया है। इसके विरुद्ध हिंदी साहित्य मे चाद्र मान को प्रमुखता देते हुए बसत मे ऋतु वर्णन का आरभ किया जाता है। होली शिशिर ऋतु के अत मे होने पर भी एक प्रकार से बसत ऋतु का उत्सव है। होली के साथ ही साथ बसत ऋतु का आरभ होता है, इसलिए स स्कृत कवियो के अनुसार शिशिर से ऋतु वर्णन करने मे हमको भी अधिक सुविधा थी। उस समय हमारा स कलन भी अधिक क्रमबद्ध होता, किंतु हिंदी कवियों की प्रचलित परिपाटी के अनुसार हमने बस त से ही अपने ऋतु वर्णन का आरभ किया है। साहित्यिक वर्णन की दृष्टि से होली और बसत में अधिक अतर नहीं है और ब्रजभाषा कवियों ने इन दोनो का मिला-जुला वर्णन किया भी है, किंतु पृथक् ऋतुओं के अतर्गत होने के कारण प्रस ग की दृष्टि से वे एक दूसरे से बहुत दूर पड गये है। पाठकों को इन दोनो का वर्णन साथ-साथ पढने से विशेष आनद आ सकता है।

समस्त ऋतुओ मे बस त सर्वश्रेष्ठ है। इस ऋतु में प्रकृति अपना नूतन शृ गार करती है, जिसके कारण समस्त भू मडल प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण हो जाता है। इस आनददायक ऋतु का कथन समस्त भाषाओ के कवियो ने जी भर कर किया है। ब्रजभाषा कवियो ने भी इसका विविध भाँति से बडा

विशद वर्णन किया है । उन्होने बसंत के अतिरिक्त होली का कथन भी बडे हर्षोल्लास के साथ किया है । यदि होली और बसंत संबधी ब्रजभाषा रचनाएँ एकत्रित कर दी जाँय, तब उनकी संख्या अन्य ऋतु संबधी कविताओ से बहुत अधिक होगी । होली और बसंत के पश्चात् वर्षा विषयक रचनाओ का महत्व है । यदि होली और बसंत विषयक कविताएँ पृथक कर दी जाँय, तब वर्षा संबधी ब्रजभाषा कविताएँ काव्य-सौन्दर्य और काव्य-परिमाण दोनों दृष्टियो से सर्वश्रेष्ठ ज्ञात होंगी । वर्षा ऋतु है भी बडी सुहावनी ऋतु । इस ऋतु मे समस्त रस ही नही, वरन् समस्त ऋतुओं की भी सामग्री मिलती है । यही कारण है कि ब्रजभाषा कवियो ने इसका बडा विशद वर्णन किया है । प्रस्तुत पुस्तक मे भी वर्षा संबधी रचनाएँ सबसे अधिक परिमाण में संकलित की गयी है । वर्षा, बसंत और होली के पश्चात् ब्रजभाषा कवियों का मन शरद वर्णन मे अधिक रमा है । इस ऋतु की रात्रि बडी मनोरम होती है । निर्मल आकाश, प्रकाशमान चद्र और उज्ज्वल चद्रिका के कारण कवियों को इस ऋतु के वर्णन की स्वाभाविक प्रेरणा मिली है । शरद की सुहावनी रात्रि में श्री कृष्ण ने गोपियो के साथ रास-लीला की थी, अत ब्रजभाषा कवियो ने शरद वर्णन के साथ रास-लीला पर भी सुंदर रचनाएँ की है । इन ऋतुओ के अतिरिक्त उन्होने ग्रीष्म, हेमंत और शिशिर का वर्णन विशेष विस्तार एवं मनोयोग पूर्वक नहीं किया है । फिर भी इन ऋतुओ के वर्णन मे काव्य-सौन्दर्य और काव्य-चमत्कार की कमी नही है ।

ऋतुओं का संबध प्रकृत्ति से है, अत उनके कथन मे प्राकृत्तिक छटा का वर्णन होना आवश्यक है । ब्रजभाषा कवियो की ऋतु संबधी रचनाओं के विषय मे कहा जा सकता है कि उनमे प्रकृत्ति-चित्रण और नैसर्गिक वर्णन की अपेक्षा ऋतुओं के उत्तेजक प्रभाव का अधिक कथन किया गया है । ऋतुओं का प्रकृत्ति-चित्रण दो प्रकार से हो सकता है—केवल प्राकृत्तिक दृश्यों का उल्लेख करने से अथवा प्राकृत्तिक दृश्यो का मानव-जीवन पर जो प्रभाव पड़ता है, उसका कथन करने से । प्रथम कार्य चित्रकार का है और द्वितीय कार्य कवि का । यदि काव्य मानव-जीवन का दर्पण है, तब उसमे इस प्रकार का वर्णन होना उचित ही है । ऐसी दशा मे ब्रजभाषा कवियो के ऋतु-कथन को भी उचित कहा जा सकता है, किंतु इसके औचित्य का एक दूसरा प्रमुख कारण भी है । बात यह है कि रस-शास्त्रियो ने ऋतुओ को शृंगार रस के उद्दीपन विभाव के अंतर्गत माना है, इसलिए शृंगार रस की रचनाओ मे कवियो को उनके उद्दीपन प्रभाव का वर्णन करना आवश्यक हो गया है । ऋतुओं के उद्दीपन

प्रभाव की सागोपाग योजना के लिए प्रत्येक ऋतु के अनुकूल विलास-सामग्री का भी विशद रूप से वर्णन किया गया है। इस प्रकार के कथन भक्त और शृ गारी दोनों प्रकार के कवियो की रचनाओ में मिलते है, यद्यपि उनके दृष्टि-कोण मे मौलिक भेद है। इसे उस युग का प्रभाव भी कहा जा सकता है।

सुख के साथ दु ख और स योग के साथ वियोग अनिवार्य रूप से लगे हुए हैं। स योगावस्था में जो वस्तुएँ सुखदायक ज्ञात होती हैं, वे ही वियोगावस्था में दु खजनक प्रतीत होती हैं। ब्रजभाषा कवियो ने जहाँ ऋतुओं के स योग-सुख का कथन किया है, वहाँ उन्होंने वियोगावस्था की विरह व्यथा का भी वर्णन किया है। सुख के दिन बात कहते ही बीत जाते हैं, किंतु दु.ख की घडियाँ बडी कठिनता से कटती हैं। यही कारण है कि कवियों ने स योग-सुख की अपेक्षा वियोग-व्यथा का बडा विशद और मार्मिक कथन किया है। यह आश्चर्य की बात है कि उन्होंने अधिकांश में नायिका की मनोव्यथा का कथन किया है किंतु उन्होने नायक की विरह-वेदना का वर्णन प्राय नही किया। नायिका की वियोग-व्यथा का वर्णन करने के लिए ब्रजभाषा काव्य में 'बारह-मासा' लिखने की भी परिपाटी प्रचलित है। प्रस्तुत पुस्तक में वियोग शृ गार की ऐसी मार्मिक रचनाओं का स कलन किया गया है, जिन्हें पढकर कलेजा मुँह को आने लगता है।

इस पुस्तक की रचना के समय अनेक मुद्रित एव हस्तलिखित काव्य ग्र थो से ऋतु स बधी रचनाएँ प्रचुर परिमाण में स गृहीत की गयी। उनके अतिरिक्त कठस्थ करने वाले काव्य-रसिकों से भी मैंने बहुत सी कविताएँ लिखी थी। इस प्रकार एकत्रित कई सहस्र कविताओं में से ६६१ चुनी हुई ऋतु स बधी रचनाएँ इस पुस्तक में सं कलित की गयी हैं। ऋतु विषयक ब्रजभाषा काव्य का ऐसा सर्वांगपूर्ण सं कलन हिंदी साहित्य में कदाचित प्रथम बार प्रकाशित हो रहा है, जिसके लिए मैं उक्त ग्र थ-कर्त्ताओं एव काव्य-रसिकों का अनुगृहीत हूँ। भारत के प्रसिद्ध विद्वान महापंडित राहुल साकृत्यायन जी ने अपनी विद्वत्तापूर्ण प्रस्तावना द्वारा इस पुस्तक का गौरव बढाया है। इसके लिए मैं उनका विशेष रूप से आभारी हूँ।

अग्रवाल भवन, मथुरा
द्वि० आषाढ कृ० ५ सं० २००७

—प्रभुदयाल मीतल

प्रभुदयाल मीतल

जन्म स० १९५९, ज्येष्ठ कृ० १२, मगलवार

★

प्रस्तावना

★

ब्रजभाषा का काव्य-साहित्य इतना विशाल है, कि इसका पूर्ण परिचय देना विशेषज्ञों के लिए भी दु साध्य है । खड़ी बोली की कविता के विकास और प्रचार के साथ ब्रज-माधुरी के प्रेमियों की सख्या का कम होते जाना खेद की बात है । कारण कि हिंदी क्षेत्र के बाहर के हिंदी पाठको के लिए ब्रजभाषा कठिन प्रतीत होने लगी है । वे तभी इसका परिचय प्राप्त करने का प्रयत्न कर सकते है, जब उन्हे मालूम हो कि ब्रज-वाणी कितने अनमोल रत्नों की खान है । मीतल जी इस दिशा मे कितना महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं, इसका एक प्रमाण उनकी यह नवीन रचना ''ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु-सौन्दर्य'' है । छैओं ऋतुओं के शोभा–वर्णन में हमारे महान् कवियों ने कितना कमाल किया है, इसे आप यहाँ देख सकते हैं ।

ऋतु-वर्णन विश्व के दूसरे महान् कवियों की भाँति हमारे देश के कवियों का भी प्रिय विषय रहा है । कालिदास ने तो ''ऋतुसहार'' की रचना षड्ऋतु–वर्णन के लिए ही की थी । सस्कृत महाकाव्यों की ऋतुवर्णन–परपरा को प्राकृत महाकाव्यों मे भी अक्षुण्ण रक्खा गया । अपभ्रंश साहित्य हमारे लिए बहुत महत्व रखता है,क्यों कि अपभ्रंश ही हमारी हिंदी भाषा का—ब्रज, मैथिली आदि जिसके ही अंग है—आदि स्रोत है । साहित्य में भी हमारे कवियों को अपभ्र श काव्यो से प्रेरणा मिली है, यद्यपि आगे चलकर वह प्राकृत तथा अपभ्र श की अपेक्षा सस्कृत से अधिक ली जाने लगी । हमारे छदों का उद्गम भी यही अपभ्र श है । इन सब कारणों से हम अपभ्र श साहित्य की उसी तरह उपेक्षा नही कर सकते, जिस तरह भाषा को कुछ कठिनाइयों के कारण हिंदी काव्य–प्रेमी सूर और बिहारी के काव्य की उपेक्षा नही कर सकते । ब्रजभाषा का विशाल साहित्य अब भी अधिकाश हस्त लेखों के रूप मे है, यही अवस्था अपभ्र श के ध्वसावशिष्ट साहित्य की भी है । यहाँ यह अप्रासंगिक न होगा, यदि ब्रजभाषा की ऋतु सबधी कविताओ से तुलना करने के लिए यहाँ पर कुछ अपभ्रंश के नमूने दे दिये जाँय । अपभ्र श की ये कविताएँ हमने अपनी ''हिंदी काव्य-धारा'' मे सकलित की हैं ।

बसंत—इस ऋतु का वर्णन करते हुए प्रस्तुत पुस्तक पृष्ठ ७ पर दी हुई ''रितु बस त तरु लस त कामिनी, भामिनी सब अग–अग, रमत फाग री । चर्चरी अति विकट ताल गावत गीतहिं रसाल'' आदि विष्णुदास की इस कविता के साथ आठवीं सदी के महाकवि स्वयभू की पक्तियाँ देखिए—

पइठु बसत-राउ आणदे । कोइल-कलयलु मंगल-सद्दें ॥
अलि-मिहुणेहिं वंदिणेहि पढतेहि । वरहिण वावणेहि णच्चंतेहि ॥
कत्थइ चूअ-वणइ पल्लवियइँ । णव किसलय-फल-फुल्लु ब्भवियइँ ॥
कत्थइ गिरि-सिहरहि विच्छायइँ । खल-मुँह इव मसि-वण्णइँ जायइँ ॥
कत्थइ माहव-मासहो मेइणि । पिय-विरहेण व सूसइ कामिणि ॥
कत्थइ गिज्जइ-वज्जइ मदलु । णर-मिहुणेहिं पणच्चिउ गोंदलु ॥
कत्थइ अगारय-सकासउ । रेहइ तबिरु फुल्लु पलासउ ॥
ण दावाणलु आउ गवेसउ । "को मइ दड्ढ ण दड्ढु पएसउ" ॥
ऊसरु ऊसरुतहु अपवित्तउ । अण्णए णव पुप्फवइएच्छित्तउ ॥
कत्थइ मूय-कुसुम-मजरियउ । णाइ वसत वड़ायउ धरियउ ॥
कत्थइ पवण-हयइ पुण्णायइ । ण जगे उत्थल्लिया पुण्णायइ ॥
कत्थइ अहिणवाइ भमरउलइ । थियइ वसत-सिरिहि ण कुरुलइ ॥

उपर्युक्त पक्तियों के साथ ही ग्यारहवीं सदी के मुल्तानी कवि अब्दुर्रहमान की निम्न पक्तियाँ देखिऐ—

खणु मुणिउ दुसहु जम-कालपासु । वर-कुसुमिहि सोहिउ दस दिसासु ॥
गय णिवउ णिरतर गयणि चूय । णव मजरि तत्थ वसंत हूय ॥
जल-रहिय मेह संतविअ काइ । किम कोइल कलरउ सहण जाइ ॥
रमणी-यण रत्थिहि परिभमति । तूरा-रवि तिहुयण वाहिरंति ॥
चच्चिरिहि गेउ झुणि करिबि तालु । नच्चीयइ अउव्व वसंत-कालु ॥
घण-निविड-हार परिखिल्लरीहि । रुणझुण-रउ मेहल-किंकिणीहिं ॥

ग्रीष्म—इस ऋतु के वर्णन में केशवदास (पृ० २४) सेनापति (पृ० ६४) 'करन' और (पृ० ८०) के साथ ग्यारहवीं सदी के बब्बर की उक्तियाँ देखिऐ—

तरुण-तरणि तवइ धरणि, पवण वहइ खरा ।
लग्ग णाहि जल वड मरुथल, जण-जिअण-हरा
दिसइ चलइ हिअअ दुलइ, हम इकलि वहू ।
घर णाहि पिअ सुणहि पहिअ ! मण इच्छइ कहू ॥

बब्बर के अतिरिक्त उसके समकालीन अब्दुर्रहमान की पक्तियाँ देखिऐ—

विसम झाल झलकंत जलतिय तिव्वयर ।
महियलि वण-तिण-दहण तवतिय तरणि-कर ॥
जम-जीहइ णं चचलु णहयलु लहलहइ ।
तडतडयड धर तिडइ ण तेयह भरु सहइ ॥
अइउन्हउ बोमयलि पहजणु जं वहइ ।
तं झंखरु विरहिणिहि अंगु फरिसिउ दहइ ॥

वर्षा—इस ऋतु के वर्णन में भुवनेश (पृ० ११६) दिवाकर (पृ० १४०) बेनीप्रवीन तथा दूसरे कवियों की रचनाओं (पृ० १५१. २८१, ५३ २८८, १५५. २६५)के साथ आठवीं सदी के महाकवि स्वयभू की कुछ पंक्तियाँ देखिए—

अमर महद्धणु गहिय करे, मेह गइन्दे चडिवि जंस-लुद्धउ ।
उप्परि गिभ-णराहिवहो, पाउस-राउ णाइँ सण्णद्धउ ॥
जे पाउस-णरिन्दु गलगज्जिउ, धूली रउ गिभेण विसज्जिउ ।
गपिणु मेह विंदि आलग्गउ, तडि करवालु पहारेहि भग्गउ ॥
ज वि वरम्मुहु चलिउ विसालउ, उट्ठिउ हण-हणंतु उण्हालउ ।
धग-धग-धग-धगतु उद्धाइउ, हस-हस-हस-हसंतु सयाइउ ॥
जल-जल-जल-जलंतु पयलतउ, जालावलि फुलिग मेल्लतउ ।
मेह-मेहग्गय-घड विहडतउ, ज उण्हालउ दिट्ठ भिडतउ ॥

दसवीं सदी के फक्कड महाकवि पुष्पदत पावस पर कहते हैं—

मय-उलु तसइ रसइ वरिसइ घणु । पीयलु सामलु विरसइ सुरधणु ॥
महि-णीहरिउ हरिउ बड्ढइ तणु । पवसिय-पियहि पियहि तप्पइ मणु ॥
फुल्ल कलंब-तवु दीसइ वणु । तिम्मइ तम्मइ मणि जूरइ जणु ॥
तडि तडयडइ पडइ रु जइ हरि । तरु कडयडह फुडइ विहडइ गिरि ॥
जलु परियलइ घुलइ घुम्मइ दरि । अइरय सरइ भरइ पूरें सरि ॥
जलु थलु सयलु जलुजि सजायउ । मगगु अमगगु ण किंपि वि णायउ ॥

बारहवीं सदी (१०८८–११७६ ई०) के आचार्य हेमचद्र सूरि ने भी पावस पर कविताएँ उद्धृत की हैं—

रेहइ अरुण--कंति धरणी-अलि इदगोवया ।
पाउस-सिरि नाइ पय जावय--विंदु लग्गया ॥
गहिरु गज्जइ धरइ मय-वारि, विहल-घुलु नहु कमइ ।
गज्जइ घणमाला घणघणाह, न मयण–निवइणो कुंजरघड ॥

वज्जहि गज्जिर-घण-मद्दल, नच्चहि नह-यल-अगणि नव-चचल विज्जुल ।
गायहि सिहि इह सगीअउ, पाउस-लच्छिहि करइ जुआणह मण आउल॥

शरद—सौन्दर्य का वर्णन केशवदास(पृ० १६६,२२६)सेनापति(पृ० १७१) सेवक (पृ० १७३) ने किया है । अब त्रिपुरी के कवि बब्बर का चमत्कार देखिए—

णेत्ताणंदा उग्गो चंदा, धवल–चमर–सम सिय अरविंदा ।
उग्गे तारा तेआ-सारा, विअसु कुसुअ–वण–परिमल–कंदा ॥
भासे कासा सव्वा आसा, महुर–पवण लह-लहिअ करता ।
हंसा सद्दे फुल्ला बधू, सरअ-समअ सहि ! हिअ अहरता ॥

अथवा अब्दुर्रहमान की रसवती वाणी में—

गय विद्दरवि वलाहय गयणिहि । मणाहर रिक्ख पलोइय रयणिहि ॥

हुयउ वासु छम्मयलि फणिंदह। फुरिय जुन्ह निसि निम्मल चंदह ॥
सोहइ सलिलु सरिहि सयवत्तिहि। विविह तरंग तरंगिणि जंतिहि ॥
धवलिय धवल सख-सकासिहि। सोहइ सरह तीर सकासिहि ॥
णिम्मल णीर सरिहि पवहंतिहि। तड रेहंति विहंगम-पंतिहि ॥
पडिबिंबउ दरसिज्जइ विमलहि। कद्दम भारु पमुक्कि‌उ सलिलहि ॥
दिंतिय णिसि दीवालिय दीवय णव ससिरेह-सरिस करि लीअय।
मंडिय भुवण तरुण जोइक्खहि। महिलिय दिंति सलाइय अक्खिहि ॥

हेमंत—चित्रण में केशवदास (पृ० २०२) के साथ अब्दुर्रहमान को देखिए—

तह कखिरि अणियत्ति, णियती दिसि पसरु।
लइ ढुक्कउ कोसिल्लि हिमतु तुसार भरु ॥
हुइय अणायर सीयल, भुवणिहि पहिय जल।
ऊसारिय सत्थरहु सयल कटुट्ट दल ॥
सेरंधिहि घणसारु ण चंदणु पीसयइ।
अहरक ओला लकिहि मयणु समीसियइ ॥
सीहडिहि वज्जियउ घुसिणु तणि लेवियइ।
चपएलु मियणाहिण सरिसउ सवियइ ॥

शिशिर—सौन्दर्य के सुंदर वर्णन में केशव (पृ० २२६) सेनापति (पृ० २३२) की सूक्तियों के साथ बब्बर की रचना का चमत्कार देखिए—

जं फुल्लु कमल-वण बहइ लहु पवण, भमइ भमरकुल दिसि-विदिसं।
झंकार पलइ वण खट्ट कुहिल गण, विरहिअ हिअ हुअ दुर-विरस ॥
आणंदिय जुअजण उलसु उठिअ मण, सरस णलिणि-दल किअ सअणा।
पलट सिसिररिउ, दिअस दिहर भउ, कुसुम समअ अवतरिअ वणा ॥

अपभ्रंश के इन उद्धरणों से प्रस्तुत पुस्तक के ऋतु-वर्णन की तुलना करने पर मालूम होगा कि स्वयंभू, पुष्पदंत, अब्दुर्रहमान और बब्बर के उत्तराधिकारियों ने कविता के ध्वज को नीचे नहीं गिरने दिया।

एक साधारण कविता-समुच्चय मे ऋतु वर्णन पढ लेने से पाठकों की तृप्ति नहीं होती थी। सीतल जी ने ब्रजकाव्य-महोदधि से ऋतु वर्णन के इतने अधिक और सुंदर रत्नों को एकत्रित कर साहित्य प्रेमियों का बहुत उपकार किया है। उनके ब्रज साहित्य के गभीर ज्ञान और उनकी न विश्राम लेने वाली लेखनी से ब्रजभाषा साहित्य के प्रचार और उसे प्रकाश में लाने के लिए अभी बहुत आशा की जा सकती है।

नैनीताल
२६–६–५० —राहुल सांकृत्यायन

विषय-सूची

१. बसंत

२. ग्रीष्म

३. वर्षा

४. शरद

५. हेमंत

६. शिशिर

अनुक्रमणिका

ऋतु अनुसार पद्य-संख्या

ऋतु	मास	पद्य संख्या
१. बसंत	[चैत्र-वैशाख]	१७८
२ ग्रीष्म	[ज्येष्ठ-आषाढ]	९५
३ वर्षा	[श्रावण-भाद्रपद]	३१५
४ शरद्	[आश्विन-कार्तिक]	१२१
५. हेमंत	[मार्गशीर्ष-पौष]	८२
६ शिशिर	[माघ-फाल्गुन]	१७०
	कुल जोड़	९६१

— वसंत —

★

राशि—

मीन + मेष

★

मास—

चैत्र + वैशाख

बरनि बसंत सुपुष्प अति, बिरह-विदारन बीर ।
कोकिल कल रव, कलित बन, कोमल सुरभि समीर ।।

बसंत-परिचय

बसंत समस्त ऋतुओं में सर्वश्रेष्ठ ऋतु मानी गयी है, इसीलिए इसे ऋतुराज कहा जाता है। शिशिर के घोर संताप से संत्रस्त प्रकृति बसंत ऋतु के आते ही अपना नूतन शृंगार करने लगती है। पल्लव हीन वृक्षों में नयी कोंपलें आने लगती हैं। शीघ्र ही समस्त बन-उपबन सुंदर नवोत्पन्न पत्र-पुष्पों से लहलहाने लगते हैं। आम के वृक्षों में नये बौर आने लगते हैं। शीतल, मंद, सुगंधित वायु चलने लगती है, जो पुष्प-मकरंद और आम्र-मंजरी से सुवासित होकर चतुर्दिशाओं को सुगंधित कर देती है।

पक्षियों के कलरव और भ्रमरों की गुंजार से समस्त बन-बाग मुखरित हो उठते हैं। आम्र वृक्षों की डालियों पर जब कोकिलाएँ मत्त होकर कूकने लगती हैं, तब एक अजीब समाँ बँध जाता है। सरसों के फूलने से खेतों पर पीली चादर सी बिछी हुई ज्ञात होती है। ऐसा मालूम होता है कि बसंत के स्वागत के लिए प्रकृति ने सर्वत्र बसंती वस्त्रों की बिछायत की है। इस आनंददायक ऋतु में प्रकृति आनंद विभोर होकर समस्त जल-थल, भूमि-आकाश और जड़-जंगम पर परमानंद बिखेरती फिरती है। इस प्रकार सर्वत्र आनंद ही आनंद छा जाता है।

प्रकृति के प्रत्येक व्यापार का अनुकूल एवं प्रतिकूल प्रभाव प्राणी मात्र पर पड़ना स्वाभाविक है। सर्वाधिक चेतन एवं संवेदनशील प्राणी होने के कारण मानव-जीवन पर प्रकृति की गति-विधि का सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है। फलत: बसंत ऋतु के हर्षोल्लास में मानव-मन खिल उठता है। इस भू-मंडल का सभ्य-असभ्य अथवा उन्नत-अवनत प्रत्येक मानव इस ऋतु में स्वभावत: आनंद-मग्न होकर अपने हृदय की आनंद-राशि बिखेरने के लिए उतावला हो जाता है। तब वह नाना प्रकार के उत्सव मना कर अपने आनंदातिरेक को मूर्त रूप देने की चेष्टा करने लगता है।

हमारे देश में अत्यंत प्राचीन काल से इस ऋतु में अनेक उत्सव मनाने का वर्णन मिलता है। इस ऋतु के उत्सवों में मदनोत्सव, बसंतोत्सव, सुबसंतक, अशोकोत्तंसिका आदि विशेष प्रसिद्ध हैं, जिनके मनोरंजक विवरणों से प्राचीन ग्रंथ भरे पड़े हैं। मदनोत्सव फाल्गुन से चैत्र मास तक मनाया जाता था, किंतु चैत्र शुक्ला द्वादशी से पूर्णमासी पर्यंत इस उत्सव का हर्षोल्लास चरम सीमा पर पहुँच

जाता था । त्रयोदशी को सर्वत्र कामदेव की पूजा होती थी। अगणित युवक और युवतियाँ अपने-अपने नगर और ग्राम के उद्यानों मे मदनोत्सव मनाते हुए नाना प्रकार की केलि-क्रीडाएँ किया करते थे।

जिस दिन बसंत इस भू-मंडल पर सर्व प्रथम अवतरित होता है, उस दिन 'सुवसंतक' उत्सव मनाया जाता था। इस प्रकार आजकल की बसंत पंचमी का उत्सव प्राचीन काल के 'सुवसंत' का प्रतिनिधि समझना चाहिए। बसंत पंचमी आजकल के हिसाब से शिशिर ऋतु मे पड़ती है, किंतु बसंत की धूम-धाम तभी से आरंभ हो जाती है। यद्यपि होलिकोत्सव भी शिशिर ऋतु मे होता है, तथापि शिशिर और बसंत के संक्रांति काल मे होने के कारण यह भी बसंतोत्सव का ही एक अंग माना गया है। इन उत्सवों में राजा से लेकर रंक तक सभी वर्गों के स्त्री-पुरुष समान उत्साह और उमंग से भाग लेते थे।

इन उत्सवों में भाग लेने वाली स्त्रियाँ लाक्षा रस और कुंकम के रंग में रँगी हुई हलके लाल रंग की साड़ियाँ पहनती थीं। वे अशोक के लाल फूल और नवोत्पन्न आम्र-मंजरी धारण कर मल्लिका की माला पहनती थीं। उन दिनों बसंत में लाल वस्त्र और लाल पुष्प धारण करने का आम रिवाज था। आजकल इस ऋतु के उत्सवों में लाल छींटे पड़े पीले वस्त्र और सरसों के पीले फूलों का उपयोग किया जाता है। नाना प्रकार के नवीन पुष्पों से मनोरंजन करने के लिए उन दिनों उद्यानों मे फूल बीनने का भी बड़ा महत्व था। इसके लिए 'पुष्पावचायिका' के नाम से एक उत्सव ही मनाया जाता था। आजकल भी इस ऋतु मे फूलडोल के पुष्पोत्सवों का अधिक महत्व है। प्राचीन काल की तरह वर्तमान काल में भी बसंत ऋतु के अनेक उत्सव मनाये जाते है, जो बसंत पंचमी और होलिका से लेकर समस्त चैत्र मास में होते रहते है।

बसंत ऋतु के उत्सवों की एक विशेषता यह है कि इनमे काव्य-संगीत और गायन-वादन का विशेष समारोह किया जाता है। इस ऋतु के आनंददायी प्रभाव का यह स्वाभाविक परिणाम है। अति प्राचीन काल से कवियों ने इस ऋतु के अगणित गीत गाये है। इसका वर्णन करने पर उनकी वाणी अपूर्व उत्साह और अपरमित उमंग से भर जाती है। ब्रजभाषा कवियों ने इसका और भी सरस वर्णन किया है।

चैत्र

फूली लतिका ललित, तरुन तन फूले तरुवर ।
फूली सरिता सुभग, सरस फूले सब सरवर ।।
फूली कामिनि कामरूप करि कतहि पूजहि ।
सुक-सारी कुल केलि, फूलि कोकिल कल कूजहि ।।
कहि 'केसव' ऐसे फूल महँ, सूल न हिए लगाइए ।
पिय आप चलन की को कहै, चित्त न चैत चलाइए ।।१।।

**

चपक चमेलिन के चमन चमतकार,
चमू चचरीक की चितौत चोरै चित है ।
चाँदी कौ चबूतरा चहूँघा चमचम करै,
चदन सो 'गिरिधरदास' चरचित है ।।
चारु चाँद तारे कौ चदोवा चाँद चाँदनी सो,
चामीकर चोपन पै चचला चकित है ।
चूनिन की चौकी चढी चदमुखी चूडामनि,
चाहन सो चैन करे चैत के चरित है ।।२।।

वैशाख

मैन मदमाते मजेदार मनहर महा,
मुनि मनि मतन के मन के मथन है ।
मनिन कौ महल, महाल मनो मन्मथ कौ,
'गिरिधरदास' तामे मोदमई मन है ।।
मजु मल्लिकान की महँक मंजरीन की,
मधुप फिरे मत्त मधुमादक मगन है ।
माधव के मास मध्य माधव मयंकमुखी,
मौज करे मिलै मनो मानिनी मदन है ।।३।।

**

'केसवदास' अकास-अवनि बासित सुवास करि ।
बहत पवन गति मंद गात मकरंद बिंद धरि ।।
दिसि-विदिसिन छवि लागि, भाग पूरित पराग बर ।
होत गंध ही अंध, बधिर बौरौ विदेसि नर ।।
सुनि सुखद सुखद सिख सीख पति, रति सिखई सुख साख मे ।
बर बिरहिनि बधत विसेष करि, काम विसिख वैसाख मे ।।४।।

बसंत

बसंत की बहार

(राग बसंत)

आई बसंत रितु अनूप, सुनहु कंत ! मोरे।
बोलत बन कोकिला, मनो कुहू-कुहू रस ढोरे ॥
फूली बनराय-जाई, कुंद कुसुम घोरे।
मद रस के माते मधुप, फिरत दौरे-दौरे ॥
हम तुम मिल खेलें लाल ! कुंज-भवन कोरे।
'गोविंद' प्रभु नंद-सुवन, खेलें इक ठौरे ॥५॥

★

(राग मालकोश)

चल बन देख सयानी ! यमुन-तट ठाडौ छैल गुमानी।
फूले कदंब, नाहर पलास द्रुम, त्रिविध पवन सुख-सानी ॥
बहु रंग कुसुम-पराग महक रह्यौ, अलि लपटे गुंजत मृदु बानी।
कीर, कपोत, कोकिला धुनि सुन, रितु बसंत लहै कानी ॥
सुन सखि-वचन, मिल उठी पीय सों, नव निकुंज की रानी।
बीनन चले दोऊ कुसुम कलियन, ब्रज-कुंजन रितु मानी ॥६॥

★

(राग मालकोश)

फूल्यौ री सघन बन, तामैं कोकिला करत गान।
चलहु बेग वृषभान-नंदिनी ! छाँडि कठिन मद मान ॥
नव रितुराज आयौ री नेरे, मिल कीजै मधु-पान।
'सूरदास मदनमोहन' पिय को रिझाइऐ, सुनाइऐ मिल मधुरी तान।७।

★

(राग सारंग)

देखो लालन ! कुंज-भवन छवि।
लता, कुसुम पल्लव, फल छाए, अति ही निविड, पैठत नाहिन रवि ॥
आसन, बसन, साज फूलन के, फूलन की तहाँ डोरि रही छवि।
'रसिक' प्रीतम सुख बिलसैं निसि-दिन, सो सुख कहा कहै कोऊ कवि ॥८॥

बसंत का राग-रंग

(राग बसंत)

नवल बसंत, नवल वृंदावन, खेलत नवल गोवर्धन-धारी ।
हलधर नवल, नवल ब्रज-बालक, नवल बनी गोकुल की नारी ॥
नवल जमुन-तट, नवल विमल जल, नौतन मंद सुगंध समीर ।
नवल कुसुम, नव पल्लव-साखा, कूजत नवल मधुर पिक-कीर ॥
नव मृग-मद, नव अरगजा बंदन, नौतन अगर, सु नवल अबीर ।
नव बंदन, नव हरद-कुमकुमा, छिरकत नवल परस्पर नीर ॥
नवल महुवरी बाजै अनुपम, भूषन नौतन चीर ।
नवल रूप 'कृष्णदास' प्रभू के, जस गावत मुनि धीर ॥९॥

खेलत बन सरस बसंत लाल । कोकिल कल कूजित रसाल ॥
जमुना के तट फूले तमाल । केतकी-कुंद नौतन प्रबाल ॥
तहाँ बाजत बीन मृदंग ताल । बिच-बिच मुरली अति ही रसाल ॥
नव सत सजि आईं ब्रज की बाल। सजि भूषन-बसन अँग, तिलक भाल॥
चोबा, चंदन, अबीर हु गुलाल । छिरकत पीय मदन गुपाल ॥
आलिंगन, चुंबन देत गाल । पहरावत उर फूल की माल ॥
इहि बिधि क्रीडत नृप-कुमार । 'कुंभनदास' बलि-बलि बिहार ॥१०॥

रितु बसंत वृंदाबन फूले द्रुम भाँति-भाँति,
सोभा कछु कहि न जात, बोलत पिक-मोर-कीर ।
खेलत गिरिधरन धीर, संग ग्वाल वृंद भीर,
बिहरत मिल जमुना-तीर, बाढी तन मदन-पीर ॥
आई ब्रज नवल नारि, संग राधिका कुमारि,
नव सत साजे सिंगार, नवल बसन चीर ।
बदन कमल नैन-भाल, छिरकत केसर-गुलाल,
बूका-चोबा रसाल, सोंधौ-मृगमद-अबीर ॥
बाजत वीना-उपंग, बाँसुरी-मृदंग-चंग,
मदनभेरि, महुवर, ढप, झाँझ, झालरी, मँजीर ।
निरखत लीला अपार, भूली सुधि-बुधि सँभार,
बलिहारी 'विष्णुदास' देखत ब्रजचंद धीर ॥११॥

(राग बसंत)

नव कुंज-कुंज कूजित विहंग। मानो बाजन बाजे नृप अनंग ॥
द्रुम फूल रहे सब फलन संग। तहँ अति सुबास अरु विविध रंग ॥
तहाँ बाजत झाँझ अरु ताल, चंग। अपवट, आवज, बीना, उपंग ॥
अरु श्री मंडल, महुवर, मृदंग। बाजहिं, गावहिं लय मोरि अंग ॥
धीमत धीकट धग ताधिलांग। दोउ मान लेत नृत्यत सुधांग ॥
बूका गुलाल डारत उतंग। बलि 'द्वारकेस' छवि जुग त्रिभंग ॥१२॥

★

तेरी नवल तरुनता नव बसंत। नव-नव विलास उपजत अनंत ॥
नव अधर अरुन पल्लव रसाल। फूले बिमल कमल लोचन बिलास ॥
चलि भ्रकुटि भंग भृंगन की पाँति। मानो हँसनि-लसन कुसुमनि सु भाँति॥
भई प्रगट अलप रोमावली मोर। स्वाँस सौरभ मलय पवन झकोर ॥
वल फल उरोज सुंदर सु ठान। मृदु मधुर बोल लिगे कोकिल गान ॥
देखत मोहे ब्रज-कुँवर राय। बाढ्यौ मन मन्मथ चौगुनौ चाय ॥
तोहि मिलि बिलस्यौ चाहत है स्याम। जाहि देखत लज्जित कोटि काम॥
तब चली चरन मंथर बिहार। रुन झुनन-झुनन नूपुर झकार ॥
सु पुलकित गोकुलपति-कुमार। मिलि भयौ 'गदाधर' सुख अपार ॥१३॥

★

रितु बसंत, तरु लसत कामिनी—
भामिनी सब अंग-अंग, रमत फाग री।
चर्चरी अति विकट ताल, गावत गीतहि रसाल,
उरप, तिरप, लास्य, तांडव, लेत लाग री ॥
बदन बूका गुलाल, छिरकत तकि नैन-भाल,
लाल गाल मृगज लेप, अधर दाग री।
गिरिवरधर रसिकराय, मेचक मुंदरी लगाय,
कंचुकी पर छाप दीनी, चकित नागरी ॥
बाजत रसना मंजीर, कूजत पिक-मोर-कीर,
पवन भीर जमुना तीर, महल-बाग री।
'विष्णुदास' प्रभु प्यारी, मेटत हँसि देत तारी,
काम-कला निपट निपुन प्रेम-आगरी ॥१४॥

बसंतोत्सव

(राग बसंत)

श्री पंचमी परम मंगल मदन महोत्सव आज ।
बसंत बनाय, चली ब्रज-सुंदरि, लै पूजा कौ साज ।।
कनक कलस जलपूर, पढ़त रति-काम मंत्र रसमूल ।
ता पर धरी रसाल मंजरी, आवृत पीत दुकूल ।।
चोबा, चंदन, अगर, कुमकुमा, नव केसर, घनसार ।
धूप, दीप नाना नीराजन, विविध भाँति उपहार ।।
बाजत ताल, मृदंग, मुरलिका, बीना, पटह, उपंग ।
गावत राग बसंत मधुर सुर, उपजत तान-तरंग ।।
छिरकत अति अनुराग मुदित गोपीजन मदन गोपाल ।
मानो सुभग कनक कदली मध, सोभित तरुन तमाल ।।
यह विधि चली रितुराज बधावन, सकल घोष आनंद ।
'हरिजीवन' प्रभु गोवरधन-धर, जय-जय गोकुलचंद ।।१५।।

★

ये देखो पंचमी रितु बसंत । तहाँ द्रुम अरु बेली सब फलंत ।।
तहाँ पठइ ललितादि करि विचार । नव कुंजन में करिहैं विहार ।।
ले आईं सबै सिंगार साज । हरि दौरि मिले मनो मानराज ।।
तब केसर, चोबा, अंगराग । खेलत गुलाल बाढ़्यौ अनुराग ।।
कल कोकिल कल रव सुक-समाज । अलि कूजत पुंज निकुंज गाज ।।
रितु-कुंकम लै ठाड़ी निहार । मध्य राजत सरबस बोरि-धार ।।
सखी ताल-मृदंग बजाय-गाय । तहाँ 'द्वारकेस' बलिहारि जाय ।।१६।।

★

आजु सुभग दिन बसंत पंचमी, जसुमति करत बधाए ।
विविध सुगंध उबटि के लाला, ताते नीर न्हवाए ।।
घर तें निकसि-निकसि ब्रज-सुंदरि, नंद-द्वार पै आईं ।
अंब-मौर की पुष्प-मंजरी, कनक-कलस भरि लाईं ।।
चोबा, चंदन और अगरजा, केसरि सुरंग मिलाई ।
प्रमुदित छिरकत प्रान पिया को अबीर-गुलाल उड़ाई ।।
बाजत ताल, मृदंग, झाँझ, ढप, गावत गीत सुहाए ।
तन, मन, धन, न्यौछावरि करिके, आनँद उर न समाए ।।
श्री गिरिधरजू ! तुम चिरजीवो, भक्तन के सुखदाई ।।
श्री वल्लभ-पद-रज-प्रताप तें, 'रसिक' सदा बलि जाईं ।।१७।।

वसंत का आगमन

फूले गुलाब कियारिन-कोरन, लौनी लवंग-लता उरझाई।
बोले चकोर चहूँ दिसि कोकिल-भौंर-समूहन गुंज सुनाई॥
बंदनवार बँधे तरु-पुंजन, कुंजन फूलन-सेज सोहाई।
आनंद आन भई सब के, सुनि कै रितुराज की आज अवाई॥१८॥

★

चहकि चकोर उठे, सोर करि भौंर उठे,
बोलि ठौर-ठौर उठे कोकिल सुहावने।
खिलि उठी एकै बार कलिका अपार,
हलि-हलि उठे मारुत सुगंध सरसावने॥
पलक न लागी अनुरागी इन नैननि पै,
पलटि गए धौं कबै तरु मनभावने।
उमगि अनंद अँसुवान लौं चहूँधा लागे,
फूलि-फूलि सुमन मरंद बरसावने॥१९॥

★

कूकि उठी कोकिलान, गूँजि उठी भौंर-भीर,
डोलि उठे सौरभ समीर सरसावने।
फूलि उठी लतिका लबंगन की लौनी-लौनी,
झूलि उठीं डालियाँ कदंब सुख पावने॥
चहकि चकोर उठे, कीर कर सोर उठे,
टेर उठी सारिका बिनोद उपजावने।
चटकि गुलाब उठे, लटकि सरोज-पुंज,
खटकि मराल रितुराज सुनि आवने॥२०॥

आयो रितुराज, फूल्यौ सुमन-समाज,
भयौ अमल अकास, बहै पवन हरै-हरै।
लपट लतान सों तमालन के जाल, बौरे-
अमित रसाल सो बिसाल मन को हरै॥
कहत 'किसोर' कीर-कोकिला-चकोर, नहीं-
गनै साँझ-भोर, चारो ओर सोर को करै।
आनँद मगन कैसी लगन लगाई देव,
मंदिरन कुंज-कुंज अलि-पुंज गुंजरै॥२१॥

पाँखुरी लै साजी सेज सेवती की, बेलिन-
चमेलिन हू सरस बितान छवि छाई है।
फैल्यौ चहुँ गहब गुलाबन कौ गंध, धूरि-
धूँधरित सुरभि समीर सुखदाई है॥
चारयौ ओर कोकिल-चकोर-मोर-सोरन सो,
और छिति-छोरन अनंद अधिकाई है।
आज रितुराज के समागम के काज होत,
धाम-धाम बेलिन के आनंद बधाई है॥२२॥

आयौ रितुराज आज देखत बनै री आली!
छायौ महा मोद सो प्रमोद बन भूमि-भूमि।
नाँचत मयूर, मद उमँद मयूरिनि को,
मधुर-मनोज, सुख चाखै मुख चूमि-चूमि॥
'पंडित प्रवीन' मधु लंपट मधुप पुंज,
कुंजन मे मंजरी कौ लेत रस घूमि-घूमि।
हेली! पौन प्रेरित नवेली सी द्रुमन-बेलि,
फैली फूल-बेलिन मे भूल रही झूमि-झूमि॥२३॥

मलय-गिरि-मारुत के मिस बिरहाकुलनि,
दिसि-दिसि व्यालन कौ विष बगरायौ री।
ता पर 'किसोर' तैसौ पंचम नवल राग,
कोक की कलान भीनौ कोकिलान गायौ री॥
को न सुनि मोचै मान, लोचै को न मिलन को,
सोचै को न स्याम देखि, नेह सरसायौ री।
आमन के भौर लागे, अंकुरन मौर लागे,
भौर लागे भ्रमन, बसंत अब आयौ री॥२४॥

*

मृदु मंजु रसाल मनोहर मंजरी, मोर-पखा सिर पै लहरै।
अलबेलि नबेलिन बेलिन में, नवजीवन जोति छटा छहरै॥
पिक-भृंग सु गुंज सोई मुरली, सरसो-सुम पीत पटा फहरै।
रसवंत विनोद अनंत भरे, ब्रजराज बसंत हिए बिहरै॥२५॥

बाटिका बिपिन लग्यौ छावन रँगीली छटा,
छिति तें सिसिर कौ कसाला भयौ न्यारौ है ।
कूजन किलोल सो लगे है कुल पच्छिन के,
'पग्न' समीरन सुगंध कौ पसारौ है ।।
लागत बसंत नव, मत मन जागौ मैन,
दैन दुख लागौ बिरहीन बरियारौ है ।
सुमन-निकुंजन मे, कुंजन के पुंजन मे,
गुंजत मलिंदन कौ वृंद मतवारौ है ।।२६।।

★

मंजु मलयाचल के पौन के प्रसंगन तें,
लाल-जाल पल्लव लतान लहकै लगे ।
फूलें लगे कमल, गुलाब आबवारे घने,
'शंकर' पराग मे अकाम अहकै लगे ।।
बोलें लगी कोकिल, भनत भौंर डोलै लगे,
चोप सो अमोलै मकरंद चहकै लगे ।
नीकौ न अटक, चढ्यौ काम कटक चारो ओर,
चारो ओर चटक सुगंध महकै लगे ।।२७।।

★

हूजै लाज बाज गाज काज है कहाँ कौ साज,
आज रितुराज लै समाज ताज धसै चेत ।
'द्विज बलदेव' बन-बाग तौ निहारौ नैक,
बौरे करि डारै, डारै डाक सी अधीर हेत ।।
ह्वै कै काह फेरि बैसे फरस फबे है फेर,
फहरें पताकै फौज फेरौ फख होत खेत ।
चौगुनौ चढाव चाव चहँकि चकोर उठे,
ठौर-ठौर कैलिया कुहकै करि हूकै देत ।।२८।।

डहडही भौरी मंजु डार मँहकार की पै,
चहचही चुहिल चहूँकित अलीन की।
लहलही लौनी लता लपटी तमालन पै,
कहकही तापै कोकिला की, काकलीन की॥
तहनही करि 'रसखान' के मिलन हेतु,
बहवही बनिता जे मानस मलीन की।
महमही मंद-मंद मारुत मिलन तैसी,
गहगही खिलनि गुलाब की कलीन की॥२९॥

★

गौन हद होन लागे, सुखद सुभौन लागे,
पौन लागे विपद, वियोगनि के हियरान।
सुभग सवाद लै सु भोजन लगन लागे,
जगन मनोज लागे जोगिन के जियरान॥
कहत 'गुलाल' बन फूलन पलास लागे,
सकल बिलासिन के हिये मुनि हियरान।
दिन अधिकान लागे, रितुपति आन लागे,
भान लागे तपन, सु पान लागे पियरान॥३०॥

छलकत छवि फूलन में गलकत मकरंद आली!
ललकत ललामी रवि, भौर सो लजायौ है।
लहकत समीर त्रिविध बहकत कोकिला बैन,
चहकत चिरैयाँ, सब आनँद बढ़ायौ है॥
ठनकत किंकिनि-रव, झनकत नूपुर-धुनि,
धधकत मृदंग ताल-रंग सो बजायौ है।
हरषत 'सुरेश' मन झमकत महेस जू कौ,
गमकत नगारे सो बसंत रितु आयौ है॥३१॥

बसंत स्वागत

जय बसंत रसवंत सकल सुख-सदन सुहावन।
मुनि-मन-मोहन भुवन तीन जिय-प्रेम गुहावन॥
जय मदन-स्वच्छंद-भाव-मय हिय प्रति परसन।
जय नंदन-बन-सुरभित-सुखद-समीरन सरसन॥
जय मधुमाते मधुप भीर को चहुँ दिसि छोरन।
ललित लतान बितानन मे दुति दलहि बिथोरन॥
जय अनूप आनंद अमित अति अटल प्रदरसन।
जय रस-रंग-तरंग बेलि अलबेलिन बरसन॥
करिबे स्वागत आप हरन-त्रयताप सकल थल।
जड-जंगम जग-जीव जनौ जाग्यौ जोबन-जल॥
जो तरु बिथित-वियोग सदाँ दरसन तव चाहत।
नौचि नौचि कच-पातन अश्रु प्रवाह प्रवाहत।
देखहु किसलय नहीं, आँखि अति अरुन भई-तिन।
रोवत रोवत हाय! थके, अब टेर सुनो किन॥
तुम्हरी दिसिहि निहारि पुलिक तन, पात हिलावत।
कऽयो मानहुँ मिलन तुमहि निज ओर बुलावत॥
बौरे नहीं रसाल, बने बौरे तव कारन।
बलिहारी तव नेह-नियम निठुराई धारन॥
तुम सौ कठिन कठोर और, जग दूसर दीख न।
साँचौ किय निज नाम 'पचसर कौ सर तीखन'॥
तौ हू मृदुल स्वभाव धारि जो प्रेमिन भावत।
करनौ बाकी ओर जाहि सो प्रेम लगावत॥
लखि तुम्हरे पद-कंज रंज सब भूलि-भूलि तन।
साजि-साजि सँग ललित लहलही लोनी लतिकन॥
भाँति-भाँति के बिटप-पटनि सजि वे ही आवत।
कोऊ फल, कोऊ फूल मुदित मन भेटहि लावत॥
'जयति' परसपर कहत पसारत आपनि डारन।
मनहु मत्त मन मिलन मित्र कर कर गर डारन॥
आवहु आवहु वेगि अहो! रितुगन के नरपति।
तरु वृंदनि को लखहु आप सोभा की संपति॥
वह देखो नव कली भली निज मुखहि निकारति।
लगि-लगि बात-प्रभात गात अलसात सँभारति॥

प्रथम समागम-समर जीति मुख मुदित दिखावति ।
लहकि-लहकि जनु स्वाद लैन कौ भाव बतावति ।।
मुखहि मोरि जमुहाति भरी तन अतन-उमगन ।
जोम-जुवानी जगे चहत रस-रंग-तरगन ।।
वह देखो अलि पुंज कली-कल-कुंज गुँजारत ।
मानहु मोहन मनहि मदन कौ मंत्र उचारत ।।
ठौर-ठौर मधु अंध भयौ वह देखो भूमत ।
कबहूँ जा पर वा पर यो सब ही पर घूमत ।।
मुकलित अंब कदंब-कदंबनि पै कल कूजत ।
'केहू केहू' मोर अलापत आसा पूजत ।।
अवरेखहु निज स्वच्छ छटा जमुना जल कूलन ।
सटकि कंज बन सघन घटा नव फूले फूलन ।।
द्रुम-डारिन के बीच चपल-चहचही चुहूकनि ।
कोयल-कीर-कपोत कलित कल कंठ कुहूकनि ।।
देखहु यमुना पुलिन सुभग सोभित रेती-छवि ।
चिलकति झलकति मनहुँ कांति प्रगटी खेती फवि ।।
तनकि हिलोरे खात कलिंदी रस सरसावति ।
नीलांबर तनु धारि कृष्ण मिलिवे जनु धावति ।।
भरे सरोवर स्वच्छ नील जल नलिन रहे खिलि ।
सारस हंस चकोर घोर सब सोर करै मिलि ।।
जुही गंधि सो पुही चुही परिमल सुचि धावति ।
पुहुप धूल धूसरित हीय सब सूल नसावति ।।
हरी घास सों घिरे तुंग टीले नभ चंबत ।
तिन मे सीधी सरल सरग दिसि डगर उलवत ।।
जब सो बहरै लहरै छहरै तेरी समुदित ।
बिन कारन नहि ज्ञात आप आपहि सो प्रमुदित ।।
कोऊ सरसो सुमन फूल, जौ सिर सो बाँधत ।
गरियारन-गोरिन के सँग कोउ चुलह मचावत ।।
कहु गँवार गंभीर बसती बसन रँगावत ।
जो तव स्वच्छ स्वरूप सदा सबके मन भावत ।।
ऊधम उमड्यौ परत रँग्यौ जग तव रस रागत ।
गारी-पिचकारी-तारिन सो तेरौ स्वागत ।।३२।।

बसंत का प्रभाव

औरे भाँति कोकिल-चकोर ठौर-ठौर बोलें
औरे भाँति सबद पपीहन के वै गए।
औरे भाँति पल्लव लिए हैं वृंद-वृंद तरु,
औरे छवि-पुंज कुंज-कुंजन उनै गए॥
औरे भाँति सीतल-सुगंध-मंद डोलैं पौन,
'द्विजदेव' देखत न ऐसे पल द्वै गए।
औरे रति, औरे रंग, औरे साज, औरे संग,
औरें बन, औरें छन, औरे मन ह्वै गए॥३३॥

★

औरें भाँति कुंजन में गुंजरत भौरे-भीर,
औरे ठौर भौरन के बौरन के ह्वै गए।
कहैं 'पद्माकर' सु औरे भाँति गलियान,
छलिया छबीले छैल औरे छवि छ्वै गए॥
औरे भाँति बिहँग-समाज में अवाज होति,
ऐसे रितुराज के न आवत दिन द्वै गए।
औरे रस, औरे रीति, औरे राग, औरे रंग,
औरे तन, औरे मन, औरें बन ह्वै गए॥३४॥

★

सरसों के खेत की बिछायत बसंत बनी,
तामें खडी चाँदनी बसंती रतिकंत की।
सौने के पलंग पर बसन बसंत साज,
सौनजुही मालें हालें हिय हुलसंत की॥
'ग्वालकवि' प्यारौ पुखराजन कौ प्यालौ पूर,
प्यावत प्रिया को, करै बात बिलसंत की।
राग में बसंत, बाग-बाग बसंत फूल्यौ,
लाग में बसंत, क्या बहार है बसंत की॥३५॥

बसंत की व्यापकता

कूलन में, केलिन में, कछारन में, कुंजन में,
क्यारिन में कलिन-कलीन किलकंत है।
कहै 'पद्माकर' पराग हू में, पौन हू में
पानन में, पिकन पलासन पगंत है॥
द्वार में, दिसान में, दुनी में, देस-देसन में,
देखो दीप-दीपन में दीपत दिगंत है।
बीथिन में ब्रज में, नबेलिन में, बेलिन में,
बनन में, बागन में, बगर्यौ बसंत है॥३६॥

★

नव पतझारन में, किसलय डारन में,
रमित पहारन में दुनी में दिगंत है।
त्रिविध समीरन में, यमुना के तीरन में,
उडत अबीरन में भला झलकंत है॥
छाय रह्यौ गुंजन में, अलि पुंज कुंजन में,
गान में 'गोपाल' ऐसौ रूप दरसंत है।
फूल में, दुकूल में, तडागन में, बागन में,
डगर में, बगर में, बगर्यौ बसंत है॥३७॥

★

फेरि बन बौरे, मन बौरे से करन लागे,
फेरि मंद सुरभि समीर ह्वै किलंत गौ।
फेरि बीर-नासन पलासन में लागी आगि,
बहुरि बिरहीन-जूह दरपि दुकंत गौ॥
'द्विजदेव' देखि इन भायन धरा लें फेरि,
जानिऐ कहाँ धौं भाजि , हमंत अंत गौ।
फेरि उर अंतर ते डगरि गयौई ग्यान,
फेरि बन-बागन में बगरि बसंत गौ॥३८॥

अवनि तें, अंबर ते, दुगम दिगंबर ते,
अपर अडबर तें सखि ! सरसौ पर ।
कोकिला की कूकन तें, हियन की हूकन ते,
अतन भभूकन ते तन तरसौ परै ॥
कहत 'किसोर' कज-पुंजन ते, कुंजन तें,
मंजु अलि-गुंजन तें, देख दरसौ परै ।
बसन ते, बासन तें, सुमन-सुवासन तें,
बैहर तें, बन ते, बसंत बरसौ परै ॥३९॥

★

तालन पै, ताल पै, तमालन पै, आलन पै,
लाल-माल-बाल पै, रसाल सरसौ परै ।
कहै कवि रामचद' कुद-कद-बंदन पै,
चद पै मलिद मतिमद दरसौ प ॥
केकी केलि केसरि कुरंग केतकी पै कंज,
कारकूत कोकिल कदंब परसौ परै ।
रग-रंग रागन पै, संग ही परागन पै,
वृंदाबन-बागन बसंत बरसौ परै ॥४०॥

★

कोकिला कलापी कूंजे यमुना के नीर तीर,
बीर रितुराज कौ समाज दरसौ परै ।
भनत 'किसोर' जोर अवनि कदबन तें,
मजु मंजरीन तें सुगध सरसौ परै,
काम व्यथा मेटन को, सुखद समेटन को,
भेटन को प्रीतम कौ प्रान तरसौ परै ।
अवनि तें, अबर तें, दुगम दिगंबर तें,
बैहर तें, बन तें, बसंत बरसौ परै ॥४१॥

सुमन समुद्र हू तें, सीसमौर फंद हू तें,
चारु मुख चंद तें, अनंद दरसौ परै ।
पीत पट बसन हू तें, कुंद से दसन हू तें,
मंद बिहँसन हू तें, रस सरसौ परै ।।
मंद रव-तान हू तें, बंसी सुर गान हू तें,
मैन पैन बान तें, पराग परसौ परै ।
भूषन बिसाल हू तें, लाल गुंज माल हू तें,
मौर बनमाल तें बसंत बरसौ परै ।।४२।।

★

देस में, दिसान में, लतान-द्रुम-बेलिन में,
कुंजन में गुंजन में रंग दरसानौ है ।
पल्लव में, पौन में, पराग हू में, किसलय में,
कुसुम-कलीन अलि-गुंज हरसानौ है ।।
खेतन में, क्यारन में, फूल कचनारन में,
झारन-पहारन में मोद सरसानौ है ।
बाग में, बगर में, बनाव बन-बीथिन में,
बेहर में, बन में बसंत बरसानौ है ।।४३।।

★

सुर ही के भार सूधे सबद सु कीरन के,
मंदिरन त्यागि करै, अनत कहूँ न गौन ।
'द्विजदेव' त्यों ही मधु-भारन अपारन सों,
नेक झुकि भूमि रहे मौगरे-मरुअ-दौन ।।
खोलि इन नैननि निहारौ तौ निहारौ कहा,
सुखमा अभूत छाइ रही प्रति भौन-भौन ।
चाँदनी के भारन दिखात उनयौ सौ चंद,
गंध ही के भारन बहत मंद-मंद पौन ।।४४।।

एकाएक आई कहूँ बैहर बसंत वारी,
सतवारी मंडली मसूसि त्रसिवै लगी ।
कहै 'रतनाकर' दृगनि ब्रज-वासिन कै,
रंगनि की बिसद बहार बसिवै लगी ॥
मसकन लागे बर बागे अंग-अंगनि पै,
उरज उतंगनि पै चोली चसिवै लगी ।
पुनि ढप-तालनि की आनि बसी प्राननि मे,
ध्याननि मे धमकि धमार धसिवै लगी ॥४५॥

*

बसुधाधर मे, बसुधा धर मे, औ सुधाधर मेल्यौ सुधा मे लसै ।
अलि-वृंदन मे, अलि-वृंदन मे, अलि-वृंदन मे अतिसै सरसै ॥
हिए-हारन मे, हर-हारन मे, हिमि-हारन मे 'रघुराज' लसै ।
ब्रजवारन, बारन, बारन, बारन, बारंबार बसंत बसै ॥४६॥

*

फूल रहे बन-बाग दसौ दिसि,
कोकिल-गुंज सो कुंज घनो रहै ।
बोलै मधुव्रत कुंजन मे, अरु-
डोलत पौन सुगंध सनौ रहै ॥
'कवि चंद जू' चैत की चाँदनी मे
चित दंपति कौ रति-रंग ठनौ रहै ।
राधाकृष्ण जू रावरे राज्य मे,
बारहू मास बसंत बनो रहै ॥४७॥

*

गूँजेंगे भौंर पराग भरे बन,
बोलेगे चातक औ पिक गाइ कै ।
फूलेगे टेसू कुसुभ जहाँ लगि,
दौरैगौ काम कमान चढाइ कै ॥
पौन बहैगी सुगंध 'मुबारिक',
लागैगी ही मै सलाक-सी आइ कै ।
मेरौ मनायौ न मानैगी भामती,
ऐ है बसंत, लै जैहै मनाइ कै ॥४८॥

बसंत-संयोग

आयौ बसंत, अनंदित बन, मकरंदित ह्वै कै पसारा करै ।
अरु बौरौ रसाल प कोयल बैठिकै, धरि धरै न, पुकारा करै ॥
पति-हीन तिया जे हुतीं घर मे, तिनको बिरहानल जारा करै ।
पिय प्यारे हमारे मिले सजनी ! वो पपीहा मरयौ झकमारा करै ॥४६॥

*

गावनौ धमार कौ सु लागत सुखद महा,
　　　　　　धावनौ सु मारुत कौ आनँद अनंत कौ ।
चावनौ बढावनौ भौ आलिन कौ गन गुनि,
　　　　　　हिय हुलसावनौ भौ कोकिल भनत कौ ।
'मनिदेव' भनत कलेस कौ पयावनौ भौ,
　　　　　　अग उमँगावनौ भौ, देखे पद कंत कौ ।
छावनौ गुलाल कौ सुहावनौ लगत आली !
　　　　　　भावनौ लगत मोहि आवनौ बसंत कौ ॥५०॥

*

लिऐ कर कचन-थार सबै, सजे तिन मे नव मंगल साज ।
उडावहि बीर अबीर गुलाल, बिसाल रहे बहु बाजत बाज ॥
जमाए 'किसोर' मनोहर राग, भरी अनुराग सँभार समाज ।
अली अलबेली नवेली चली, ब्रजराजै बसंत बँधावन काज ॥५१॥

*

थोरी सी बैस किसोरी सबै, भरि झोरी अबीर उडावती है ।
कर ताल दै ढोलक की धधकी, धुनि बाँध धमार बजावती है ॥
'सरदार' लिऐं मिथिलेस-कुमारि, उदार ह्वै भाग सरावती है ।
मुसिक्याय कै नैन नचाय सबै, रघुनाथै बसंत बँधावती है ॥५२॥

*

वृक्षन पै बल्ली चढि चोप, अली-अलिनी मधु पी मुदकारी ।
कोकिल-सारिका-कीर-कपोत, करै धुनि माधुरी कानन-चारी ॥
फूले सबै बान-बाग-तडाग, भरे अनुराग पिया अरु प्यारी ।
चैत मे चारु बिहार करें, दसरत्थ-कुमार बिदेह-कुमारी ॥५३॥

बसंत-वियोग

आयौ बसंत, तमालन तैं नव पल्लव की इमि जोति जगी है ।
फलि पलास रहे जित-ही-तित,पाटल रातेहि रंग रँगी है ।।
मौरि कै आमन सार भई,तिहि ऊपर कोकिल आनि खगी है ।
भागन-भाग बचो बिरही जन बागन-बागन आग लगी है ।।५४।।

★

फेरि वैसें कुंजन मे गुंजरन लागे भौर,
फेरि वैसे कैलिया कुबोलन ररैं लगी ।
फेरि वैसे पातन मे पूरि गौ पराग पीत,
फेरि त्यों पलासन मे आगि सी बरैं लगी ।।
फेरि वैसे पपिहा पुकारैं लगैं 'नंदराम',
फेरि वैसे धाम-धाम सौरभ भरैं लगी ।
फेरि वैसे ऊधमी बसंत बिस्वासी आयौ,
फेरि वैसे डारन मे डाक-सी परैं लगी ।।५५।।

★

आई है बहार बन बेलिन नबेलिन मे,
बहुधा चमेलिन मे भौर भीर छाई है ।
छाई है छपाकर-मरीचिका दुरीचिन मे,
तिन हू लखत कै अतन ताप ताई है ।।
ताई है सकल सूझि-बूझि 'जसवंत' मेरी,
जब ते पियारे प्रानप्यारी बिसराई है ।
राई है न नैक कहूँ नव मे कलेरव मे,
कहियो हो कंत ! सो बसंत रितु आई है ।।५६।।

★

मदमाती रसाल की डारन पै,चढी आनद सों यो बिराजती है ।
कुल जानि की कानि करै न कछू,मन हाथ परायेहि पारती है ।।
कोऊ कैसी करै 'द्विज' तूही कहै,नहि नैकौ दया उर धारती है ।
अरी ! कैलिया कूकि करेजन की,किरचैं-किरचैं किए डारती है ।।५७।।

★

जा दिन तें परदेस गए पिय, ता दिन ते तनु ताप सी दौरत ।
आवते बेगि इतै 'नंदरामजू', देखते बाग बसंत समौरत ।।
चंद उदोत न होत उतै, अरविंद मलिंद के वृंद न भौरत ।
याही अंदेस महा मन मे सखि ! का वा देस नहीं बन बौरत ।।५८।।

फूलन दै अबै टेसू कदंबन, अंबन बौरन छावन दै री ।
री मधुमत्त मधुव्रत पुजन, कुजन सोर मचावन दै री ॥
क्यों सहि है सुकुमारि 'किसोर', अली कल कोकिल गावन दै री ।
आवत ही बनि है घर कंतहि, बीर बसंतहि आवन दै री ॥५६॥

*

सग सखी के गई अलबेली, महा सुख सों बन-बाग विहारन ।
बाढ्यौ वियोग, बिलास गयौ सब, देखत ही वे पलास की डारन ॥
जानि बसंत औ कत विदेस, सखी लगी बावरी सी ह्वै पुकारन ।
न्वै चलि है चुरियाँ चलि आउरी, आँगुरियाँ जन लाउ अँगारन ॥६०॥

*

बौरेंगे रसाल बन-बागन विसाल सुनि,
कोयल कुँहूकि दिन-रैनि क्यों अतीतै गौ ।
ह्वैहै जो प्रफुल्ल मल्ली मालती की बल्ली,
अवली अलीन काकलीन कल गीतै गौ ॥
'पडित प्रवीन' बिन प्रीतम बहैगौ पौन,
कान रति-रग मे अनग जंग जीतै गौ ।
बीत गयौ कैसे हू सिसिर-हेमत आली,
कत बिन कैसे ये बसंत रितु बीतै गौ ॥६१॥

*

बीर अबीर अभीरन कौ दुख, भाखे बनै न बनै बिन भाखै ।
त्यों 'पद्माकर' मोहन मीत के, पाये सँदेस न आठये पाखै ॥
आये न आप, न पाती लिखी, मन की मन हीमे रही अभिलाखै ।
मीत के अंत बसत लग्यौ, अब कौन के आगै बसत लै राखै ॥६२॥

*

मंद गति मारुत, मदंध भृंग गुंजरत,
फलि कुसुमावलि, रही है खुलि खिलि कै ।
कहत 'किसोर' रितुराज जानि आगमन,
लागन की कोकिला रसालन पै किलकै ॥
ऐसे में कहो जू कैसे आनद न लेती मान,
मानत जमान यों पिया के हिए हिल कै ।
कटकित भई बेलि बल्लभ कलिन मिस,
नव दल मालन तमालन सो मिलि कै ॥६३॥

खाती हरषाती, रस जाती मद माती हिऐ,
काती सी लगाती टेर विरही बिघाती की ।
जाती लै किराती, मति आती ना दयाती,
नॉच पाती, ताल गाती, ना पिराती उतपाती की ॥
पाती कैहूँ भाँनी तौ बिसाती जो पोसाती औ,
घराती सियराती जो व्यथाती ताती छाती की ।
न्हाती छत जाती मैं नौचाती रोम-पाती
काढि बाती लै जलाती जीभ कैलिया कुजाती की ॥६४॥

★

कैसी अलिरानै अलि-अवलि अवाजै आजु,
सुमन-समाजै रोज छिन-छिन छूकै ये ।
कहत 'गुलाल' और सालत ये सुख-जाल,
बोलन बिसाल तें न भोगत मरूकै ये ॥
धीर कौ धराती, छाती कौन अबला की,
अब कोक के कला की, कोकिला की सुनि कूकै ये ।
जल-थल-गजन, सरस रस-भंजन, सु-
मान की प्रभजन, प्रभजन की भूकै ये ॥६५॥

★

फूलि पलास रहे झुकि भूमि कै, भूमि पै फूलन की छवि छाई ।
त्यो गुल्लाल गुलाब खिले, कचनार-अनार दुबार सी लाई ॥
डोलत पौन सो 'गंग' सुगधित, धीर धरै न करै मन भाई ।
कंत बिना सखि आयौ बसंत, सो कीजै कहा कछु सोइ बताई ॥६६॥

★

धूँधर सी बन, धूमसी धामन, गावन तान लगे नर बोरी ।
बौरी लता, बनिता भई बौरी, सु औधि अध्याय रही अब थोरी ॥
'बेनी' बसत के आवत ही, बिन कंत अनत सहै दुख को री ।
ओरी घरै ! हरि आए न जो, पहिलै हौ जरौ, जरिहै फिर होरी॥६७॥

★

जब ते रितुराज-समाज रच्यौ, तब ते अवली अलि की चहकी ।
सरसाय कै मोर रसाल की डारिन, कोकिल कूकै फिरे बहकी ॥
रसिया बन फूले पलास-करील, गुलाब की बास महा महकी ।
बिरही जन के दिल दागवे को, यह आग दसो दिसि ते दहकी ॥६८॥

मधुकर-माल बन-बेलिन के जाल पर,
कोकिल रसाल पर कुहुँक अमंद की ।
मंद पौन सीतल सुबास भई बागन,
बिलास भई 'कालिदास' रासि मकरंद की ॥
देखिये मयान, बैसाख में पयान करै,
कान्ह को दया न होति गोपिन के वृंद की ।
कैसे देखि जीहैं चढ़ि चाँदनी महल पर,
सुधा की चहल, बसुधा की, चारु चंद की ॥६६॥

★

गे जब ते उत नंद-लला, तब ते निज हाल न पूछत कोई ।
तान-तरंग तजे तुरतै, 'बलदेव' मिले पर आनँद होई ॥
पाइ बसंत नसत रहै, मन का बिधि से निज भाव बिगोई ।
माल बिसाल दई हित लाल, भई बिरहाल यही लै सोई ॥७०॥

★

भूरि से कौन लिए बन-बागन, कौने जु आमन की हरयाई ।
कोयल काहै कराहति है, बन कौने चहूँ दिसि धूरि उड़ाई ॥
कैसी 'नरेस' बयारि बहै यह, कौन धौं कौन सौ माहुर नाई ।
हाय ! कोऊ न तलास करै, ये पलासन कौने दवारि लगाई ॥७१॥

★

कोकिलन खोजिन कौ संग लै अनेक फिरैं,
चारो ओर प्यारी, बिरही जन के खोज कौं ।
याते हौं कहति चलु प्यारे सुखदान पास,
तजि कै अयान दूर कै री मान सोज कौ ॥
'मनिदेव' भनत, रसालन के बौरन के भौरन-
ये सोहत धरे है महा ओज कौं ।
कयदा बिथा री, रितुनायक लिए है पर,
घायक परम दीखै सायक मनोज कौ ॥७२॥

★

छवि रसाल सौरभ सने, मधुर माधवी गंध ।
ठौर-ठौर झूमत झपत, भौंर-भौंर मधु-अंध ॥७३॥

मलय-जगी री, तरु-कोष तें कढी है चढी,
मंजु मकरंद-पुंज पानिप अपार सी।
अलि-विष-बूढी बलि करनि कहा है, जापै,
सौरभ की लहरि धरी है खरी धार सी ॥
कहत 'किसोर' चारो ओरन विषम वेष,
प्रबल प्रचंड पेखि झरमन झार सी।
रहति न रोकी, परै चाहति वियोगिन पै,
बैहर बसंत की तिरीछी तरवार सी ॥ 74 ॥

*

चीर सुरंगी सजै तन मे, कर केसरि लै 'रघुवीर' पै मेलती।
कुल्लह चारु बनौ अति सुंदर, देखि कै सोभा नही पल फेरती ॥
घूंघट-ओट गुलाल की चोट, बचाय कै लालन पै रँग झेलती।
धनि वे बनिता, मनिता जग मे, सजि कंत के संग बसंत जो खेलती ॥ 75 ॥

*

फूले अनारनि पौडर-डारनि, देखत 'देव' महाउर मॉचै।
माधुरी मौरन, आम के बौरन, भौरन के गन मंत्र से बॉचै ॥
लागि रही बिरही जन के, कचनारन बीच अचानक ऑचै।
मॉचै हुँकार पुकारि पिकी कहै, नॉचै बनैगी बसंत की पॉच ॥ 76 ॥

*

फूले पलास भली बिधि सो बहु, 'केसवदास' प्रकाशन थोरै।
सेष असेष मुखानल की, जनु ज्वाल बिसाल चली दिसि ओरै ॥
किंसुक श्रीसुक तुंडन की रुचि, रासे रसातल मे चित चोरै ॥
चंचुन चाप चहूँ दिसि डोलत, चारु चकोर अँगारन भोरै ॥ 77 ॥

*

आयौ री ! बसंत कूकि कैलिया पुकारै लगी,
हम सी गरीबनी कौ गात गारि डारैगी।
मंद-मंद मारुत सुगंध सरसान लागी,
ज्वाल को जगाइकै जरूर जारि डारैगी ॥
'नंदराम' बागन मे फूलै लगी बेली बन,
करिकै अधीरिनी सुधीर टारि डारैगी।
ए री ! तसवीर तौ दिखाय मोहि मोहन की,
आखिर कदंबन की डारै मारि डारैगी ॥ 78 ॥

लोकन सँवारौ, तौ सँवारौ ना बिगारौ कछु,
लोकन सँवारि नर-नारिन सँवारतौ ।
कीन्हौ नर-नारि, तौ न प्रेम कौ प्रचार देतौ,
प्रेम कौ प्रचारौ तौ न मैन कौ प्रचारतौ ॥
मैन कौ प्रचारौ, तौ प्रचारौ ना सयोग दैतौ,
कीन्हौ जो संयोग, तौ बियोग ना बिचारतौ ।
'नंदराम' कीन्हौ जो बियोग बिधना तौ भूलि,
बौरे बन-बागन बसंत ना बगारतौ ॥७९॥

★

पीरी तन-सारी सीस पर तें उतारि डारी,
जब तें बसंत रितु आगम जनाई है ।
पीरे-पीरे भूषन करन लागे पीर तन
बिना प्रानप्यारे पियराई उर छाई है ॥
रितु पियराई, सब हू के मन भाई सखि !
हमैं पियराई दुखदाई हौन आई है ।
जोई पियराई तन हूक होत मेरी आली !
सोई सौति मालिन ये पियरे फूल लाई है ॥८०॥

★

कोकिल के गन कूकै लगे, तिमि मालती की कालिका बिकसंती ।
फूलि उठी लतिका 'बलदेव जू', लाँपै लगी चलि लाज लसंती ॥
कैसे रहैगौ सो धीरज कौ दल, मैन अली घनी घेरी गमंती ।
बेधै लगे हिय तें बिरहीन के, बौरे बनै बन-बाग बसंती ॥८१॥

★

जालिम जुलुमदार, जाहिर जहान जौन,
डगर-डगर विष बगरि बगरिगौ ।
कहै 'नंदराम' ब्रज-गाँव की गरीबनिन,
रावरे की चेरिन, पै बैरिन कौ मरिगौ ॥
ऊधौजी ! हवाल कहि दीजो नंदलाल जू सो,
गोकुल की गैल-गैल गजब गुजरिगौ ।
फूलै ना पलास, ये पलास के बसंत मिस,
काढि कै करेजा डार-डारन पै धरिगौ ॥८२॥

भूले–भूले भौर-भौर भॉवरै भरेगे चहूँ,
फूलि–फूलि किसुक जके से रहि जाय है ।
'द्विजदेव' की सौ वह कूजनि बिसारि, कूर–
कोकिल कलकी ठौर–ठौर पछिताय है ।।
आवत बसत के, न ऐहै जो पै स्याम तौ पै,
बावरी बलाय सो, हमारे हू उपाय है ।
पीहै पहिलै ही तें, हलाहल मॅगाय, या–
कलानिधि का एकौ कला चलन न पाइ है ।।८३।।

★

प्यारे के वियोग आली ! उठी आग वृ दाबन,
जरती सदेह कुंजे, सुदरी उहॉ–उहॉ ।
बौरे कचनार, ऑच उठति पलासन ते,
कुसुम करील डीठ, परति जहॉ–जहॉ ।।
'मसाराम' तिन्है भेटि आवत समीर बीर,
तपौ जात तन, ताती लागति तहॉ–तहॉ ।
मृग अध मारे, बिललात है भॅवर कारे,
कोयल हू कोइ लै पुकारती कहॉ–कहॉ ।।८४।।

★

सखि ! आयौ बसंत, रितून कौ कंत, चहूॅ दिसि फूलि रही सरसो ।
बर सीतल–मंद-सुगंध समीर, सतावनहार भयौ गर सो ।।
अब सुदर सॉवरो नंदकिसोर, कहै 'हरिचद' गयौ घर सो ।
परसो को बिताय दियौ बरसो, तरसो कब पॉय पिया परसो ।।८५।।

★

चर्चित चॉदनी चखन चैन चुऔ परै,
चौधा सौ लग्यौ है चारो ओर चित्त चेत ना ।
गुजत मधुप–वृ द कुजन मे ठौर–ठौर,
सोर सुनि–सुनि रह्यौ परत निकेत ना ।।
'राम' सुनै कूकन करेजौ कसकत आली !
कोकिल को कोऊ मुख मूँदि अब लेत ना ।
अंत करै डारत बसतहि बनाय हाय !
कतहि बिदेस तें बोलाय कोऊ देत ना ।।८६ ।

आब छिरकाय दै गुलाब-कुंद-केवडा की,
सेवती समीत बेला मालती पियारी मे ।
जूही-सोनजूही जाय रायक कदंब अब,
चंपा औ चमेली गुल चाँदनी नेवारी मे ॥
शिवनाथ' बात को बिलोकिबौ न भावै मोहि,
पीव बिन आयौ है बसंत फुलवारी मे ।
भाग चल भीतर, अनार-कचनारौं लग,
आग उठी प्यारी गुल्लाला की कियारी मे ॥८७॥

★

मलयै-समीर-पीर कर लै अधीर मोहि,
नैसुक सुसीर नीर धीरज उधारि लै ।
कहै 'हरिकेस' चंद जारि लै घरीक तू हू,
साँचौ विष कद चारु चाँदनी पसारि लै ॥
अब ही मिलत मोको नद के दुलारे प्यारे,
तौलौ तू उतालकारी कोकिल कहारि लै ।
गारि लै गरब, गरबीले तू अनंग किन,
मेरे इन अगन अनग बान झारि लै ॥८८॥

★

काम कलाधर के मिस से ये, खास प्रकास बिगारि दियौ है ।
देखहु कै हित सो बल सो, 'बलदेव' हिए बिच बास लियौ है ॥
साजि सुगंध प्रफुल्लित भौ बन, भौरन-भीर अधीर कियौ है ।
नंदकुमार कहाँ मिलि है, कब ते अधरामृत नाहि पियौ है ॥८९॥

★

फूल लाई, फल लाई, नीके-नीके दल लाई,
बौरि लाई, बनि आई धनि, गुन गावै ना ।
'हरिलाल' दोऊ कर जोरि कहौं तोसो बीर,
पीर और हू की जान हियौ हरसावै ना ॥
नेह सरसावै, तू न रंग बरसावै,
मोसो पंचसर पावक की चाँचर मचावै ना ।
चोवा चारु चदन, अतर दरसावै जनि,
कत बिन मालिन ! बसंत मोहि भावै ना ॥९०॥

घन-बन-बीथिन तें घर-घर घेरि रहे,
लाल-पीरे लागत न जानि परै कारे से ।
गावत समाज, करै आवत नवाज राज,
करी ये निलज्ज छाके छाक मतवारे से ॥
'गोकुल' बसंत म वियोगिन के जारिवे को,
होरी सी हिए मे हरषित निरवारे से ।
भीजे मकरंद सो पराग लपटाने देखो,
मधुकर डोलत फिरत फगुहारे से ॥६१॥

★

बोलै लगी सारिका, औ कोकिला कलोलै लगी,
डोलि-डोलि सुखद समीर लाग्यौ परसै ।
फूले द्रुम पुजन पै गुंजन मधुप लागे,
मंजु फूल वृंद लागे मकरंद बरसै ॥
'सेखर' धमारन की धूम सी मचन लागी,
मैन लाग्यौ नचन, नवेली नेह सरसै ।
कंत बिन कैसे अत धीरज धरौगी आली !
मान-गढ अतक बसत लाग्यौ दरसै ॥६२॥

★

को बचि है यह बैरी बसंत तें, आवत यो बन आग लगावत ।
बौरति ही करि डार है बौरी, भरे बिष बैरी रसाल कहावत ॥
ह्वैहै करेजन की किरचै 'कवि देव जू' कोकिल-कूक सुनावत ।
बीर की सौं बलबीर बिना, उडि जाँयगे प्रान अबीर उडावत ॥६३॥

★

वेई दल-फूल, जिन्है बाढत विलोक फूल,
सूल से भए है समूल छबि-सारी सौ ।
'सेवक' बखानै तेई ठौर-ठौर झौरत है,
भौरन के तौर और ह्वै गये सहागी सौ ॥
सीतल समीर सोई पीर को करत हाय !
धाय-धाय परत पराग राग धारी सौ ।
जाय न कहत कोई, कीजै कौन तत राम,
कंत बिन ह्वै गयौ बसंत अंतकारी सौ ॥६४॥

पथिक तुरत जाइ कतहि जताइ दीजो,
　　आइगौ बसत उर अमित उछाह लै ।
कहै 'रतनाकर' न चटक गुलाबन की,
　　कोप कै चढत तोप मैन बादसाह लै ॥
कोकिल के कूकनि की तुरही रही है बाजि,
　　बिरहिनि भाजि कहौ कौन की पनाह लै ।
सीतल समीर पै सवार सरदार गध,
　　मद-मद आवत मलिद की सिपाह लै ॥६५॥

*

कोकिल की कूक सुनि हूक हिय माहि उठै,
　　लूक से पलास लखि अंग झरसान्यौ है ।
करिहौ कहा धौ धीर धरिहौ कहाँ लौ बीर,
　　पीरद समीर त्यौ सरीर सरसान्यौ है ॥
पल-पल दूजे पल आवन की आस जियौ,
　　ताहू पर पत्र आइ बिस बरसान्यौ है ।
अवधि बदी है कल आवन की कंत अरु,
　　आज आइ ब्रज मे बसंत दरसान्यौ है ॥६६॥

*

गु जत भृंग निकुंज के पु ज, सरोजन सौरभ की सरसाई ।
प्रानपती के पयान सो 'गग', सहौ केहि भाँति वियोग दुसाई ॥
बोलत कोकिल बाद हसंत, बसत के बासर सो न बसाई ।
चैत की चाँदनी के चितए, कहु कैसे कै छोडैगौ काम कसाई ॥६७॥

*

बारिधि बसत बढ्यौ चाव चढ्यौ आवत है,
　　बिबस वियोगिनि करेजौ थामि थहरै ।
कहै 'रतनाकर' त्यौ किसुक-प्रसून-जल,
　　ज्वाल बडवानल की हेरि हिऐ हहरै ॥
तुम समुझावति कहा हो समुझौ तौ यह,
　　धीरज-धरा पै अब कैसै पग ठहरै ।
भौर चहुँ ओर भ्रमै, एकौ पल नाहि थम्है,
　　मीतस सुगध मद मारुत की लहरै ॥६८॥

बन-बन आग-सी लगाइकै पलास फूले,
सरसो गुलाब गुल्लाला कचनारौ हाय!
आय गयौ सिर पै चढ़ाय मैन बान निज,
बिरहिन दौरि-दौरि प्रानन सम्हारौ हाय!!
'हरिचद' कोयल कुहूँकी फेरि बन-बन,
बाजै लाग्यौ युग फेरि काम कौ नगारौ हाय!
दूर प्रान प्यारौ, काकौ लीजिए सहारौ,
अब आयौ फेरि सिर पै बसत बजमारौ हाय!!९९॥

*

बिन मधुसूदन के मधु की अवाई भई,
कुटिल कला है मधुकैटभ कुचाल की।
कहै 'रतनाकर' जुन्हाई चद्रहास भई,
त्रिविध बयारि फुफुकारि फनि-जाल की
आनन कौ रंग उडै उडत अबीर सग,
रग-धार होति अग झार ज्वाल-माल की।
किरच मुकेस की करद ह्वै करेजै लगै,
दरद-दरेरे देति गरद गुलाल की॥१००॥

*

कल गुजत कुजत पुज मालिद, पिऐ मकरंद अनद भरे।
द्रुम बौरत कैलिया कूकै करै, बहै सौरभ सीरी समीर हरे॥
बहितंत बसंत कौ भावै नहीं, 'गुरुदीन' जऊ लसै कत गरे।
निसि-बासर नींद औ भूख हरी, मुख पीरी परी,दल पीरे परे॥१०१॥

*

कुज-कुंज गुजरत देख अलि-पुंज कूकै,
कूर कैलिया कहा लौ धीर धरिवौ।
त्रिविध समीर आन तीर सौ लगत हिऐ,
उमँगै गभीर पीर कैसै दिन भरिवौ॥
कहै 'शिव कवि' हाय! प्रगट्यौ बसत समै,
बिन बनमाली आली मो जरूर मरिवौ।
सेमर अपारन मे, किसुक की डारन मे,
भयौ कचनारन अगारन कौ फरिवौ॥१०२॥

बीथिन सघन अति बीचन में बोलें पिक,
तैसौ रह्यौ घेरि बिरहानल इतै-उतै ।
दूजै भई केसरि समान मुव पीत-मई,
पहिरें बसंती चीर सखियाँ जितै-तितै ॥
मीरी सुखदायक समीर लै प्रसून बास,
आवत हमारे हिय बेधत नितै-नितै ।
'बच्चूराम' बावरी भई हौं मैं बिहारी बिन,
देह पीरी-पीरी भई, पीय को चितै-चितै ॥१०३॥

*

बिटप-लता कढी हैं, चाप-दापसी बढी हैं,
'सेखर' चढी हैं अली अबली सुधरि कै ।
सुमन-सुमन जानें, वेई सर गे चिताने,
महा बिप साने, जे पराग रहे भरि कै ॥
आहट बिचारयौ, चटकाहट कलीन पारयौ,
मारयौ यह चाहत 'मुबारक' अकरि कै ।
जैहौं जरि मैन आजु, जौहर कै तेही पर,
पावक-सिखा पलास-पल्लव पकरि कै ।१०४॥

*

बौरे रसालन की चढि डारन, कूकत कैलिया मौन गहै ना ।
'ठाकुर' कुंजन पुंजन गुजत, भौरन कौ दल चुप्प चहै ना ॥
सीतल मंद सुगंधित 'बीर' समीर लगै तन धीर धरै ना ।
व्याकुल कीन्हो बसंत बनाय कै, जाय कै कंत सों कोऊ कहै ना ॥१०५॥

*

होते जो सुजान तौ न जाते परदेस कहूँ,
ह्वै रहे हैं और मिसि कीरति विहीन के ।
फूल मिसि मानो डार-पातनि पर पेखि रहे,
आनंद अतल होय सोभ उमहीन के ॥
कहै 'मनिदेव' खरे देखि कै पलासन को,
जानि कै कलासन बिलोक बलहीन के ।
बाढ़ि कै सुतेज बान बधिक बसंत बली,
मानो दीने काढिकै करेजे विरहीन के ॥१०६॥

कंत बिन बसंत लगै है हाय ! अंतक सौ
तीर जैसो त्रिबिध समीर लागै लहकन।
सान लगै साँग सी, हनन घनसार लागै,
खेद लागै खरौ मृग-मद लागै महकन ॥
फाँसी सौ फुलेल लागै, गाँसी सौ गुलाब अरु,
गाज अरगजा लागै, चोवा लागै चहकन।
अंग-अंग आग सम केसर कौ नीर लागै,
चीर लागै बान सौ, अबीर लागै दहकन ॥१०७॥

★

त्रास दैन लागे कै विलास निजु 'सिव कवि',
आस-पास मे पलास कलिका-खिलन की।
चटकीली चाँदनी करन लाग्यौ चंद-मंद,
बाँधिवे बधून मे बिदेसी गाफिलन की ॥
दई निरदई यह अंतक बसंत आयौ,
अब हम वैसै हू न मोहनै मिलन की !
फूकै पौन भूकै, बिरहागि की भभूकै हिय,
प्रान लेत चूकै नहीं कूकै कोकिलन की ॥१०८॥

★

मंजु मल्लिकान के मधुर मकरंद हेत,
वृंद ये मलिंद जित-तित ते पिलै लगे।
जोहि-जोहि चाँदनी मनाये उन मोहि-मोहि,
मानिनी-समूह प्रानपतिन मिलै लगे ॥
कहै 'सिव कवि' कंत बिन यो बसंत बीतै,
त्रिविध समीर डोलि दाहन दिलै लगे।
किंसुक के जाल लाल-लाल बन-बीथिन मे,
फूलन के मिस आली ! आग उगिलै लगे ॥१०९॥

★

आली सुनो, बनमाली-वियोग पलास के पुंजन कौ सुख भागौ।
पात सुखाय रहे बन-बाग, लतान मे स्यामता कौ रँग रागौ ॥
वीर धरै ठहरात न 'माधव', मैन कौ जालिम जोर है जागौ।
भामिनी भौन मे भागि चलो, फिर आग उठैगी, धुवाँ उठ लागौ ॥११०॥

भूकत हौ कहा वाकी दसा, 'भुवनेस जू' बात वृथा कहि जायगी ।
साँची कहौ, पतियाहु नही, नहि काँची कछू हमसो कहि जायगी ॥
आस नही बचिवे की अबै, पर प्यारी जऊ रहते रहि जायगी ।
बीस बिसे बन फूले पलासन, देखि अँगारन सो दहि जायगी ॥१११॥

*

लखै सुखदानि पखानन जानि, मयूरन देति भगाय-भगाय ।
मनै कै दियौ पियरे पहिराव को, गाँव मे प्यादे लगाय-लगाय ॥
भुलावती वाके हिए ते हरीहि, कथान मे 'दास' पगाय-पगाय ।
कहा कहिऐ ये पापी पपीहा, व्यथा तन देत जगाय-जगाय ॥११२॥

*

बैरी बसत के आवन मे, बन बीच दवानल सीघ्र जरैगी ।
योगिन सी बन है बनमाल, वियोगिन 'देव' क्यो धीर धरैगी ॥
ह्वै है करेज कछू कौ कछू, जब बागन कोकिल कूक करैगी ।
फूले पलास के डारन की डरि, बेर डरावन डीठ परैगी ॥११३॥

*

अब बसत मे बौरहिगे अरु, कामिनि चदन चीर रँगै है ।
डोलैंगे पौन सुगध 'मुबारक', कुज-लता सो लता लपटै है ॥
जोगी-जती, तपसी औ सती, इनको बिरहानल आन सतै है ।
नाहि छिना सखि ! प्रान तजौ, जो पै कंत बसत के तंत न ऐहै ॥११४॥

*

आयौ बसत अली ! बन तें, अलि के गन डोलत डक बगारन ।
काम-ध्वजा किसलय उँमगी, बन कोकिल के गन लागे पुकारन ॥
ऐसे मे कैसै बचैगी 'मुबारक', आज किए है सती सिगारन ।
दौरि पलास की डार चिता चढि, भूमि पडे निरधूम अँगारन ॥११५॥

*

बागन-बागन ह्वै कै पराग लै, ज्यो-ज्यो बहै वो बैहरि भूँकन ।
त्यो-त्यो परी परचड महा, 'परमेस' उठै बिरहागिन मूकन ॥
कत विदेस बसंत समय, हियरा हहरान लग्यौ अब हूकन ।
नेह भरौ सिगरौ तन जारि कै, कैला कियौ यह कैलिया-कूकन ॥११६॥

बसंत-रूपक

बल्ली कौ बितान, मल्लीदल- कौ बिछौना मंजु,
महल निकुंज है, प्रमोद बनराज कौ ।
भारी दरबार भरौ, भौरन की भीर बैठी,
मदन दिवान इतिमाम काम-काज कौ ॥
'पंडित प्रबीन' तजि मानिनी गुमान-गढ,
हाजिर हजूर सुनि कोकिल अबाज कौ ।
चोपदार चातक बिरुद बढि-बढि बोलै,
दौलत-दराज महाराज रितुराज कौ ॥११७॥

*

आयौ रितुराज महाराज महि-मंडल में,
तिहि की दपट आगे सिसिर-हिमंत कौ ।
दुंदुभी धुँकार, ढफ-तालन की झनकार,
मेरे जान घटा है मदन श्रीमंत कौ ॥
'कवि हरिजन' कहै, प्यारी परवीन सुनो,
मोको तौ बचाव है मिलन एक कंत कौ ।
पूरन प्रताप, दिन प्रभुता बढत आवै,
कोकिला पढत आवै बिरद बसंत कौ ॥११८॥

*

मद-मतवारे भारे भौर गन गुंजरत,
मुनि जन देखि गीत गावत उमाह के ।
कोकिल नकीब बोल करत कलोल आगें,
पौन हलकारे आली ! छूटे चित चाह के ॥
'मोहन सुकवि' जीति सिसिर तगीर कीहे,
बस करि लीहे, देस रहे न निबाह के ।
ये जिय जान मान, कर ना गुमान आली !
डेरा परे बागन बसत बादसाह के ॥११९॥

*

सौंधे समीरन कौ सरदार, मलिंदन कौ मनसा फलदायक ।
किंचुक-जालन कौ कलपद्रुम, मानिनी बालन हू कौ मनायक ॥
कंत सुहंत अनंत कलीन कौ, दीनन के मन कौ सुखदायक ।
साँचौ मनोभवराज कौ साज, सु आवत आज इतै रितुनायक ॥१२०॥

मूर सहकार सीस औरन के तीर करै,
मोरन की बनी वेस--बानै रतिनाह की ।
परिभृत बंदिजन बेहद बिरद बोलै,
झञ्झा पौन ठाढी लखि बाढी पीर दाह की ॥
कहै 'प्रहलाद कवि' किंसुक त्रिसूल फूल,
सूल उपजावै कहा गति है निबाह की ।
बिरही बचेंगे कैसै, चाह करि अंत हेत,
चढी फौज प्रबल, बसंत पादस्याह की ॥१२१॥

*

आयौ परवाना पात--डार, छाँह तबू--तानि
कोकिला दिवान बौर तौर पतनावै तुनि ।
छडीदार कैलिया पुकार देहि आठो जाम,
वायु फूल--सेजिया मजेजिया बिछावै चुनि ॥
झडा लाल सेमर, सुगध हरकारा वर,
बाजत नगारा, जो मलिदगन गावै धुनि ।
सब्ब राज होत है 'दिवाकर जू' पछिन कौ,
दक्खिन के देस रितुराज आज आवै सुनि ॥१२२॥

*

सग की सहेली रही, पूजत अकेली सिवा,
तीर जमुना के बीर चमक चपाई है ।
हौ तौ आई भागत डरत हियरा तें घर,
तेरे सोच करि मोहि सोचत सबाई है ॥
बचि हैं बियोगी--योगी जन 'सरदार', ऐसी--
कंठ ते कलित कूक कोकिल कढाई है ।
बिपिन--समाज मे दराज सी अवाज होति,
आज महाराज रितुराज की अवाई है ॥१२३॥

*

वायु बहारि बुहारि रही, छिति बीथी सुगधन जाति सिचाई ।
त्यो मधुमाते मलिंद सबै, जय के करखान रहे कछु गाई ॥
मंगल--पाठ पढ़ें 'द्विजदेव', सबै विधि सो उपमा उपजाई ।
साजि रहे सब साज घने, बन मे रितुराज की जानि अवाई ॥१२४॥

आमन के बौरन की ओपी सिर टोपी धरै,
कुरता पलासन कौ ललित सुहायौ है।
तरल तमालन की किरचै-तुपक-तीर,
रजक पराग, सो अधिक छबि छायौ है॥
गोली से भँवर-भीर बोली भाँति-भाँतिन की,
फूली कलियान मे सु रौल ही जमायौ है।
वीर विरहीन के करेज रेज करिबे का,
आजु तौ बसंत सो वजीर बनि आयौ है॥१२५॥

★

मैन महाराज कर दीन्हौ है बहाल हाल,
तेई तरु नाथ कुल दल जैतवार है।
कोकिल है कनूनगोह, चौधरी चबाई चदा,
मौरन विसंदा को पैयत न पार है॥
टेसू कोतवाल जाकौ रूप है कराल,
काजी पौन इसाफ हैं, सुगध कौ अधार है।
अलि ! मिल बालम, अजौ न तोहि मालुम,
सो आयौ जग जालिम, बसंत फौजदार है॥१२६॥

★

बैठ्यौ बन-बीथिन बनाय दरबार,
नव पल्लव गिलिम, औ गुलाबन की गद्दी है।
कीन्हे कीर-कोकिल नवीन नवसिंदा पात,
झारि दै मिसिल, दफ्तर कुल रद्दी है॥
बिरहपुरा पै निज अमल लिखाय लायौ,
हरै-हरै चातुरी सो चाँपत चौहद्दी है।
कीन्है सतलत निज रत औ असंतन पै,
काम छितिकत कौ बसत मुतसद्दी है॥१२७॥

★

आम के मौर धरे तुररा, रितु किंसुक की अलफीन सुहायौ
धूम परागन की कफनी, अलबेलिन सेलिन सौ छबि छायौ॥
कज सखा करि किस्ति लिऐ, अरु कोकिलै-कूक अवाज सुनायौ।
प्रान की भीख वियोगिनी पै, रितुराज फकीर ह्वै माँगन आयौ॥१२८॥

फूल फरमान, छाप छपद दुहाई बास,
नूतन गज साज टेसू तवू दै परौ री है ।
केकी कारकून, पिक-ग्रानि चिट्ठी आई, जमा-
बिरह बढाई, छबि रैयत मरौरी है ॥
सीतल बयारि बादमापि रूप लीनौ है री,
उपज हमारे हरि ध्यान जो धरौ री है ।
आयौ है बसंत, ब्रज लायौ है लिखाय शेष,
जोन्ह कौ जलेबदार, काम कौ करौरी है ॥१२६॥

*

मलय गुलाबी, हाथ सुमन पियाले आले,
चटक गुलाब चोख चाखत विचारौ सौ ।
कहै 'हरिकेस' मोद चारो ओर छायौ जोर,
मधुर अलापै राग-ताल कूक भारौ मौ ॥
मुनि-मन बसन लथोरे नेह बौरे बलि,
हेर झकझोरे करै कौरे पिय प्यारौ सौ ।
सुरभी कलार कुंज-सदन सु छायौ वाकौ,
मंद-मंद आवत बसत मतवारौ सौ ॥१३०॥

*

माते मकरंद के मलिंद गन गुंजरत,
मंद-मद सोई मंत्र मोहन सुनायौ है ।
कहै 'गिरिधारी' खुली खोपरी कपोतिन की,
तोमरी की तान कोकिलान सुर गायौ है ॥
गोली सी निकल रही कलियाँ गुलाबन की,
नए-नए आमन की जात उपजायौ है ।
राज ब्रजराज जू को राजी करिवे को आज,
बाजीगर ब्रज मे बसंत बनि आयौ है ॥१३१॥

*

खेलत खेल झमेलन मे, रस खेलन खेल बढ्यौ अनमोला ।
सोहत है 'गिरधारन' भार, हजारन बारन रूप अतोला ॥
एक सखी तहँ रामहि देखि कै, सीस तें चदन कौ घट ठोला ।
मानहुँ सुद्ध सतोगुन ने, पहिर्यौ धरि चाह रजोगुन चोला ॥१३२॥

सुरति-समाजन की गूदरी गुही सी मानो,
मोर मुकुट माथे पै सुंदर सुहायौ है ।
सेत-सेत फूलन की सोहति विभूति अंग,
सिघी-धुनि कोकिलान कीरति सुनायौ है ॥
प्रेम रस भरौ, धरौ कर मे कमडल है,
बेलिन की सेली गले चीर दरसायौ है ।
माँगि-माँगि मोचन मलिदन कौ मंत्र पढि,
चेला कामदेव कौ बसंत बनि आयौ है ॥१३३॥

*

कलित कमडल कमल कलिका के करि,
किसुक कुसुम वर अंबर सुहायौ है ।
ठौर-ठौर भौरन की सैनी जयमाल मौर,
सजे है रसाल, जटा जूट सो बढायौ है ॥
सिष्यन के गीत करि कोकिल-कपोत सग,
पढै ह्वै उमंग चहूँ ओर सोर छायौ है ।
कंत बनमाली कौ पठायौ लाली मौ लसंत,
आली री ! बसंत नव संत बनि आयौ है ॥१३४॥

*

पीरौ तन पायौ, फूलौ सरसो सुमन सम,
मन मुरझानौ पतझार मनो लाई है ।
मीरी स्वाँस त्रिविध समीर सी बहावै सदा,
अँखियाँ बरसि मधु-झरि सी लगाई है ॥
'हरिचद' फूल मन मौन के मसूसन सो,
ताही सो रसाल बाल बदि कै बौराई है ।
तेरे बिछुरे ते प्रानकत कै हिमत अत,
तेरी प्रेम-योगिनी बसत बनि आई है॥१३५॥

*

नैन लाल कुसुम पलास से रहे है फूल,
माल गरै मानो बन झालरि सो लाई है ।
भँवर गुजार हरि नाम को उचार तिमि,
कोकिल सो कुहूँकि वियोग-राग गाई है ॥

'हरिचंद' तजि पतिझार घर बार सबै,
बौरी बनि दौरी चारु पौन ऐसी धाई है ।
तेरे बिछुरे ते प्रान कत के हिमत अंत,
तेरी प्रेम-योगिनी बसंत बनि आई है ॥१२६॥

★

लसत कुटज बन, चपक पलास बन,
फूली सब साखा जे हरति जन चित्त है ।
स्वेत-पीत-लाल फूल जाल है बिसाल तहाँ,
आछे अलि अच्छर जे काजर के मित्त है ॥
'सेनापति' माधव महीना भोर नेम करि,
बैठे द्विज कोकिल करत घोष नित्त है ।
कागद रगीन मे प्रबीन ह्वै बसत लिखे,
मानो काम चक्कवै के बिक्रम कवित्त है ॥१३७॥

★

विकसी बसंत की सुगध भरी ' सिव कवि ',
और ढग भए बन--कुंज की थलीन के ।
कोकिल के कल--कल कल नहि देत पल,
चारों ओर सोर सखि ! सुनिऐ अलीन के ॥
ऐसे समै मान प्रानपति सो न कीजिऐ री,
मेटिवे को मान मानिनी की अवलीन के ।
देखो रतिराज काज रितुराज कारीगर,
गुरुज बनाए है गुलाब की कलीन के ॥१३८॥

★

गावो किन कोकिल, बजावो किन भ्रमर बेनु,
नाँचो किन झूमरि लता गन बने-ठने ।
फेकि-फेकि मारो किन निज करि पल्लव सो,
ललित लवग फूल पायन घने-घने ॥
फूल माल वारौ किन, सौरभ सँभारौ किन,
ये ही परिचारक समीर सुख सो सने ।
बौर धरि बैठौ किन चतुर रसाल आज,
आवत बसंत रितुराज तुम्हे देखने ॥१३६॥

कोकिल नकीब, औ पपीहा चोबदार द्वार,
भँवर नफीर, कीरै मंद-मंद गायौ है।
गुटक कपोत-गोत ताल मानो तबलन की,
अबलन की जाति भाँति मोरचा नचायौ है॥
तूती ताल देत, भाव भाषत भुजंगी भेद,
चातक उतारै राई-लौन कौ बनायौ है।
मदन महीपति के 'मनीराम' माघ सुदी-
पचमी को ब्याहन बसंत रितु आयौ है॥१४०॥

*

बौर मौर किंसुक सुकंकन कलित सौन,
भूषन सुफूल के पराग पट भायौ है।
'ठाकुर' पताकै पता लाल, कंज सिंहासन,
कुंज भेद पालकी गयंद रथ छायौ है॥
पौन है सुढौर बने वृच्छन बराती तौर,
भौंर चोपकादि बोल बाजने बनायौ है।
जोहन मे मोहन बहार बनरी है संग,
सोहत बसंत बनरा सौ बनि आयौ है॥१४१॥

*

बागन मे चारु चटकाहट गुलाबन की,
ताल देत तालिया तुरै न तुक तंत की।
गुंजत मलिंद वृंद तान सी उपंज पुंज,
कल रव गान कोकिलान किलकंत की॥
'गोकुल' अनेक फूल फूले है रँगे दुकूल,
झूमै आम-बौर हाव-भाव रसवंत की।
लहरे तरुन तरु, छहरै सुगंध मंद,
नाँचत नटी सी आवै बैहर बसंत की॥१४२॥

*

सुंदर सोहै सुगंधित अंग, अभंग अनंग कला ललिता है।
तैसी 'किसोर' सुहात संयोगिन भोगन हू को मनोहरता है॥
संग अली अवली रवि राजित, अंग रसीली बसीकरता है।
कोमलता युत बीर बसंत की बैहर, कै बनिता, कै लता है॥१४३॥

डार द्रुम पालनौ, बिछौना नव पल्लव के,
सुमन झंगूला सोहै, तन छबि भारी दै ।
पवन झुलावै, केकी-कीर बतरावै 'देव',
कोकिल हलावै, हुलसावै करतारी दै ॥
पूरित पराग सो उतारौ करै राई-नोन
कंज--कली नायिका लतानि सिर सारी दै ।
मदन महीप जू कौ बालक बसंत ताहि,
प्रातहि जगावत गुलाब चटकारी दै ॥१४४॥

★

वासित बयारी उतै, स्वाँसा की सुगंध इतै,
अधरन लाली इत, उतै तरुवंत की ।
इत अरबिंदन पै छटा ज्यौ मलिंदन की,
अंगन पै इतै केस-कालिमा अनंत की ॥
कोकिल कलाप उत, मधुर अलाप इत,
टेसू उतै, सारी इतै सूही छबिवंत की ।
'पूरन' बिलोको चलि, कैसी लाल कानन मे-
होड सी लगी है, षोडसी की औ बसंत की ॥१४५।

★

बैस की निकाई, सोई रितु सुखदाई, तामे--
तरुनाई उलहत मदन मैमंत है ।
अंग-अंग रंग भरे दल--फल--फूल राजै,
सौरभ सरस मधुराई कौ न अंत है ॥
मोहन मधुप क्यो न लटू ह्वै सुभाय भटू,
प्रीति कौ तिलक भाल धरै भागवत है ।
सोभित सुजान 'घनआनंद' सुहाग सींच्यौ,
तेरे तन-बन सदा बसत बसंत है ॥१४६॥

★

डोलि रहे बिकसे तरु एकै, सु एकै रहे है नवाइ कै सीसहि ।
त्यो 'द्विजदेव' मरंद के व्याज सो, एकै अनंद के आँसू बरीसहि ॥
कौन कहै उपमा तिनकी, जे लहे री सबै बिधि संपति दीसहि ।
तैसई है अनुराग भरे, कर पल्लव जोरि कै एकै असीसहि ॥१४७॥

पीरौ फूल चंपक कौ सोभियत कर्नफूल,
तैसौ ही दुकूल अति सरस सुहायौ है।
पीरौ है लहँगा कुच-कंचुकी सोहात पीरी,
पीरौ है सरीर मानो केसरि लगायौ है॥
मोतिन की माल गर सोहत बन-माल पीरी,
पीरौ पोखराज नग जटित जरायौ है।
कचन की भूमि, ता मे धरै पग झूमि-झूमि,
देखो ब्रजचद जू बसंत बन आयौ है॥१४८॥

★

नील पट तन पर घन से घुमाय राखे,
दतन की चमक छटा से बिछुरति हौ।
हरिन के किरन जमाय राखौ जुगुनू सी,
कोकिला पपीहा पिकवानी सो भरति हौ॥
कीच अँसुवान की मचाय 'कवि देव' कहै,
बालम बिदेस को पधारवौ हरति हौ।
इंद्र कौ धनुष साज बेसर कसति आज,
रहु रे बसंत! तोहि पावस करति हौ॥१४९॥

★

मदन महीप कौ समंत बलवंत दिसि—
विदिसनि बीरा लै बसत उठि धाये है।
करत न बारन अबारन प्रताप जाकौ,
'सकर' बखानौ त्यो अजब गुन गाये है॥
फिरत दोहाई भौर-भौरन के ब्याजन कू,
ललकारे कोकिल की कूकनि गनाये है।
फूले ये पलास के न फूल काढि-काढि मानो,
नेजे मे वियोगी के करेजे लटकाये है॥१५०॥

★

मिलि माधवी आदिक फूल के ब्याज, विनोद लवा बरषायौ करै।
रचि नाँच लतागन तानि वितान, सबै विधि चित्त चुरायौ करै॥
'द्विजदेवजू' देखि अनोखी प्रभा, अलि चारन कीरति गायौ करै।
चिरजीवो बसंत सदा द्विज-देव प्रसूनन की भरि लायौ करै॥१५१॥

बरन-बरन फूले सब उपबन-बन,
सोई चतुरंग संग दल लहियत है।
बंदी जिमि बोलत बिरद बीर कोकिल है,
गुंजत मधुप गान गुन गहियत है॥
आवै आस-पास पुहुपन की सुबास सोई,
सोंधे के सुगंध माँझ सने रहियत है।
सोभा कौ समाज, 'सेनापति' सुख-साज आज,
आवत बसंत रितुराज कहियत है॥१५२॥

*

लाल-लाल टेसू फूलि रहे है बिसाल, संग--
स्याम रंग भेंटि मानौ मसि मे मिलाए है।
तहाँ मधु काज आस बैठे मधुकर--पुंज,
मलय पवन उपबन-बन धाए है॥
'सेनापति' माधव महीना मै पलास तरु,
देखि--देखि भाउ कविता के मन आए है।
आधे अन-सुलगि, सुलगि रहे आधे, मानो--
बिरही दहन काम क्वैला परचाए है॥१५३॥

*

धरयौ है रसाल मौर सरस सिरस रुचि,
ऊँचे सब कुल मिले गनत न अंत है।
सुचि है अवनि बारी भयौ लाज होम तहाँ,
भौंरी देखि होत अलि आनँद अनंत है॥
नीकी अगवानी होत, सुख जनवासौ सब,
सजी तेल ताई चैन मैन मयमंत है।
'सेनापति' धुनि द्विज साखा उच्चरत देखो,
बनी दुलहिन, बना दूलह बसंत है॥१५४॥

*

बाजी--बाजी बिरियन सीतल गरम बात,
मंद--मंद तुतरात बालक सरूपिया।
जेठ की जलाकी सी सलाका होय आवै कभू,
सौरभ सुहावै तरुनापन अनूपिया॥

'ग्वाल कवि' के है अंग थर–थर काँपै कभू,
कभू न बस्याय जू न चाहे भयौ धूपिया ।
आनँद के कंद रामचद हेत आपु मनौ,
आयौ छविवंत ह्वै बसंत बहुरूपिया ॥१५५॥

*

गहगहे गिरद गुलाबन के बढावने औ,
किंसुक अंगार मुख माहि परचत है ।
मंजुल कुसुम गोली, किसलय प्याले लाल,
मारुत ह्वै चेला भौंर ढाल लै पचत है ॥
'ग्वाल कवि' कहै कोकिलान की कतारें बहु,
बिपति बिडारै बाँस लहक्यौ चहत है ।
राजन के ताज महाराज रघुराज आगे,
आज रितुराज नटराज सौ नंचत है ॥१५६॥

*

बाजत मुरज मंजु मारुत मरोरदार,
बीन कौ बनाव तुंब बृंद बिकसत है ।
ताल की अवाजै साजै चटक गुलाबन की,
सुंदर सुरंगी भौंर गुंज सरसत है ॥
'ग्वाल कवि' कहै तार ताजे अमराइन के,
साधै सुर कोकिल कुहुक हुलसत है ।
राजे महाराजे रघुबीर जू के आगे चल्यौ,
आयौ बनै बानिक कलावंत बसंत है ॥१५७॥

*

बिहरै बिपिन मे बिटप की हलाय डार,
कियौ पतझार जाकी गति है दिगंत लौं ।
महँक सुगंध मधु फूलन कपोलन के,
माते मधुकर गुंजरत रसवंत सौं ॥
सिंह सम सिसिर के सीत कों खिसिर करि,
दीनो है भगाय ब्रज बड़े बलवंत ज ।
मंद–मंद चलत झरत मकरंद मंद,
मदन मतंग कैधों मारुत बसंत कौ ॥१५८॥

फूले हैं पलास लाल, लहरे निसान सोई,
बौरे है रसाल बरछी सो धार साने की ।
गुजरत मजुल मलिद वृंद आस-पास,
मंद गति भासत गयद है पयाने की ॥
'गोकुल' पराग रज उडै पथ फूलन के,
कोकिला बिरद वर बोले बीर-बाने की ।
मान बलवत गढ कटा करिवे को अत,
आयौ न बसंत, सैन मैन मरदाने की ॥१५६॥

*

तारे जहाँ सुभट, नगारे पिक-नाद जहाँ,
पैदल चकोर कोर बाँधे बद बेस की ।
गुजरत भौर-पुज, कुजरत मोर जहाँ,
पौन झकझोर घोर धमक हमेस की ॥
भनत 'कविद' सर फौज है बसंत आली',
मिलै तत कत सो मनोज मान पेस की ।
मानधारी गढी बेगुमान ढाहिवे के लिए,
चढ़ी असवारी है निसाकर नरेस की ॥१६०॥

*

आगै-आगै दौरत वकील गधवाह ऐसै,
पाछे-पाछे भौरन की भीर भट भोम है ।
बाजै राजै किंकिनी मजीठ कल गाजै जबै,
घूँघट ध्वजा मे मैन सीम धुज सीम है ॥
'कृष्णलाल' सौरभ पै, चंदन पै जाकी जीत,
ऐसो कौन भूतल में गब्बर गनीम है ।
मदन महीप बाज सदन सु सिरताज,
मदन बहादुर की का पर मुहीम है ॥१६१॥

*

दिसि-दिसि कुसुमित देखिऐ, उपबन-बिपिन समाज ।
मनहुँ वियोगिनि कौ कियौ, सर पंजर रितुराज ॥१६२॥

*

फिरि घर को नूतन पथिक, चले चलित चित भागि ।
फूल्यौ देखि पलास-बन, समुहै समुझि दवागि ॥१६३॥

विविध

ऊधौ ! ये सूधौ सौ सदेसौ कहि दीजो जाय,
स्याम सो सितावी तुम बिन सरसत है ।
कोप पुरहूत कै बचाई वारि-धारन तें,
तिन पै कलकी चंद विष बरसंत है ॥
'ग्वाल कवि' सीतल समीर जे सुखद ही, ते-
बेधत निसक, तीर-पीर सरसत है ।
जेइ विपनागिन ते बरत बचाई तिन्है,
पारि विरहागिन मे, बारत बसत है ॥१६४॥

★

वाह-वाह ! आप कों, बिहारीलाल प्यार भरे,
बाला बिरहागि तची, अब न तचैगी वह ।
बानी कोकिला की बिप-धार सी पचायौ करी,
अब लौ पची सो पची, अब न पचैगी वह ॥
'ग्वाल कवि' केते उपचारन सच्याई करौ,
अब लौ सची सो सची, अब न सचैगी वह ।
आयौ पचबान लै बसत बजमारौ बीर,
अब लौ बची सो बची, अब न बचैगी वह ॥१६५॥

★

फूलि उठौ वृंदाबन, भूलि उठे खग-मृग,
सूलि उठै उर विरहागि बगराई है ।
गुजरै करत अलि-पुज कुंज-कुज, धुनि-
मजु पिक-पुंज, नूत मजरी सुहाई है ॥
बाल-बनमाल-फूलमाल विकसंत, विह-
सत मुखी ब्रज मे बसत रितु आई है ।
नद के नॅदन ब्रजचद कौ बदन देखै,
सदन-सदन 'देव' मदन-दुहाई है ॥१६६॥

★

कछु और उपाय करै जनि री !, इतने दुख क्यो सुख सो भरिवी ।
फिर अंतक सौ बिन कत बसंत के, आवत जीवित ही जरिवी ॥
बन बौरत बौरी ह्वै जाउँगी देव', सुनै धुनि कोकिल की डरवी ।
जब डोलि है औरै अबीर भरी, सु हहा ! कहि बीर, कहा करिवी ॥१६७॥

भानु--तनया की अति तरल तरंगें ताकि,
होत तेज अतुल प्रताप पल चार मे।
बैठे सुर सग मे सु अग मे बसती बास
वैसेई बिछौना जर्द जरद नजार मे॥
'ग्वाल कवि' कोकिल कलित कल रव राजै,
विविध समीर सुख सरस अपार मे।
किसुक कुसुम औ अनार-कचनार चारु,
फैल-फैल फूलत बसंत की बहार मे॥१६८॥

*

अवनि-अकास--अंबु--अनिल--अनल आभा,
औरें भाँति भई जो मनोज महिमत की।
कर जनि मान या दिसानि ह्वै गई है मद,
मति छ्वै गई है सब जानु जग--जन की॥
कहत 'किसोर' जार जरब कुजोगिन को,
भोगिन को भावती वियोगिन के अत की।
उलही उमंगन ते लखि लसि रही तैसी,
लहलही लौदन पै लहर बसंत की॥१६९॥

*

हौरे हौरे डोलती सुगंध सनी डारन ते,
औरै-औरै फूलन पै दुगुन फबी है फाब।
चौथते चकोरन सो, भूले भए भौरन सों,
चारयौ ओर चंपन पै चौगुनौ चढ़ौ है आब॥
'द्विजदेव' की सौ दुति देखत भुलानो चित्त,
दस गुनी दीपति सो गहव गहे गुलाब।
सौ गुने समीर ह्वै, सहस गुने तीर भए,
लाख गुनी चाँदनी, करोर गुनौ महताब॥१७०॥

*

बीत गई सिगरी रजनी, चहुँ ओर तें फैल गई नभ लाली।
कोक-वियोग मिट्यौ परि पूर, उदै भयौ सूर महा छबिसाली॥
बोलि उठे बन-बागन मे, अनुरागन सो चहुँघा चटकाली।
सुंदर स्वच्छ सुगंध सने, मकरंद झरै अरविंद तें आली॥१७१॥

केतकि, असोक, नव चपक, बकुल-कुल,
कौन धौं वियोगिनी को ऐसौ बिकराल है।
'सेनापति' साँवरे की सूरत की, सुरति की,
सुरति कराय करि डारत बिहाल है॥
दच्छिन-पवन एती ताहू की दवन जऊ,
सूनौ है भवन परदेस प्यारौ लाल है।
लाल है प्रबाल फूले देखत बिसाल, जऊ-
फूले और साल पै रसाल उर-साल है।१७२॥

*

सरस सुधारी राज-मदिर मे फुलवारी,
मोर करै सोर, गान कोकिल विराव के।
'सेनापति' सुखद समीर है सुगध-मद,
हरत सुरत-स्रम-सीकर सुभाव के॥
प्यारौ अनुकूल, कोहू करत करन-फूल,
को हू सोसफूल, पाँवडेऊ मृदु पाँव के।
चैन मे प्रभात, साथ प्यारी अलसात, लाल-
जात मुसकात, फूल बीनत गुलाब के॥१७३।

*

तरु नीके फूले विविध, देखि भए मयमत।
परे बिरह बस काम के, लागे सरस बसत॥
लागे सरस बसंत, सघन उपबन बन राजत।
कोकिल के कल गीत, मधुर 'सेनापति' साजत॥
तजे सकुच के भाउ, भाउ तजि मान मनी के।
सुर-नर-मुनि सुख संग, रग राचै तरुनी के॥१७४।

*

दच्छिन धीर समीर पुनि, कोकिल कल कूजत।
कुसुमित साल रसाल जुत, जो बन सोभावत॥
जोबन सोभावत, कंत-कामिनि मनोज बस।
'सेनापति' मधु मास, देखि बिलसत प्रमोद रस॥
दरस हेत तिय लिखति, पीय सियरावहु अच्छिन।
हरहु हीय सताप, आइ हिलि-मिलि सुख दच्छिन॥१७५॥

मलय समीर सुभ सौरभ धरन धीर,
सरवर-नीर जन मज्जन के काज के।
मधुकर-पुंज पुनि मंजुल करत गुंज,
सुधरत कुंज सम सदन समाज के॥
ब्याकुल बियोगी, जोग कै सकै न जोगी, तहाँ-
बिहरत भोगी 'सेनापति' सुख-साज के।
सघन सु तरु लसत, बोले पिक-कुल मत,
देखो हिय हुलसत, आए रितुराज के॥१७६॥

*

गुंजरन लागी भौंर-भीरैं केलि-कुंजन मे,
कैलिया के मुख ते कुहूकन कढ़ै लगी।
'द्विजदेव' तैसे कछु गहब्र गुलाबन ते,
चहकि चहूँघा चटकाहट बढ़ै लगी॥
लागौ सरसावन मनोज निज ओज रति,
बिरही सतावन की बतियाँ गढ़ै लगी।
हौन लागी प्रीति-रीति बहुरि नई सी,
नव नेह उनई सी, मति मोह सो मढ़ै लगी॥१७७॥

*

वैसे ही बिदेस के जवैया रहे गौन तजि,
मौन तजि वैसे मंजु कोकिल कलाप भौ।
'द्विजदेव' वैसे ही मलिंदन को मोद कर,
मल्लिका-मरुअ-माधवीन सो मिलाप भौ॥
वैसे ही सँजोगी जुरि जोवन लगे है कंज,
वैसे ही वियोगिन के वृंद को बिलाप भौ।
वैसे ही बहुरि मोह-बान बरसन लागे,
वैसे ही सगुन फेरि मनसिज-चाप भौ॥१७८॥

ग्रीष्म

★

राशि—

वृषभ + मिथुन

मास—

ज्येष्ठ + आषाढ़

तातें सरल समीर मुख, सूखे सरिता-ताल।
जीव अबल, जल-थल विकल, ग्रीष्म सफल रसाल ॥

ग्रीष्म–परिचय

★

ग्रीष्म ऋतु के आते ही प्रकृति की बसंत कालीन सरस कमनीयता सहसा नीरस कुरूपता में परिवर्तित होने लगती है। कोकिलो की कूक, भ्रमरों की गुंजार और पक्षियों की विविध बोलियाँ कठिनता से सुनायी देती है। मंद सुगंधित शीतल वायु के स्थान पर उष्ण लूह और धूल धूसरित आँधियों की भरमार हो जाती है। इस ऋतु मे प्रकृति अपना मनोहर रूप छोड़ कर रौद्र रूप धारण करती है, और अपनी विकरालता से अखिल ब्रह्माड के चराचर को व्याकुल कर देती है।

ऊषा काल के मनोरम वायु मंडल का प्रभाव बहुत थोड़ी देर तक रहता है, और दिन निकलते ही सूर्य की तप्त किरणें प्राणी मात्र को संतप्त करने लगती है। दोपहर होते-होते प्रचंड मार्तंड भयंकर आग उगलने लगता है जिसके कारण समस्त भू मंडल जलती हुई भट्टी के समान उष्ण हो जाता है। उस समय प्राणी मात्र अपने धंधों को छोड़ कर शीतल स्थानों मे चले जाते हैं, किंतु वहाँ पर भी उनको कठिनता से चैन मिलता है।

पथिक जन रास्ता चलना बंद कर किसी घनघोर वृक्ष की छाया मे विश्राम करने लगते हैं। ऊँची अट्टालिकाओं और विशाल भवनों के निवासी अपने भव्य निवास स्थानों का मोह छोड़कर क्षणिक सुख-प्राप्ति की आशा से साधारण तहखानों की शरण लेते है। उस समय शीतल जल और पंखा ही जीवन-धारण करने के साधन बन जाते है। समृद्ध जन खस की टट्टी, कपूर मिश्रित अंगराग तथा तपन–निवारक अन्य साधनों का उपयोग करते हैं। इस ऋतु मे प्रत्येक व्यक्ति पल–पल मे लगने वाली प्यास से पागल सा हो जाता है। जन साधारण शीतल जल से और समृद्ध जन सुगंधित शर्बतो से बार–बार अपनी प्यास बुझाने को बाध्य होते हैं।

इस ऋतु मे तन ढकने के साधारण वस्त्र भी असह्य हो जाते हैं। सारा शरीर पसीने से चिपचिपाने लगता है। बार-बार स्नान करने पर भी तृप्ति नहीं होती है और हर दम पानी में बैठे रहने को ही जी चाहता है। झुंड के झुंड नर–नारी सर–सरिताओं मे जल–क्रीडा करने को जाते हैं, किंतु वहाँ पर भी जल का अकाल दिखलायी देता है।

ग्रीष्म की तपन से लहलहाती हुई लतिकाएँ सूखने लगती हैं, विकसित फूल–फल झुलसने लगते हैं, हरे-भरे बनोपवन उजड़ने लगते है, कूप–ताल–सरोवर–नद–नदी आदि समस्त जलाशय जल–विहीन होने लगते है। समस्त चराचर जगत् मे त्राहि–त्राहि मच जाती है। जल–थल और नभ के समस्त प्राणी व्याकुल हो जाते हैं।

जब अघड–आँधी धूल का भयकर तूफान उठाती हुई, मार्ग के वृक्षो को उखाडती हुई, कृषको के घरों को ढाती हुई और उनके छप्पर उडाती हुई चलती है, तब समस्त भू–मडल पर धूल का साम्राज्य छा जाता है। उस समय भूमि-आसमान सभी धूल–धूसरित होजाते हैं।

यद्यपि यह ऋतु केलि-क्रीडा और सुखोपयोग के अनुकूल नहीं है, तथापि ब्रजभाषा के भक्त कवियो ने अपने इष्टदेव की सेवा भावना मे शीतल वातावरण उत्पन्न करने वाली सामग्री को व्यवस्था कर इस ऋतु को भी आनददायक बना दिया है। सुगधित पुष्प–माला, शीतल अगराग, गुलाब-केवड़ा आदि का सुवासित जल, खस की टट्टी, जल–क्रीडा, और बन-विहार के कारण ग्रीष्म का प्रतिकूल वातावरण भी सर्वथा अनुकूल बना दिया गया है। इसी के अनुकरण पर ब्रजभाषा के अन्य कवियो ने विलासी जनों के आनद-विलास के लिए भी इसी प्रकार को प्रचुर सामग्री एकत्रित की है। ग्रीष्म ऋतु के वर्णन की यह विविधता ब्रजभाषा कवियों के काव्य–कौशल की परिचायक है।

ज्येष्ठ

एक भूत मे होत, भूत भज पचभूत भ्रम ।
अनिल-अबु-आकास, अवनि-ह्वै जाति आगि सम ॥
पथ थकित मद मुकित, मुखित सर सिधुर जोवत ।
काकोदर करि कोस, उदरतर केहरि सोवत ॥
पिय प्रबल जीव इहि बिधि अबल, सकल विकल जलथल रहत ।
तजि 'केसबदास' उदास मग, जेठ मास जेठहि कहत ॥ १ ॥

**

जगहै जराऊ जामे जरे है जवाहिरात,
जगमग जोति जाकी जग लो जगति है ।
जामे जदु जानि जान प्यारी जातरूप ऐसी,
जगमुख जाल ऐसी जोन्ह सी जगति है ॥
'गिरिधरदास' जोर जबर जवानी कौहै, जोहि
जोहि जलजाहू जीय मे जकति है ।
जगत के जीयन के जीय सो जुराये जीय,
जोय जोषिता की जेठ जरनि जरति है ॥ २ ॥

आषाढ

आनन अमल उड अविप अधिक आछी,
अबुज सी अदभुत आभा ईछननि मे ।
अमय अमोल, ओज--आगर अनप अति,
अमल उरोज अहै ईस उन्नतनि मे ॥
आछे अबलोके तें अनंग अग ना उमादि,
आवती न 'गिरिधरदास' आदरनि मे ।
अबला अनोखी ऐसी ईस सो उमंग सजै,
आयौ है अषाढ, ओढै आनँद अवनि मे ॥ ३ ॥

**

पवन चक्र परचड चलत, चहुँ ओर चपल गति ।
भवन भामिनी तजत, भ्रमत मानहुँ तिनकी मति ॥
सन्यासी इहि मास होत, इक आसन बासी ।
पुरुषन की को कहै, भए पच्छियौ निवासी ॥
इहि समय सेज सोबन लियौ, श्रीहि साथ श्रीनाथ हू ।
कहि 'केसबदास' असाढ चल, मैं न सुन्यौ श्रुति गाथ हू ॥ ४ ॥

ग्रीष्म

ग्रीष्म–बिहार

(राग सारग)

आज वृंदाविपिन कुंज अद्भुत नई।
परम सीतल सुखद स्याम सोभित तहाँ,
माधुरी मधुर और पीत फूलन छई॥
विविध कदली खंभ, झूमका झुक रहे,
मधुप गुंजार, सुर कोकिला धुनि ठई।
तहाँ राजत श्री वृषभान की लाडिली,
मनो हो घनस्याम ढिग उलही सोभा नई॥
तरनि–तनया–तीर धीर समीर जहाँ,
सुनत ब्रजबधू अति होय हरषित मई।
'नंददास' निनाथ और छिवि को कहै,
निरखि सोभा नैन पंगु गति ह्वै गई॥ ५॥

(राग सारग)

भले ही मेरे आए हो पिय!, ठीक दुपहरी की बिरियाँ।
सुभ दिन, सुभ नछत्र, सुभ महूरत, सुभ पल–छिन, सुभ घरियाँ॥
भयौ है आनद-कंद, मिट्यौ बिरह दुख-द्वद,
चदन घिस अग लेपत, और पाँयन परियाँ।
'तानसेन' के प्रभु दया कीनी मो पर, सूखी बेल कीनी हरियाँ॥६॥

(राग सारग)

सीतल सदन मे सीतल भोजन भयौ,
सीतल बातन करत आई सब सखियाँ।
छीर के गुलाब–नीर, पीरे–पीरे पानन बीरी,
आरोगौ नाथ! सीरी होत छतियाँ॥
जल गुलाब घोर लाई अरगजा–चदन,
मन अभिलाष यह अग लपटावनौ।
'कुंभनदास' प्रभु गोवरधन–धर,
कीजै सुख सनेह, मै बीजना दुरावनौ॥ ७॥

(राग सारग)

तपन लाग्यौ घाम, ररत अति धूप भैया, कहँ छाँह सीतल किन देखो ।
भोजन कूँ भई अबार, लागी है भूख भारी, मेरी ओर तुम पेखो ॥
बर की छैयाँ, दुपहर की बिरियाँ, गैयाँ सिमिट सब ही जहँ आवै ।
'नददास' प्रभु कहत सखन सो, यही ठौर मेरे जीय भावै ॥८॥

(राग सारग)

जेठ मास, तपत घाम, ऐसे मे कहाँ सिधारे स्याम !
ऐसी कौन चतुर नारि जाकौ बीरा लीनो है ।
नैक धौ कृपा कीजै, हम हू को सुख दीजै,
फेरि वाकें जाओ, जाकौ नेह नवीनौ है ॥
बाँह पकरि लै गई, सैया पर दिए बिठार,
अरगजा-चंदन लगाइ, हियौ सीतल कीनौ है ।
'रसिक' प्रीतम कठ लगाइ, रम मे रस मिलाइ,
अरस-परस केलि करत, प्रीतम बस कीनौ है ॥९॥

(राग विहाग)

रुचिर चित्रसारी सघन कुज मे मध्य कुसुम-रावटी राजै ।
चदन के रूख चहुँ ओर छवि छाय रहे,
फूलन के अभूषन-बसन, फूलन सिगार सब साजै ॥
सीयरे तहखाने मे त्रिविध समीर सीरी,
चंदन के बाग मध चदन-महल छाजै ।
'नददास' प्रिया-प्रियतम नवल जोरि,
बिधना रची बनाय, श्री ब्रजराज विराजै ॥१०॥

(राग विहाग)

बैठे ब्रजराज कुँवर, प्यारी संग जमुना-तीर,
सीतल बयारि सखी, मद-मंद आवै ।
अति उदार वैजयंती, स्याम अंग सोभा देत,
भुज परस्पर कंठ मेलि विहँसि गावै ॥
झीने पट दिपत देह, प्रीतम सो अति सनेह,
गौर-स्याम अभिराम कोटिक काम लजावै ।
'सूरदास मदनमोहन' मोहनी से बने दोउ,
रहसि--रहसि अंग अरगजा लगावै ॥ ११॥

(राग ललित)

आजु प्रभात लता-मंदिर मे, सुख बरसत अति हरप युगल वर ।
गौर-स्याम अभिराम रग भरे, लटक-लटक पग धरत अवनि पर ॥
कुच कुमकुम रंजित माला बनी, सुरति नाथ श्री स्याम रसिक वर ।
पिया प्रेम के अंक अलंकृत, चित्रित चतुर सिरोमनि निज कर ॥
दंपति अति अनुराग मुदित, कलि गान करत, मन हरत परस्पर ।
'हित हरवंस' प्रसंस परायन, गावत अलि सुर देत मधुर तर ॥१२॥

(राग केदारौ)

श्री वृंदाबन सघन कुंज, फूले नव दल पुहुप-पुंज,
त्रिविध समीर सीरी मंद-मंद आवै ।
उसीर-महल मध्य रावटी रची बनाय,
बैठी संग प्यारी सो तौ पीय-मन भावै ॥
अद्भुत गुन-रूप-रासि, राजत चहुँ ओर सुबास,
वेनु-विलास मध्य, केदारौ राग गावै ।
मनमथ कोटि कला जे सहचरी सकल समाज,
प्रेम-प्रीति-दरसन 'आसकरन' पावै ॥१३॥

(राग सारग)

बैठे लाल फूलन के चौवारे ।
कुंतल, बकुल, मालती, चंपा, केतकी, नवल निवारे ॥
जाई, जुही, केवरौ, कूजौ, रायबेलि महॅकारे ।
मंद समीर, कीर अति कूजत, मधुपन करत झंकारे ॥
राधारमन रंग भरे क्रीडत, नॉचत मोर अखारे ।
'कुंभनदास' गिरिधर की छवि पर, कोटिक मन्मथ वारे ॥१४॥

(राग सारग)

चंदन पहरि नाव हरि बैठे, संग वृषभान-दुलारी हो ।
जमुना-पुलिन तहॉ सोभित है, खेलत लाल बिहारी हो ॥
त्रिविध पवन बहति सुखदायक, सीतल मंद सुगंध हो ।
कमल प्रकासित, द्रुम बहु फूले, जहॉ राजत नॅद-नंद हो ॥
अक्षय-तृतीया अक्षय-लीला, संग राधिका प्यारी हो ।
करत बिहार संग सब सखियॉ, 'नंददास' बलिहारी हो ॥१५॥

ज्येष्ठ–दुपहरी

सूर आयौ सीस पर, छाया आई पाँइन तर,
पथी सब झुक रहे, देखि छाँह गहरी ।
धवीजन धव छाँडि रह री, धूपन के लिएँ,
पसु–पछी जीव–जतु चिरैया चुप रह री ॥
ब्रज के सुकुमार लोग दै–दै किवार सोए,
उपवन की ब्यारि तामै सुख क्यो न लह री ।
'सूर' अलबेली चलि, काहे को डराति बलि,
माह की मध्य राति, जैसे ये जेठ की दुपहरी ॥१६ ।

*

सूर आयौ माथे पर, छाया आई पाँइन तर,
उतर ढरे पथिक डगर देखि छाँह गहरी ।
सोए सुकुमार लोग जोरि कै किवार द्वार,
पवन सीतल घोख मोख भवन भरत गहरी ॥
धधी जन धध छाँडि, जब तपत धूप डरन,
पसु-पछी जीव-जतु छिपत तरुन सहरी ।
'नददास' प्रभु ऐसे मे गवन न कीजै कहुँ,
माह की आधी रात जैसी ये जेठ की दुपहरी ॥१७।

(राग बिहाग)

ऐसी दुपहरी मे कहाँ चली मृग–नैनी,
कोमल कमल सी कुमलानी, चरन उघारी ।
हौ तौ आई फूल बिनन,सखियन हू सुधि न लई,
हौ तो भई प्यासी लाल, गैल बतावो सुचारी ॥
पानी तो कौ प्याइ देउँ, पादुका पहराइ देउ,
आछी नीकी बैठो, नैक कदब की छैयाँ ।
'सूरदास मदनमोहन' भलेजु भले आए अचानक,
जैसी तुम जानत हौ, ऐसी हम नैयाँ ॥१८॥

ग्रीष्म–विदा

(राग बिहाग)

तपत–तपत तन सब ही जरयौ, ग्रीषम रितु दुख भारौ ।
कहा करे, कैसै होइ सजनी ! मिलै कब नद–दुलारौ ॥
सूखे ताल–तलैया बन के, तपत सूर्य अति भारौ ।
'सूरदास' वरषा रितु आई, करयौ ग्रीष्म म्हौ कारौ ॥१९॥

ग्रीष्म गरिमा

कँपत चर-अचर सकल लखि याहि, प्रभो परताप ताप के धाम ।
सीत-मद-हरन सरन-प्रद पाहि, तिहारे चरन कमल परनाम ॥
देखि तव दारुन दुपहर दर्स, छाह हू तक्त छाह के हेत ।
हियन आकर्षत कित हू हर्ष, लता-बनिता-कविता नहि देत ॥
पसीना पौछत बारहि बार, पसीजत तोऊ सारे अंग ।
कलित कुम्हिलात हियौ कौ हार, उडत सब मुख मडल कौ रंग ॥
हरति तव ज्वाल रसा-रस आय, सरित सरवर सब सूखे जात ।
बात बस बारि बहत, भय पाय, मनहुँ तिन थर-थर काँपत गात ॥
तपनिसो सुधिबुधि तजि कहुँ जाय, मोर जब पैठत पाँख पसारि ।
दुरत ता नीचे बिपधर आय, बिकल प्राननि कौ मोह बिसारि ॥
घाम के मारे अति घबराय, फिरत मारे चहुँ जीवन काज ।
एक थल अपनी बैर बिहाय, नीर ढिग पीवत मृग-मृगराज ॥
लार टपकति जा की अकुलात, स्वान अति हाँपत जीभ निकारि ।
बिलाई कढि समीप सो जात, तऊ नहि बोलत ताहि निहारि ॥
तरनि कौ तापत तरुन प्रताप, बिबस तरुनी गन तजि संकोच ।
निबारति बसन आपसो आप, नहीं कुछ अनघेरिन कौ सोच ॥
उत सो इत, इतसो उत जात, निरखि निरसात सुहात न ठाम ।
कृपा तो चिपचिपात सब गात, न पावत छिनक कहूँ बिस्राम ॥
चूम मुख दिना गये द्वै-चार, प्यार करि पावति परम प्रमोद ।
मात सोइ तव बस सकल बिसार, उतारति निज बालक को गोद ॥
राह चलिवौ नहि तनिक सुहाय, मचकि मसका तव मारे देत ।
पथिक पंछी पादप तर धाय, लेत सीरक तब आवत चेत ॥
तपत रवि सहस किरन बिकराल, चील्ह चीहरत गगन मडराय ।
भभकि भुव उगिलत दावा ज्वाल, लूअ की लपट झकोरा खाय ।
महिष सूकर गन तालन जाहि, न्हात लोटत अति हिय हरसात ।
कीच सनि मुदित महामन माहि, मनहुँ तन लगि चंदन सरसात ॥
जबै अटकत आपस मे बस, द्रोह दावानल पटकत आय ।
खटकि चटकत करिवे निज ध्वंस, नसत पल भर मे बर बिसाय ॥
सर्दा अपनी धुन मे दरसाय, पायके कहूँ जलासय तीर ।
उडति बैठति पुन उडि-उडि जाय, बिकल अति मधु-माखिन की भीर ॥
करति ना कोकिल निज कल गान, भ्रमर गुंजन सौ सूनी कुंज ।
परत पद तर पजरत पापान, जरत परसत पिपीलिका पुंज ॥

ताप बस ह्वै अत्यत अधीर, कहू कुलिलत नहि बछरा गाय ।
द्रुमन तर पी ज्याऊ कौ नीर फिरत जिय-जरनि तऊ ना जाय ॥
रेत सो बाहिर मुरसत पाम, तजत डरपत छिन भर को धाम ।
प्रबल धमका की पारत धाम, परै छाती नहि करिबे काम ॥
निरुद्यम निस्सहाय अति दीन, निबल सहि सकत न तेरी ज्वाल ।
उपासे प्यासे बसन बिहीन, लगत जल प्रान तजत ततकाल ॥
मित्र को तपत देखि असहाय, लुकन नीचे तुमसो डरि होय ।
हिमालय हिम जब जाति पराय, जगत करुना न तऊ तव जीय ॥
यदपि पीवत जन कृत्रिम तोय, प्यास प्रबला तोऊ नहि जाय ।
कठ की सीतलता गई खोय, रह्यौ रसना मे रस ना हाय ॥
करत छिरकाव न पूरत आस, गरम निकसत धरती सो भाप ।
चमेली पटल पुहुप नित पास, तऊ तव अटल रूप सो ताप ॥
लगी खस-टटिया छिरकी जात, खिचत खस पखा तिनके संग ।
नेक नौकर के झोखा खात, घुसत तुम वहाँ बडे बेढग ॥
कबहुँ चदन घिसि धारत अंग, करत सेवन उसीर करपूर ।
बगीचन बागन घोटत भंग, तबहुँ नहि होय शाति भरपूर ॥
सेत कारी पीरी अरु लाल, लाइ के तुम आँधी परचड ।
उखारत जर सो वृक्ष बिसाल, गिरावत तिनकौ गर्ब अखंड ॥
गगन मे गगन रही अति छाय, लखत नहि नील बरन आकास ।
दुरत निकरत पुनि पुनि दुरिजाय, नखत दल करत न प्रबल प्रकास ॥
सुधाकर सुधा करनि फैलाइ, करति कछु मटमली सी जोति ।
यदपि नैनन को अति सुखदाइ, तऊ मनचीती तृप्ति न होति ॥
कछुक जब रजनी होत व्यतीत, अटनि पै लै सितार मिरदग ।
गवावत-गावत सुदर गीत, भग तऊ करत सबै तुम रंग ॥
स्वदेसी मलमल मल-मल धोय, संदली ताको सुघर रँगाय ।
पहरि ताकी धोती तिय कोय, रमत परि तबहुँ न कष्ट नसाय ॥
उठें खटिया सो नित परभात, ब्यारि हू सीरी-सीरी खात ।
उमस सो तबहूँ सिर चकरात, सोचिये पढन-लिखन फिर बात ।
न भावत असन-बसन बन-बाग, अलप घर-घरनी सो अनुराग ।
खुले तव पाइ अनुग्रह भाग, कमायो सेतमेत बैराग ॥
प्रफुल्लित सबरे आक-जवास, जरे तन हरे-हरे पटमाज ।
तुम्है कुसुमाजलि सहित हुलास देत, स्वीकार करो महाराज ॥२०॥

ग्रीष्म की प्रचंडता

प्रबल प्रचड चडकर की किरनि देखो,
बहर उद्‌ड नव खड घुमिलत है।
अवनि कराही, कैसो तल रतनाकर सो,
'नैन कवि', ज्वाला की लहर उछिलत है।।
ग्रीपम की ज्वाल-जाल कठिन कराल यह,
काल-व्यालमुख हू की देह पिघलत है।
लूका भयौ आसमान, भूधर भभूका भयौ,
भभकि-भभकि भूमि दावा उगिलत है।।२१।।

*

घोरि घनसारन सो, सखिन कचूर चूर,
लीपे तहखाने सुख दीने है दुद्‌ड की।
तामे खसखाने बने ऊजरे बिताने,
सुर-भौन के समाने जे निदाने ठाने ठड की।।
बहत गुलाब के सुगध सो समीर सने,
परत फुही है जल जत्रन के तड की।
बिसद उसीरन के फोर परदान प्यारे,
तऊ आन बेधती मरीचें मारतड की।।२२।।

*

'सेनापति' तपन तपत उतपति तैसौ,
छायौ रति-पति, तातै बिरह बरतु है।
लुवन की लपटै, ते चहूँ ओर भपटै, पै-
ओढि सलिल परै न चित चैन उपजतु है।।
गगन गरद धूंधि, दसौ दिसा रही रूंधि,
मानौ नभ भार की भसम बरसतु है।
बरनि बताई, छिति व्योम की तताई, जेठ-
आयौ आतताई पुट-पाक सौ करतु है।।२३।।

*

नाहिन ये पाबक प्रबल, लुऐ चलति चहुँ पास।
मानौ बिरह बसंत के ग्रीषम लेत उसास।।२४।।

*

कह लाने एकत रहत, अहि-मयूर, मृग-बाघ।
जगत तपोबन सौ कियौ, दीरघदाघ निदाघ।।२५।।

जीवन को त्रास-कर, ज्वाला कौ प्रकास कर,
भोर ही तें भासकर आसमान छायौ है।
धमका धमक धूप, सूखत तलाव-कूप,
पौन कौ न गौन, भौन आग मे तचायौ है॥
तकि-थकि रहे जकि, सकल बिहाल हाल,
ग्रीषम अचर-चर-खचर सतायौ है।
मेरे जान काहू वृष-भान जगमोचन को,
तीसरौ त्रिलोचन कौ लोचन खुलायौ है॥२६॥

*

वृष कौ तरनि तेज सहसौ करनि तपै,
ज्वालन के जाल विकराल बरसत है।
तचत धरनि, जग जरत झुरनि, सीरी—
छाँह को पकरि पथी पछी बिरमत है॥
'सेनापति' नैक दुपहरी ढरकत होत,
धमका विषम जो न पात खरकत है।
मेरे जान पौन सीरे ठौर कौ पकरि कौनौ,
घरी एक बैठि कहूँ घामै बितवत है॥२७॥

*

उछरि-उछरि भेकी झपटै उरग हू पै,
उरग पग केकिन की लपटै लहकि है।
केकिन के सुरति हिए की ना कछू है भए,
एकी करि-केहरि न बोलत बहकि है॥
कहै 'कवि ब्रह्म' बारि हेरत हिरन फिरै,
बैहर बहित बडे जोर सो जहकि है।
तरनि के तावनि तवा-सी भई भूमि रही,
दस हू दिसान मे दवारि-सी दहकि है॥२८॥

*

बैठि रही अति सघन बन, पैठि सदन तन माँह।
देखि दुपहरी जेठ की, छाँह जु चाहति छाँह॥२९॥

*

ग्रीषम रितु की दुपहरी, चली बाल बन कुंज।
अंग-लपट तीच्छन लुएँ, मलय पवन के पुंज॥३०॥

तपै इत जेठ, जग जात है जरनि जर्यौ,
ताप की तरनि मानो मरनि करत है।
इतहि असाढ, उत नूतन सघन घन,
सीतल समीर हिऐं धीरज धरत है॥
आधे अंग ज्वालन के जाल बिकराल, आधे-
सीतल समीर हिय हीतल भरत है।
'सेनापति' ग्रीषम तपत रितु भीषम है,
मानो बडवानल सो बारिध बरत है॥ ३०॥

*

तपत प्रचड मारतंड महि मडल मे,
ग्रीषम की तीखन तपन आर-पार है
'गिरिधरदास' काँच कीच सौ बहन लाग्यौ,
भयौ नद-नदी नीर अदहन-धार है॥
झपट चहूँवन तें, लपट लपेटी लूह,
शेष कैसी फूँक, पौन भूकन की झार है।
तावा सी अटारी तपी, आवा सी अवनि महा,
दावा से महल, औ पजावा से पहार है॥३१॥

*

जैसे बिना जीरन सो जल की जिकिर जीभ,
जर्यौ जात जगत, जलाकन के जोर तें।
कूप-सर-सरिता सुखाय सिकतामै भए,
धाई धूरि धौरन धराधर के छोर तें॥
'बेनी कवि' कहत अनातप चहत सब,
अगिन सो आतप प्रकास चहुँ ओर तें।
तवा सौ तपत धरा मडल अखडल, औ--
मारतंड मडल दवा सौ होत भोर तें॥ ३२॥

*

चलै लूक पवन लुकारी जनु सब्रत के,
मानो भालु जुरे देह, मुख जुरे बाघ के।
मारतड तेज ते बिकल भए जल--थल,
रावटी उसीर राजा जाने, निसि माघ के॥

पिऐ पिऐ करत जहान रहै रातौ--दिन,
सरिता--तलाब आब पी-पी पोपे दाघ के ।
भनत 'दिवाकर' अनल तें अधिक आँच,
काँच चुऐ काँकरी दुपहरी निदाघ के ॥३४॥

*

सीना बीच ह्वै कर पसीना की बहत धार,
जीना भयौ जुलुम न बैन हू सो घरमी ।
'सेवक' भनत पौन--पानी तें कढति आग,
दाग जैहै परसि, न होति कबौ नरमी ॥
खसखाने रसखाने गए ह्वै अतसखाने,
कसखाने बैठि कहो पूजै हौस हरमी ।
ईषम सी ह्वै रही, नदीपम परति भूरि,
भीषम भई है गाढ, ग्रीषम की गरमी ॥३५॥

★

'सेनापति' ऊँचे दिनकर के चलति लूवैं,
नद--नदी कुवैं कोपि डारत सुखाइ कै ।
चलत पवन, मुरझात उपबन--बन,
लाग्यौ है तवन, डार्यौ भूतलौ तचाय कै ॥
भीषम तपत रितु, ग्रीषम सकुचि तातें,
सीरक छिपी है तहखानन मे जाइ कै ।
मानौ सीत काल सीत लता के जमाइवे को,
राख्यौ है बिरंचि बीज धरा मे धराइ कै ॥३६॥

★

नदिन में, नारन मे, नारंगी--अनारन मे,
नवल निवारन मे तौर बदले गये ।
'नदराम' ग्रीषम गुमा में, गरमी में, गैल--
गहब गुलाबन सो अंग मसले गये ॥
ऊसर के अंगन मे, नीर--नदी रंगन मे,
तरल तरंगन मे, हरिन छले गये ।
हेमगिरि--मदर मे, हिमगिरि--कंदर मे,
अंदर के अंदर मे बंदर चले गये ॥३७॥

प्रात नृप न्हात करि असन बसन गात,
पैधि सभा जात, जौजो बासर सुहात है ।
पीछे अलसाने, प्यारी सग सुख साने,
बिहरत खसखाने, जब धाम नियरात है ॥
लागे है कपाट 'सेनापति' रंग-मदिर के,
परदा परे, न खरकत कहूँ पात है ।
कोई न भनक, है कै चनक-मनक रही,
जेठ की दुपहरी कि मानो अधरात है ॥३८॥

*

ग्रीपम की गजब धुकी है धूप धाम-धाम,
गरमी झुकी है जाम-जाम अति तापिनी ।
भीजे खस-बीजन झुलै है ना सुखात स्वेद,
गात न सुहात बात, दावा सी डरापिनी ॥
'ग्वाल कवि' कहै कोरे कुभन ते, कूपन ते,
लै-लै जलधार, बार-बार मुख थापिनी ।
जब पियौ, तब पियौ, अब पियौ फेर अब,
पीवत हू पीवत बुझै न प्यास पापिनी ॥३९॥

*

पूरन प्रचड मारतंड की मयूखें मंड
जारें ब्रह्मड, अड डारे पख-धरिगे ।
लूऍं तन छूऍं, बिन धूऍं की अगिन जैसी,
चूऍं स्वेद-बुद, बुद धारे अनुसरिगे ॥
'ग्वाल कवि' जेठी जेठ मास की जलाकन मे,
प्यास की सलाकन ते ऐसी चित अरिगे ।
कुंड पिये, कूप पिये, सर पिये, नद पिये,
सिंधु पिये, हिम पिये, पीयबौई करिगे ॥४०॥

★

पवन परम ताती लगत, सहि नहि सकत सरीर ।
बरषत रवि सहसौ किरनि, अवनि तपनि के तीर ॥
अवनि तपनि के तीर, नीर मज्जन सीतल तन ।
'सेनापति' रति करति, नारि धरि मुकता-भूषन ॥
भूषन, मदिर, बास, सकल सूखत सरिता गन ।
पात-पात मुरझात जात बेली-बन-उपबन ॥४१॥

ग्रीष्म-विलास

चदन चहल चित्र महल 'हृदयेस' मोहै,
रस बतियान सो प्रमोद सखियान मे ।
खासे खस फरस फुहारे फुही फैलि-फैलि,
फैल भर सीतल समीर छतियान मे ॥
गोरे गात सोहै गरे गजरा चमेलिन के,
पोहै बर सुघर सहेली अति स्यान मे ।
मोद लै उरोज कर परस गुलाब जल,
छिरकत लाडिलौ लली की अँखियान मे ॥४२॥

★

ग्रीषम निदाघ समै बैठे बन दोऊ जहाँ,
बाग मे बहत बहती लहर रहट की ।
लहलही माधवी लतान सो लपट रही,
हीतल को सीतल सोहाई छाँह बट की ॥
प्यारी के बदन स्वेद-सीकर निहारि लाल,
प्यारौ प्यार करत बगारि पीत पट की ।
पत्र बीच कढे कहूँ रवि की मरीचें तहाँ,
लटकि छबीली छाँह छावत मुकुट की ॥४३॥

★

सीतल महल महा, सीतल पटीर पंक,
सीतल कै लीपि भीत, छीत-छात दहरे ।
सीतल सलिल भरे, सीतल विमल कुड,
सीतल अमल जल-जत्र-धारा छहरे ॥
सीतल बिछौनन पै, सीतल बिछाई सेज,
सीतल दुकूल पैन्हि पौढे है दुपहरे ।
'देव' दोऊ सीतल अलिंगनन लेत-देत,
सीतल सुगध मद मारुत की लहरे ॥४४॥

★

लीन्हे लली ललितादिक सग, उमग सो श्री वृषभानु-दुलारी ।
मालती-कुंद-निवारौ-गुलाब सु फूल रही चहुँघा फुलवारी ॥
हेम के छूटे फुहारे 'हठी', मघवा मघ मेघ महा सरकारी ।
हौज मे चोज सो मौज भरी, बलि बैठी बिलोकत राधिका प्यारी ॥४५॥

भरियत गहरे गुलाब हद हौदन,
सु धरियत रजत फुहारे तदबीर के।
ढरियत ढारन सुढारन गहर नीर,
दरियत घनसार सरद गँभीर के॥
करियत तर अतरन सो बिछौना 'कवि सोभ',
जे उघरियत बातायन नद–तीर के।
चंदन पलँग अरबिंदन की सेज पर,
सुंदरि सिधारी आज मंदिर उसीर के॥४६॥

*

द्वार दर परदे पराए मालती के नीके,
छूटत फुहारे भरे री गुलाब नीर के।
चंदन चहल मची चौक मे चौहद्दी चारु,
चलत झकोरे जोरे सीतल समीर के॥
'लाल बलबीर' दासी लै–लै जुही चौर ढोरे,
रूप को निहारे छल प्रेम रनधीर के।
जीवन–अधार सुकुमार मार आज दोऊ,
राजत बिहारी–प्यारी मंदिर उसीर के॥४७॥

*

चारो ओर द्वार परे परदे उसीरन के,
छूटत फुहारे नीर सीरे चित चाव के।
सखी चौर ढोरे, फूल अगन अतर बोरे,
सौरभ झकोरे साज मदन उछाव के॥
'लाल बलबीर' दासी खासी करबीन लै–लै,
गावे राग-रागिनी रसीले हाव-भाव के।
दाव कै त्रिलोक की निकाई सुखदाई आज,
राजत बिहारी–प्यारी मंदिर गुलाब के॥४८॥

*

कमल बिछाए, वर बिमल बितान छाए,
छबि भरे छज्जे दरबज्जे महराब के।
घने घनसार के सँवारे सखि हौज तामे,
छूटत फुहारे भारे केसरि के आब के॥

मौची सेज सुमन सिगार अगराग होत,
राग-रग भारे सुर सरस हिताब के।
चदन की खौर, वेदी बंदन बनाय बैठे,
राधिका-गोविंद आज मंदिर गुलाब के ॥४६॥

*

अतर पुतायौ, बने खासे खसखाने, तामें-
छीटे चहूँ ओरन उसीरन के आब के।
कजन बिछौना जामे गुंजे अलिछौना 'हठी',
स्रौनन के तौना सोहै सुरन रबाब के॥
छूटत फुहारे, कासमीर रग भारे,
बँधे है कतारे मघा मेघ झरदाब के।
देखो ब्रजचद जग-बद, चद मद होत,
चंदन चहल राधे महल गुलाब के ५०॥

*

प्रेम सरसानी, जस गावे वेद-बानी, चौर—
ढारे रमारानी, रतिरानी सी टहल मे।
कजन सँभारी सेज, मजुल करन बेस,
चाँदनी बरन चारु चदन चहल मे॥
छूटत फुहारे हिमवारे 'हठी' चारो ओर,
छिरकौ गुलाब आब ग्रीषम कहल मे।
भेंटी गुजरैटी अहिरैटी कान्ह भानु-बेटी,
अतर लपेटी लेटी सीतल महल मे ॥५१॥

*

खासे-खासे खुले खसखाने खुसबोईदार,
आस-पास छूटत फुहारे बड़े फाब के।
'गिरिधारी' फरस सँवारे तहाँ फूलन के,
परे दर परदा दरीचिन मे दाब के॥
चदन बिछाय सुख सोए स्यामा-स्याम तामे,
ग्रीषम मे ऊषम, हैरानी आबताब के।
गहब गुलफ, गुलगुली गलसुई चारु,
गिलिम गलीचे तर अतर गुलाब के ॥५२॥

आई चलि चंदमुखी चाँदनी महल 'सोभ',
चमकत बादला बसन बितरन सो ।
चाँदी की फुहारन ते फैलत फुही है फूल,
सेज पर दपति छकत रस-रन सो ॥
बाजैं बीन-बाद, कल हमन अबाद किए,
नूपुर-निनाद वे धरन उतरन सो ।
सर भए सौतिन के सतर मनोरथ री,
नर भए पथ के गुलाब अतरन सो ॥५३॥

*

सुमन सुगध सुचि सुरभी समीर सेत,
सीतल समाज साज सकल बनाए है ।
नहर-नदी के तट खूब खसखाने जाने,
खिरकी झरोखा खोलि खासदान लाए है ॥
तर करि अतर तमोल तान नामदान,
भान कौ समान सो प्रभान कै दुराए है ।
'द्विज बलदेव' कहे बरफ बिछाय वर,
बारिकै फुहारे औ बितान बेलिताए है ॥५४॥

*

ग्रीपम प्रचंड घाम चडकर मडल तें,
घुमड्यौ है 'देव' भूमि मडल अखड धार ।
भौन ते निकुज भौन, लहलही डारन ह्वै,
दुलही सिधारी उलही ज्यो लहलही डार ॥
नूतन महल, नूत पल्लवन छ्वै छ्वै से,
दलवनि सुखावत पवन उपबन सार ।
तनक-तनक मनि-नूपुरु कनक पाई,
आइ गई झनक-भनक झनकारवार ॥ ५५ ॥

*

ग्रीपम समीर तोपी तीर सी लगत अग,
भूमि महि-मडल मे तपन तपी रहै ।
असन-बसन पान पानी सुखदानी वस्तु,
तमकै घनेरी सबै यदपि ढपी रहै ॥

व्याकुल कुरग दौरें बन मे चहूँ दिसान,
मीन अकुलात जोपै नीर मे खरी रहैं।
'रसिकबिहारी' सग लीने निज प्रीतम को,
खूब खसखानन मे नवला छपी रहैं॥ ५६॥

*

चदन चहल चोबा चाँदनी चँदेवा चारु,
घनौ घनसार घेरि सीचे महबूबी के।
अतर उसीर सीर, सौरभ गुलाब नीर,
गजब गुजारै अग अजब अजूबी के॥
'फेरन' फबत फैलि फूलन फरस तामे,
फूल सी फबी है बाल सुदर सु खूबी के।
बिसद बिताने ताने, तामे तहखाने बीच,
बैठी खसखाने मे खजाने खोलि खूबी के॥५७॥

*

माधौ धाम तची भूमि तैसी काम धाम धूम,
प्यारे बनवारी जू! न जैए बन-बारी मे।
उबटि कपूर चारु चरचि कै चंदन सो,
छूटत फुहारे सुख सेजन सँभारी मे॥
'भूधर सुकवि' कहूँ रवि सो न हेरयौ लाल,
प्यारी अंग-संग रग रीझि-रीझि वारी मे।
बसो दोपहर रतिखाने-बालाखाने बीच,
भोर होत भौन मे, अथौन फूलवारी मे॥५ ॥

*

चंदन महल मध्य चद्रक चहल चारु,
चाँदनी सी चिकै चद चाँदनी सुहाई है।
तर अतरन बीर विजन-बयार नीर,
नहर बिमल बारि चौगृद चलाई हैं॥
रजत फुहारन की परत फुही है तहाँ,
'परमानद' गुलाबन की गिलम बिछाई है।
ग्रीषम-गरम कर पावै क्यो प्रवेस तहाँ,
जहाँ महाराज ब्रजराज की अवाई है॥५९॥

फटिक-सिलानि-रचे राजत अनूप हौज,
मौज सौ फुहारे फबै आठहू पहल मे ।
कहै 'रतनाकर' बिछाइ तिन पास सेज,
सुखद अँगेजि कै सुगंध की चहल में ॥
छात छिति छिरकी कपूर चोवा चदन सौ,
सीत छिपी आनि जहाँ ग्रीपम दहल मे ।
अग-अंग अमित उमंग की तरंग भरे,
दोऊ सुख लहत उसीर के महल मे ॥ ६० ॥

*

टटकी उसीरनि की टाटी चहुँ ओर लगी,
सराबोर सुखद सुगंध बहतोल मे ।
कहै 'रतनाकर' त्यो फहरै गुलाब-वारे,
फबत फुहारे मनि-हौजनि अमोल मे ॥
घसि घनसार चारु चदन कौ पक तासौ,
घेरि राखिवे को सीत समर-कलोल मे ।
प्यारौ रचै प्यारी के उरोज माहि मक्र-व्यूह,
चक्र-व्यूह प्यारी रचै प्यारे के कपोल मे ॥ ६१ ॥

*

ग्वाल बाल गहकि गुपाल के जुरे है इत,
उत ब्रज-बाल राधिका की चलि आवै है ।
कहै 'रतनाकर' करत जल-केलि सबै,
तन मन जीवन की तपनि सिरावैं है ॥
कर पिचकीनि हचकीनि सो हथेरिनि की
छीटै चहुँ कोद छाइ मोद उपजावैं है ।
मजु मुख मोरि मुलकावति दृगचल को,
अंचल कै ओट चोट चंचल चलावै है ॥ ६२ ॥

*

ग्रीषम बिहार-भौन साँवरे के ढिंग गौन,
सर-क्रीडा सोभित सहेली लिऐं संग की ।
होत चलि केलिन के विविध विधान तहाँ,
बाढी है ललक उर आनँद-उमग की ॥

ता समै भई जो सोभा, बरनी न जात मोपै,
दमकि उठी है दुति दूनी अंग-अंग की।
'नागरी' वे कैसी लगे तरुनी तरंगनि मे,
पानी पर पावक ज्यों फिरत फिरंग की।६३॥

★

दोऊ अनुराग भरे आए रंग-भौन भाग,
मघवा-सची को लावि लागत महल है।
बैठे एक आसन पै एकै संग, एकै रंग,
चल्यौ ना परत अंग कोमल कहल है॥
एकन लै अतर लगायौ 'देव' दुहुन के,
छिरक्यौ गुलाब, कीने बिजन बहल है।
लैकै करबीन परबीन अलियाँ अलाप,
मंजु सुर-पुंजन सो गुंजन महल है॥६४॥

★

पाय रितु ग्रीषम बिछायत बनाय, बेप—
कोमल कमल निरमल दल टकि-टकि।
इंदीवर कलित ललित मकरंद रची,
छूटत फुहारे नीर सौरभित सकि-सकि॥
'ग्वाल कवि' मुदित बिराजत उसीरखाने,
छाजत सुरा मे सुधा-सुषमा को छकि-छकि।
होत छवि नीकी वृषभान-नंदिनी की, सोह-
भानु-नंदिनी की ते तरंगन को, तकि-तकि॥६५॥

★

सूरज-सुता के तेज तरल तरंग ताकि,
पुंज देवता के घिरे ताके चहुँ कोय के।
ग्रीषम-बहारै, बेस छूटत फुहारै-धारै,
फैलत हजारै है गुलाब स्वच्छ तोय के॥
'ग्वाल कवि' चंदन कपूर-चूर चुनियत,
चौरस चमेली चंदबदनी समोय के।
खास खसखाने, खासे खूब खिलवतखाने,
खुलि गे खजाने खाने-खाने खुसबोय के॥६६॥

सीतल भवन अरु पवन सु सीतल ही,
गीतल महीतल अनद अधिकावै है ।
सीतल सरित-तीर नीर अति सीतल त्यो,
मैन नवजान हू की सीतल सुहावै है ॥
'रसिक बिहारी' चारु हार मृदु फूलन के,
सरस सुगध चाह अमित बढावै है ।
सीतल घनेरे, तहखानन दुरे है तऊ
ग्रीष्म की ताप तन तपनि जनावै है ॥६७॥

*

जेठ नजिकाने सुधरत खसखाने, तल-
ताख तहखाने के सुधारि झारियत है ।
होत है मरम्मति विविध जल-जत्रन की,
ऊँचे-ऊँचे अटा तें सुधा सुधारियत है ॥
'सेनापति' अतर-गुलाब-अरगजा साजि,
सार तार हार मोल लै-लै धारियत है ।
ग्रीपम के बासर बराइबे कों सीरे सब,
राज-भोग काज साज यौं सँभारियत है ॥६८॥

*

सुदर बिराजै राज-मदिर सरस, ताके-
बीच सुख दैनी, सैनी सीरक उसीर की ।
उछरै सलिल, जल-जत्र ह्वै बिमल उठै,
सीतल सुगध मद लहर समीर की ॥
भीने है गुलाब तन सने है अरगजा सो,
छिरकी पटीर नीर टाटी नीर-तीर की ।
ऐसे बिहरत दिन ग्रीषम के बितवत,
'सेनापति' दपति मया ते रघुवीर की ॥६९॥

*

रितु ग्रीषम की प्रति बासर 'केसव', खेलत है जमुना-जल मे ।
इत गोप-सुता, उहि पार गोपाल, बिराजत गोपन के गल मे ॥
अति बूढति है गति मीनन की, मिलि जाय उठै अपने थल मे ।
इहि भाँति मनोरथ पूरि दोउ जन, दूर रहै छवि सो छल मे ॥७०॥

ग्रीष्म-विलास के साधन

ग्रीषम न त्रास, जाके पास ये बिलास होय,
खस के मवास पै गुलाब उछरयौ करै ।
बिही के मुरब्बे डब्बे चाँदी के बरक भरे,
पेठे-पाक केबरे मे बरफ परयौ करै ।।
'ग्वाल कवि' चदन चहल मे कपूर पूर,
चदन अतर तर बसन खरयौ करै ।
कजमुखी, कजनैनी, कंज के बिछौनन पै,
कजन की पंखी कर-कंज सो करयौ करै ।।७१।।

★

ग्रीषम की पीर के विदीर के सुनो ये साज,
तरु-गिरि तीर के, सुछाया मे गँभीर के ।
सीतल समीर के सुगंधी गौन धीर के जे,
सीर के करैया प्यासे पूरित पटीर के ।।
'ग्वाल कवि' गोरी दृग-तीर के, तुसीर के सु,
मोद मिले जैसें अकसीर के, खमीर के ।
आबखोरे छीर के, जमाये बर्फ चीर के,
सु बगले उसीर के, भिजे गुलाब-नीर के ।।७२।।

★

बरफ-सिलान की बिछायत बनाय करि,
सेज सदली पै कंज-दल पाटियतु है ।
गालिब गुलाब जल-जाल के फुहारे छूटे,
खूब खसखाने पर गुलाब छाँटियतु है ।।
'ग्वाल कवि' सुंदर सुराही फेरि, सोरा मे-
ओरा कौ बनाय रस, प्यास डारियतु है ।
हिमकर-आननी हिवाला सी हिए तें लाय,
ग्रीषम की ज्वाला के कसाला काटियतु है ।।७३।।

★

झाँपै झुकी झपटै, झरोखन की झाँझरी की,
झोकन खुलै न कहूँ, खसखस की टाटी सो ।
आँगन के ऊपर अँगूरन की लाई लता,
छिरकै छबीली छीर-छींटन की छाटी सो ।।

आयौ रितु ग्रीषम गरूर 'जगमोहन जू',
बगरि बगार्‌यौ बार बेलिन की बाटी सो ।
अगर-उसीर-नीर सौरभ समीर सीरे,
सुखद सँवारे सेज सीतल की पाटी सो ॥ ७४ ॥

★

फहरै फुहार-नीर, नहर नदी सी बहै,
छहरै छबीन छाम छीटन की छाटी है ।
कहै 'पद्माकर' त्यो जेठ की जलाकै तहाँ,
पावै क्यो प्रवेस बेस बेलिन की बाटी है ॥
बारहूदरीन बीच चार हू तरफ तैसी,
बरफ बिछाई ता पै सीतल सु पाटी है ।
गजक अगूर की, अगूर सो उचौहै कुच,
आमव अंगूर कौ, अगूर ही की टाटी है ॥ ७५ ॥

★

धौर हर धौल धूप थाप हू धसै न जामे,
चहुँधा दुआर के सुगध सार साला से ।
मनि-दीप माला, मनि-भूषन बलित बाला,
बासे परयंक बासे सुमननि माला से ॥
व्यजन उसीर नीर मलयज समोए ह्वै,
परसत समीर है सरस सीत काला से ।
जिन हेतु बिरची विरचि हैम-साला ऐसी,
व्यथित न होत ते निदाघ-जात ज्वाला से ॥ ७६ ॥

★

अबर अतर-तर, चद्रक चहल तन,
चद्रमुखी चदन महल मन-साला से ।
खासे खसखाने, तहखाने, तरताने तने,
ऊजरे बिताने छुऐं, लागत है पाला से ॥
'दत्त' कहै ग्रीषम-गरम की भरम कौन,
जिनके गुलाब-आब हौज भरे ताला से ।
झाला से झरत झर, झापन सी बारा बाँधि,
धारा बाँधि छूटत फुहारा मेघ-माला से ॥ ७७ ॥

चौक मे चटक चॉदनी मे चारु सेज सारू,
नारन के ऊपर सेवारन बिछाय दै।
चदन की चहल चमेली के अतर घोरि,
घने घनसारन चहूँघा छिरकाय दै॥
कहै 'नंदराम' तैसे बोरि कै सुगधन सो,
हौरै-हौरै बेगि-बेगि बीजना डोलाय दै।
गहगहे गहब गुलाबन के गुंजि गुंहि,
गजरा गरे गरू गुलाब गलकाय दै॥ ७८॥

★

गाढे गध-सारन घनेरे घनसार आली,
घोरि-घोरि आज मेरे बगर बगारि दै।
त्यो ही तहखानन मे, खासे खसखानन मे,
अतर गुलाव के फ़हारन फ़हारि दै॥
बेली के बिछौना पै सुधारि साधि एला पान,
आछे मृग-मद सो अमोद उदगारि दै।
जौलौ 'जगमोहन' बिराजै इत बीर, तौलौ-
बाहर सो बैठि बलि ब्यजना सॅवारि दै॥ ७६॥

★

आवॉ सी अवधि, धुधी धूप रूप धूमकेतु,
ऑधी अध कूप डारै लोचन अनैसे कै।
जमक जलाकन की, नाकन की लोहू चलै,
व्याकुल जगत साफ पावै जैसे-तैसे कै॥
लोकपति लूक से उलूक से लुकत 'बनी',
कुज छाया जहॉ-तहॉ छाइ रही ऐसे कै।
कोठरी तखाने, खसखाने जलखाने बिन,
ग्रीषम के बासर व्यतीत होय कैसे कै॥ ८०॥

★

अमल अटारी, चित्रसारी वारी रावटी मे,
बारहै दुवारी मे केवारी गधसार की।
कामानल छाय रह्यौ चॉदनी बिछौना पर,
छबि भबि रही छीर-सागर कुमार की॥

'श्रीपति' गुलाब वारे छूटत फुहारे प्यारे,
लपटे चलत तर-अतर बयार की।
भूषन निवारी, घनसार भीजि सारी झरि,
तऊ न बुझानी नैक ग्रीषम के झार को ।।८१।।

*

ग्रीष्म-वियोग

बिकल सकल जल-थलन के जीव होत,
जेठ की जलाकनि मे पुहुमी तपति है।
सरित-सरोवर रसाल जलहीन भए,
सूखे तरु पसु हू पखेरुन बिपति है ।।
ग्रीषम-तपनि, दूजै बिरह-तपनि बाढी,
ता पै ये लपटि झपटि लपटति हैं।
सीरे उपचारन ते जारत अनग अग,
पिय बिन मान याकौ कैसे कै रहति है ।।८२।।

*

बरबरात बैहर प्रचड खड मडल पै,
धरधरात धूपन की द्युति पीन अरफरात।
झरझरात पवन के झोक आऐ अरअरात,
खरखरात पात-पात वृन्छन ते चरचरात ।।
भरभरात भामिनि भवन मॉझ बैठी जाय,
हरबरात हाय-हाय ! पीय-पीय ! बरबरात ।
कहै 'बच्चूराम' छिन-छिनक मे चुरमुरात,
जल बिन मीन जैसै, सेज हू पै फरफरात ।।८३।।

*

ग्रीषम तपत परचड नव खड मध्य,
लहू भरे लाले लाले, लूइन लुकारे है।
तीर कैसे तीन्छन उसीर सरसात आली,
मानो आज बरसत अगन अँगारे है ।।
ऊबि-ऊबि आवै सॉस ज्यो-ज्यो अध ऊरध,
उसॉसै उपसाऐ कैसौ पूरन पनारे है।
सूखे सर-सरिता, अपार 'जगमोहन जू',
दिन बिपरीते, रीते नदी-नद-नारे है ।।८४।।

ग्रीषम मे भीषम ह्वै तपत सहस-कर,
बापी--ताल-तारे नदी-नद सूखि जात है।
झंझापौन झरपि-झरपि झकझोरि झोरि,
धूरिधार धूसरै दिगन ना दिखात है।।
'श्रीपति' सुकवि कहै, आली ! बनमाली बिन,
खाली जग मोहि कैसै बासर बिहात है।
तावा से अजिर लग, लावा सौ तचत घर,
भयौ गिरि आवा सौ, पजावा सौ धुँवात है।।८५।।

★

धुंधरे दिगत भए, बिगत बसंत आली,
ग्रीषम विषम दिन काहू ना सुहात है।
तैसे ही प्रचड मारतड नवौ खंडन मे,
बलित बबंडर बहत चारो वात है।।
सूखे से लगत द्रुम, रूखे-भूखे सलिल से,
भजन भयावन महाबन भुरात है।
आवा सौ जगत भयौ, तावा सी तपति भूमि,
दावा भए भूधर, पजावा मे धुँवात है।।८६।

★

प्रीतम न आए, जाय कुबिजा-गृह छाए ऊधौ !
पाती लै आए, यहाँ ग्रीषम की हूक है।
पवन झहराने, धूल लागी फहराने,
अब कामसर ताने हिए बेधत अचूक है।।
सूर की चमक, दूजै घाम की घमक,
तीजै लूह की रमक ते उठत तन बूक है।
कहै 'बच्चूराम' चोली--चीर न सुहाय अब,
बिना मिले स्याम के कलेजा टूक-टूक है।।८७।।

★

रुकौ नदी--नदनि निकास नीर पूरन कौ,
सरन को तपन समान नीर सर कौ।
तीनै तौ तनून पात पूरित प्रकासनि सो,
सकती न तैस करि ताकि नारी-नर कौ।।

प्यारे परदेस को 'दिनेस' कत दीसौ दिन,
दौरे तपी दरिन तकै न तरु तर कौं ।
दिसि-दिसि देसन मे दारुन दरेर कै-कै,
पूरौ परिपूरन प्रताप दिनकर कौं ॥८८॥

*

विविध

तावरी तपन ताप ज्वाला सो न बिरहीन,
छीन ह्वै रही है आपनौई एक भाव री ।
भावरी सजन मध्य जासो सब राजी रहै,
नैक लूह लपट सो घट ना जराव री ॥
रावरी न मानी है सनेह नेह मेरौ कह्यौ,
देह मे प्रवेस बारि बाती को लगाव री ।
गाव री, बजाव री, सु बदी ! मन भाव री,
पै एरी बार ग्रीपम ! तू मोहि न सतावरी ॥८९॥

*

सीरे तहखाने, तामै खासे खसखाने, सौंधे-
अतर-गुलाब की बयार रपटति है ।
'भूधर' सुधारे हौज, छूटत फुहारे भारे,
बारे तापदानन मे धूम दपटति है ॥
ऐसे समय गौन कहो कैसे कै बनैगो प्यारे !
सुधा के तरंग प्यारौ अग लपटति है ।
चंदन-किबार घनसार कै पगार दई,
तऊ आनि ग्रीपम की झार झपटति है ॥९०॥

*

आयौ रितु ग्रीषम कौ भीपम प्रचड दाप,
जाकी छाप सब छिति-मडल सही लगी ।
कहै 'रतनाकर' बयारि-बारि सीरे कहूँ-
पैऐ नैक, एक रहै अहक यही लगी ॥
करवट लै-लै बरवट ही बिताई रात,
पलक लगाए हू न पलक रही लगी ।
अब ही मिरान्यौ ना संताप कल ही कौ, फेर-
ताप मो तपाकर के तपन मही लगी ॥९१॥

मेष-वृष तरनि तचाइन के त्रासन ते,
सीतलाई सब तहखानन में ढली है ।
तजि तहखाने गई सर, सर तजि कंज,
कंज तजि चंदन-कपूर पूर पली है ॥
'ग्वाल कवि' ह्वाँ ते चंद में ह्वै चाँदनी में गई,
चाँदनी ते सोरा मिले जल माँहि रली है ।
सोरा जल हू तें धसी ओरा, फिर ओरा तजि,
बोराबोर ह्वै करि हिमाचल में गली है ॥६२॥

★

ग्रीष्म—रूपक

चंड कर झारत झकोरत सरोष पौन,
तोरत तमालगन गयंद दिन भारौ सौ ।
धर्म के धरनि गिरि, तमकै प्रताप जाकौ,
देखत मजेज रेज जगत निहारौ सौ ॥
तरु छीन छाया, सर सूखत समुद्र, बन—
'करन' विचारि देखो आतप अँगारौ सौ ।
छावत गगन धूर, धावत धँधात आवै,
चोप चढौ ग्रीषम गयद मतवारौ सौ ॥६३॥

★

पतित द्विजन कौ है देत सु मनै सुखाय,
लगै अति कानन मे, बात ताप मे बली ।
मित्र वृष कौ है, जहाँ भारी दुखकारी बनौ,
बोलै दृग राते बिन काल वृथा ही छली ॥
जीवन जलावति है, लावति है अगिन मनो,
'दीनदयाल' सारस न मिलै जल की थली ।
देत नाहिं बसन सु बसन उतरि बिन,
कैधौं यह ग्रीषम, कै घोर खल-मंडली ॥६४॥

★

देह तची बिरहानल सो, अति ऊरध स्वाँसहि पान बढाई ।
मुक्त बलाकन की अवली, 'बलदेव' कहै सुखमा सरसाई ॥
स्याम घटा सम कारी लटै, दुति दामिनी त्यो बर दंतन पाई ।
भीषम बुंद गिरै दृग सो, रितु ग्रीषम मे बरषा रितु आई ॥६५॥

वर्षा

*

राशि—

कर्क+सिंह

*

मास—

श्रावण–भाद्रपद

*

वर्षा हंस–पयान, बक–दादुर–चातक–मोर ।
केतकि पुष्प–कदंब–जल, सौदामिनि घनघोर ॥

ऋ० ११

पावस–परिचय

★

वर्षा ऋतु सबसे अधिक मनोरम और सुहावनी ऋतु होती है, इसीलिए कवियों ने इसका अत्यंत विस्तार पूर्वक वर्णन किया है। ग्रीष्म ऋतु की प्रचंड तपन से संतप्त चराचर जगत् के लिए वर्षा ऋतु वरदान के रूप मे आती है, इसीलिए इसका इतना अधिक महत्व माना गया है।

ज्येष्ठ मास की धधकती धूप और लपलपाती लूओं ने ही समस्त जन समुदाय को सत्रस्त कर दिया था, किंतु आषाढ मास की ऊमस और सड़ी गर्मी ने तो गजब ही ढा दिया! सब लोग पसीने-पसीने होकर अकुलाने लगे और वर्षा ऋतु के आगमन की बडी उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा करने लगे। आखिर बडी प्रतीक्षा के पश्चात् क्षितिज मे एक ओर कुछ बादल उठते हुए दिखलायी दिये। सब लोग बडे चाव से उनकी ओर देखने लगे। देखते ही देखते नभ मडल में मेघ-मालाएँ घिर आयी। शीतल पवन मद गति से चलने लगी। जहाँ-तहाँ मयूर गण उच्च स्वर से कूकते हुए वर्षा ऋतु के आगमन की सूचना देने लगे। लोगों के कुम्हलाए हुए मन इस आशा से खिल उठे कि अब घनघोर वर्षा होने से ग्रीष्म जनित कष्टों से मुक्ति मिलेगी, किंतु उनकी यह आशा शीघ्र ही निराशा में परिणत हो गयी! उमड़-घुमड कर आये हुए बादल न मालूम नभ मंडल में कहाँ विलीन हो गये—घन घोर वर्षा तो क्या, कुछ बूँदे भी नहीं पड़ी!

किंतु लोगों को इस प्रकार की निराशा में अधिक दिनो में तक नहीं रहना पड़ा। आकाश मडल में फिर बादल घिरने लगे। ठडी-ठडी हवाएँ चलने लगी। पहले छोटी-छोटी फुहारे आयीं, फिर एक जोर का पानी पड़ गया, किंतु ग्रीष्म ऋतु की धधकती धरती पर पावस की यह प्रथम वर्षा जलते हुए तवे पर कुछ बूँदो के समान विलीन हो गयी! किंतु अब ग्रीष्म की दु:खदायी रात्रि का अत और पावस के सुखद प्रभात का प्रारभ हो चुका था। इसलिए बार-बार वर्षा होने से भूमि की प्यास बुझ गयी और अब यत्र-तत्र बहता हुआ जल खार-खड्ड, पोखर, कूप, ताल, सर-सरिताओ मे एकत्रित होने लगा।

प्रति दिन मेघ-मालाएँ नभ मडल में छाने लगीं। प्रबल वायु के झोंके उनको रुई के पहलो की तरह इधर से उधर उड़ाने लगे। कभी

बादल भूमि को छूते हुए दिखलायी देते, तो कभी वे आकाश मे बहुत ऊँचे उडते हुए ज्ञात होते थे। कभी छोटी–छोटी बूँदें पडने लगतीं, तो कभी गर्जन–तर्जन के साथ धूँआधार पानी पडने लगता था। कभी काले–काले बादलो के घटाटोप के कारण इतना सघन अधकार छा जाता कि दिन मे भी रात्रि का धोखा होने लगता था। बादलों के घनघोर घटाटोप मे बिजली की चमक-दमक एक अद्भुत दृश्य उपस्थित करती थी। बादलो की गडगडाहट और बिजली की चमचमाहट से ऐसा मालूम होता था कि आकाश रूपी रग भूमि मे नगाडों की ताल पर कदम उठाती हुई कोई चचला नर्तकी घूम–घूम कर नृत्य कर रही है !

बादलों की गरज, बिजली की चकाचोध और वर्षा की झडी मे मोर शोर मचाने लगे, पपीहा पीऊ–पीऊ और कोयल कुहू–कुहू की मधुर ध्वनि से चारो ओर रस बरसाने लगे, झिल्ली गण झनझनाने लगे और मेढ़क टर्राने लगे। इस प्रकार वर्षा ऋतु ने सदल–बल समस्त पृथ्वी पर अपना अधिकार कर लिया। चारो ओर हरियाली ही हरियाली दिखलायी देने लगी। बन–उपबन, बाग, बगीचे सब पर नयी बहार आने लगी। लता–द्रुम–बल्लरी से परिपूर्ण बन श्री की अपूर्व शोभा हो गयी।

रात–दिन की घनघोर वर्षा के कारण नदी–नालों में पानी का उफान सा आ गया। वर्ष के आठ महीनों मे सूखी पड़ी रहने वाली छोटी–छोटी नदियाँ भी जल से भरपूर होकर अपने किनारों के वृक्षों को गिराती हुई बहने लगीं। जब छोटे नद्-नालों की यह दशा है, तब बडी-नदियों का क्या कहना है ! वे किनारों को तोड़ती हुई चारों ओर फैलने लगीं और मार्ग की बस्तियों को बहाती हुई बाढ के रूप मे अपार वेग से बहने लगी।

पावस ऋतु के आते ही प्रेमी-प्रेमिकाओं की दुनियाँ में भी हलचल मच जाती है। यह ऋतु जहाँ सयोगी युग्मों को सुख प्रदान करती है, वहाँ वियोगियों की व्यथा का कारण बनती है। ब्रजभाषा कवियों ने सयोगियो के स्वर्गीय सुख और वियोगियो की विरह--वेदना का बडा ही मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

श्रावण

'केसव' सरिता सकल, मिलत सागर मन मोहै ।
ललित लता लपटाति, तरुन तन तरुवर सोहै ॥
रुचि चपला मिलि मेघ, चपल चमकत चहुँओरन ।
मनभावन कहँ भेटे, भूमि कूजत मिसि मोरन ॥
इहि रीति रमन रमनीन सो, रमन लगै मनभावनै ।
पिय गमन करन की को कहै, गमन न सुनियत सावनै ॥१॥

**

सोना मे सरीर पै सिगारन सुभग सजि,
सेज साजि-साजि स्याम-सगम-सुखन मे ।
सुदरी सिरोमनि सोहागिनि सलौनी सुचि,
स्यामा सुकुमारि सोहै सीसा के सदन मे ॥
सीस सीस-सुमन सुहायौ 'गिरिधरदास',
सूर सरसात, ज्यो सकारे सरपन मे ।
सिधु-सुता, सैल-सुता, सारदा, सची सी सुचि,
सावन मे सरसै सरस सखियन मे ॥२॥

भाद्रपद

नभ नीर देत, नील नीरद नगेस कैसे,
नाद करै सुनि नाक नाग करै नति है ।
नदी-नद-नारे-नीरनिधि नीर पूरे नये,
नलिन नसाए त्यो निदाघता नसति है ॥
'गिरिधरदास' नग नाह नीय नग धरे,
नाग अति नाचै, नेह नदी निकरति है ।
नभ मास नागर को नागरी निरखि ऐसै,
नवल निकुंज मे निपुन निरतति है ॥३॥

**

घोरत घन चहुँओर, घोष निर्घोषनि मडहि ।
धाराधर धर धरनि, मुसल धारन जल छडहि ॥
झिल्ली गन झनकार, पवन झुकि-झुकि झकझोरत ।
बाघ-सिह गुजरत, पुंज कुंजर तरु तोरत ॥
निसिदिन विशेष निहि सेष मिटि, जात सुओली ओडिए ।
देसहि पियूष परदेस विष, भादौ भौन न छोडिए ॥४॥

वर्षा

★

वर्षा-बहार

(राग मलार)

सोभा माई, अब देखन की बहार ।
गोवर्धन पर्वत के ऊपर, मोरन की पतबार ॥
ठाडे लाल पीत पट ओढे, मुरली मधुर रसाल ।
मोर-चंद्रिका माथे सोहै, और गुंजन के हार ॥
घन गरजत अरु दामिनि दमकत, नैही-नैही परत फुहार ।
'सूरदास' प्रभु तऊ न अघैहै, अँखियाँ होइ लख चार ॥५॥

★

ब्रज पै स्याम घटा जुरि आई ।
तैसिय दामिनि चहुँ दिसि कोधत, लेत तरंग सुहाई ॥
सघन छाँह, कोकिला कूजत, चलत पवन सुखदाई ।
गुंजत अलिगन सघन कुंज मे, सौरभ की अधिकाई ॥
विकसित स्वेत पाँत बगुलन की, जलधर सीतलताई ।
नव नागर गिरिधरन छबीलौ, 'कृष्णदास' बलि जाई ॥६॥

★

बादर भरन चले है पानी ।
स्याम घटा चहुँ ओर ते आवत, देखि सबै रति मानी ॥
दादुर-मोर-कोकिला कलरव, करत कोलाहल भारी ।
इंद्र-धनुष, बग-पाँति, स्याम-छवि लागत है सुखकारी ॥
कदम्ब वृक्ष अवलंब स्यामघन, सखा-मंडली संग ।
बाजत बेनु अरु अमिय सुधा-सुर, गरजत गगन मृदंग ॥
रितु आई, मनभाई सबै जिय, करत केलि अति भारी ।
गिरिवर-धर की या छवि ऊपर, 'परमानंद' बलिहारी ॥७॥

★

जहाँ-तहाँ बोलत मोर सुहाए ।
सावन रमन भवन वृंदाबन, घोर-घोर घन आए ।
नैन्ही-नैन्ही बूंदन बरषन लागे, ब्रज मंडल पै छाए ॥
'नंददास' प्रभु संग सखा लिऐ, कुंजन मुरली बजाए ॥८॥

(राग मलार)

आज कछु कुंजन मे बरपा सी ।
दल बादर मे देखि सखी री, चमकत है चपला सी ॥
नैन्ही-नन्ही बूँदन बरषन लागी, पवन चलत सुख-रासी ।
मद-मद गरजन सुनियत है, नाँचत मोर कला सी ॥
इद्र-धनुष बग-पगति देखियत, भूली मृग-माला सी ।
चद-बधू छवि छाय रही है, गिरि पे स्याम घटा सी ॥
उमँगत है, कछु हँसि-कपत है, बोलत है कोकिला सी ।
'ब्यासदास' चातक की रटना, रस पीवत भई प्यासी ॥९॥

*

देखो माई, नई बरषा रितु आई ।
उमँगि घटा चहुँ दिसि ते जुरि-जुरि, बिजुरी-चमक सुहाई ॥
दादुर-मोर-पपैया बोलत, कोयल सब्द सुहाई ।
निसि-दिन रहत सदा प्रीतम सँग, निरखत नैन अघाई ॥
धन जमुना, धन पुलिन मनोहर, वायु बहत सुखदाई ।
'सूरदास' प्रभु की छवि ऊपर, नैनन नीर बहाई ॥१०॥

*

वर्षा-बिहार

(राग मलार)

कदंब तर ठाडे है पिय-प्यारी ।
मोहन के सिर मुकुट बिराजत, इत लहरिया की सारी ॥
मंद-मंद बरषत चहुँ दिसि तें, चमकत बिज्जु-छटा री ।
मुरली बजावत श्री नँदनंदन, गावत राग मल्हारी ॥
लेत तान हरि के सग राधा, रंग होत अति भारी ।
'श्री विट्ठल गिरिधर' को रिझवत, श्री वृषभान-दुलारी ॥११॥

*

नयौ नेह, नयौ मेह, नये रसमाते दोउ, नवल कान्ह वृषभान-किसोरी ।
नवल पीतांबर, नवल चूनरी, नई-नई बूँदन भीजत गोरी ॥
नव वृंदाबन हरित मनोहर, चातक बोलत मोरा-मोरी ।
नव मुरली जुनाद, मल्हार राग नई, गत स्रवन सुनत आए घन घोरी ॥
नव भूषन, नव मुकुट बिराजत, नई-नई उरप लेत थोरी-थोरी ।
'हित हरिवंस' असीस देत मुख, चिरजीयौ भूतल ये जोरी ॥१२॥

(राग मलार)

कुंज-महल के आँगन मध्य, पीय-प्यारी—
बाँह जोरि, फिरत रंग सो रँगमगे।
अरुन बसन तन, मातिन की माला गरै,
चौहटं सरीर, चीर नीर सो सगबगे ॥
छूटे बार भीजन लागे ललित कपोलन सो,
कुंडल किरन नग, भूषन झगमगे।
'नागरीदास' घन बरषत पानी, तामे—
रूप के जहाज मानो डोलत डगमगे। १३॥

★

गरजि-गरजि रिमझिम-रिमझिम बूँदन लाग्यौ बरषन घन।
प्रीतम-प्यारी राजै रंग महल, बोलत चातक-मोर,
दामिनी दमक, आवै झूम-झूम बादर अवनी परसन ॥
तैसौई सोहै हरियारौ सावन मनभावन,
इंद्र-बधू ठौर-ठौर आनंद उपजावन।
पिय बिहारी प्रिया सँग गावत राग मल्हार,
ललित लता लागीं सुनमुन सरसावन ॥१४॥

★

डरत नहिं घन सो रति-रस-माते।
हारयौ बरसि गरजि बहु भाँतिन, टरै न वीर तहाँ ते ॥
गिरिवर अटा सुहावन लागत, बन दरसात जहाँ ते।
तहाँई जुगल लपटि रस सोए, नींद भरे अलसाते ॥
रस-भीने, आलस सो भीने, भीने जल बरसाते।
औरहु गाढ अलिंगन करिकै, सोए सुखद सुहाते ॥
भोर भयौ नहिं गिनत, सखीगन लखिकै कछु सकुचाते।
'हरीचंद' घन-दामिनि हारी, जीत जुगल इतराते ॥१५॥

★

सखी री, बूँद अचानक लागी।
सोवत हुती मदनमद-माती, घन गरज्यौ तब जागी ॥
दादुर-मोर-पपैया बोलै, कोयल सब्द सुहागी।
'कुंभनदास' लाल गिरिधर सो, जाय मिली बड भागी ॥१६॥

(राग मलार)

जब–जब दामिनि कोंधत, तब-तब भामिनि डरात, प्रीतम उर लावत ।
उनमद मेघ-घटा की धुनि सुन, आपन जगात, अरू पियहीं जगावत ।।
दादुर–मोर–पपीहा बोलत, मदमाती कोयल बन गावत ।
कुंज–कुटीर 'व्यास' के प्रभु सँग, श्री राधा रस पावत ।।१७।।

*

घूम–घूम घटा आईं, झूम–झूम लता रहीं,
भूमि हरियारी लागै सुभग सुहाई ।
तहाँ बैठे पीय-प्यारी भूषन छवि न्यारी-न्यारी,
मुख की उजियारी मानो चाँदनी सी छाई ।।
तनन–तनन तान लेत, प्यारी कर–ताल देत,
गावत मल्हार राग, अति मनभाई ।
'श्री विट्ठल गिरिवर-धारी' लाल, लखि मोही ब्रजबाल,
रीझ–रीझ रहे दोउ कंठ लपटाई ।।१८।।

*

गहर–गहर गाजै, बदरा-समूह साजै, छहर-छहर मेह बरसै सुघरिया ।
कहर-कहर करे पवन अरु पानी अति, महर–महर करे भूतल महरिया ।।
'बालकृष्ण' ये सुख देखिवे कूँ गावत, मल्हार गहै कदम की डरिया ।
फहर-फहर करै प्यारे कौ पीतांबर, लहर-लहर करै प्यारी कौ लहरिया ।१९।

आए माई बरषा के अगवानी ।
दादुर–मोर–पपैया बोले, कुंजन बग–पाँति उड़ानी ।।
घन की गरज सुनि सुधि न रही कछु, बादल देख डरानी ।
'कुंभनदास' प्रभु गोवरधन–धर लाल भए सुखदानी ।।२०।।

*

स्यामहि देखि नाँचत मुदित मोर ।
ता ऊपर आनद उमँग भर, सुनत मुरलि कल घोर ।।
चहुँ दिसि तें कोकिल कल कूजत, और दादुर की रोर ।
'गोविंद'प्रभु सखा सँग लिए, बिहरत बल–मोहन की जोर ।।२१।।

*

भीजत कुंजन तें दोऊ आवत ।
ज्यों–ज्यों बूँद परत चूनर पै, त्यों–त्यों हरि उर लावत ।।
अति गभीर झीने मेघन की, द्रुम तर छिन बिरमावत ।
जय 'श्रीभट्ट' रसिक रस-लंपट, हिल-मिल हिय सचुपावत ।।२२।।

(राग मलार)

देखो माई, भीजत गिरिवर–धारी।
मोर मुकट, तन स्याम, पीत पट, घन–दामिनि उनहारी ॥
बडी–बडी बूँद परत धरनी पर, मानो जु महरी आरी।
सावन मास, सघन तरुवर बन, कोकिल सब्द उचारी ॥
करत विचार, चले किन सजनी, बरषत है जु फुहारी।
'सूरदास' प्रभु बानिक ऊपर, तन–मन वारन डारी ॥२३॥

*

लाल माई, भीजत आए गेह।
हाथ लकुटिया, कामर खोई, खूँदत कीच सनेह ॥
निसि अँधियारी, हाथ नहि सूझत, पवन झकोरत मेह।
'सूरदास' दामिनि के दमकै, लखी साँवरी देह ॥२४॥

*

लाल ! मेरी सुरँग चूनरी भीजै।
लेहु बचाय आप पिय मोको, बूँद परैं रंग छीजै ॥
बरषत मेह, रहै नहि नैकहु, कहा उपाय अब कीजै
हम–तुम कुंज भवन मे चलि है, मान सबै सुख लीजै ॥
ऐसौ समयौ बहौर न ह्वै है, मेरो कह्यौ पतीजै।
'श्री विट्ठल गिरिधरन' छबीले, निरखि-निरखि सुख जीजै ॥२५॥

*

देखो माई, भीजत रस भरे दोऊ।
नदनँदन वृषभान–नदिनी, होड परी है जोऊ ॥
सुरँग चूनरी स्यामा जू की, भीजत है रस भारी।
गिरिधर पाग–उपरना भीज्यौ, या छवि ऊपर वारी ॥
बातई बात होड भई भारी, ललितादिक समुझावै।
दोउ मिलि झगरत, मानत नाँही, सखि सब बुंद बचावै ॥
तब मोहन हारे, सिर नायौ, हँसी सकल ब्रजनारी।
'परमानद' प्रभु यह विधि क्रीडत, या सुख की बलिहारी ॥२६॥

*

भीजत कब देखौ इन नैना
स्यामा जू की सुरँग चूनरी, मोहन कौ उपरैना ॥
जुगल किसोर कंज तर ठाडे, जतन कियौ कछु मै ना।
उमँगि घटा चहुँ दिसि ते 'श्रीभट', जुरि आई जल-सैना ॥२७॥

(राग मलार)

ये रितु रूसन की नहिं प्यारी ।
देखु न, छाय रहे घन झुकि-झुकि, भूमि छई हरियारी ॥
सीरी पवन चलत गरुई है, काम बढ़ावन-हारी ।
बन-उपबन सब भए सुहावन, औरहि छवि कछु धारी ॥
फूली जुही, मालती महँकी, सुनि कोकिल किलकारी ।
लहकि-लहकि लपटी सब बेली, प्रीतम-गल भुज डारी ॥
मगन भए जड जीव सबै जब, तब तू रहति क्यों न्यारी ।
'हरीचंद' गर लगु प्रीतम के, गाढे भुज भरि नारी ॥२८॥

★

अनत जाइ बरसत, इत गरजत बे काज ।
तुम रस-लोभी मीत स्वारथ के, सुनहु पिया ब्रजराज ॥
दामिनि सी कामिनि अनेक लिएँ, करत फिरत हो राज ।
हरिचंद' निज प्रेम--पपीहन, तरसावत महाराज ॥२९॥

★

(राग भैरव)

प्रातकाल ब्रज-बाल पनियाँ भरनी चली,
गोरे-गोरे तन सोहै कसुंभी कौ चदरा ।
ताही समै घन आए, घेरि-घेरि नभ छाए,
दामिनि--दमक देखि होत जिय कदरा ॥
बोलत चातक--मोर, सीतल चलै झकोर,
जमुना उमाडि चली, बरसत अदरा ।
हरीचंद' बलिहारी, उठि बैठो गिरिधारी,
सोभा तौ निहारो चलि, कैसे छाए बदरा ॥३०॥

★

(राग केदारौ)

तैसी ये पावस ऋतु आई, तामे झूलत हिंडोरे पिय-प्यारी रस रंग-भए ।
मंद-मंद गरजत और दामिनी दमकत,
कोकिल गावत, दादुर सुर देत, नये-नये घन उनये ॥
पिय कौ पिछौरा-पाग, प्रिया की कसुंभी सारी,
मुकुता के आभूषन अंग ठये ।
'रसिक' प्रीतम की बानिक निरखत, नैनन के सब ताप गये ॥३१॥

झूला

(राग मलार)

हिंडोरे माई, कुसुमन भाँति बनाई ।
नवलकिसोर मनोहर मूरति, ढिग राधा सुखदाई ॥
छाय रहे जित-तित ते बादर, बिच दामिनि अधिकाई ।
दादुर-मोर-पपीहा बोले, नैन्ही-नैन्ही बूँद सुहाई ॥
झोटा देत सकल ब्रज-सुंदरि, त्रिविध पवन सुखदाई ।
'चतुर्भुज' प्रभु गिरिधरनलाल की, ये छबि बरनि न जाई ॥३२॥

*

झूमत अति आनंद भरे ।
इत स्यामा, उत लाल लाडिलौ, बैयाँ कठ धरे ॥
बोलन मोर-कोकिला-अलिकुल, गरजत है घन घोर ।
गावत राग मल्हार भामिनी, दामिन सी झकझोर ॥
नैन्ही-नैन्ही बूँद परत है ऊपर, मंद सुगंध समीर ।
फूलन फूलि रह्यौ कानन सब, सुंदर जमुना-तीर ॥
रीझ रहे सुर-नर-मुनि के गन, बरषत कुसुमन-माल ।
'सूर' सकल सुख कौ येही सुख, निरखत मदनगोपाल ॥३३॥

*

हिंडोरे माई झूलत गिरवरधारी ।
सावन मास सरस घन बरसत, तैसीय भूमि हरियारी ॥
फूले सुभग कुसुम जमुना-तट, पवन बहत सुखकारी ।
निरखि-निरखि सुख देत झोटका, श्री वृषभान-दुलारी ॥
दादुर-मोर-पपीहा बोले, कोयल सब्द उच्चारी ।
राग मल्हार अलापत भामिनि, पहरै कसुभी सारी ॥
बाजत ताल-मृदंग-बाँसुरी, नाँचत दै कर-तारी ।
मदनमोहन राधावर ऊपर, 'गोविंद' जन बलिहारी ॥३४॥

*

झूलत नवल किसोर-किसोरी ।
उत ब्रजभूषन कुँवर रसिक वर, इत वृषभान-नंदिनी गोरी ॥
नीलांबर-पीतांबर फरकन, उपमा घन-दामिनि छबि थोरी ।
देखि-देखि फूलत ब्रज-सुंदरि, देत झुलाय गहै कर डोरी ।
मुदित भई यों स्वर मिल गावत, किलकि-किलकि दै उरज-अँकोरी ।
'परमानंद' प्रभु मिल सुख बिलसत, इंद्रबधू सिर धुनत झकोरी ॥३५॥

(राग मलार)

झूलत नागरि-नागर लाल ।
मद-मद सब सखी झुलावत, गावत गीत रसाल ॥
फरहरात पट नील-पीत की अचल चंचल चाल ।
मनो परस्पर उमगि ध्यान छवि, प्रगट भए तिहि काल ॥
सलसलात अति पिय के सिर पै, लटकत बनी लाल ।
मनो मुकुट बरुहा बिरही भए, बोनी बाक बेहाल ॥
मोतिन-माल प्रिया के उर की, पिय तुलसीदल-माल ।
मनो सुरसरी मिलि जमुना-तट, मानो बिहग मराल ॥
साँवल-गौर परस्पर अति छवि, सोभा बिसद बिसाल ।
निरखि 'गदाधर' कुँवर-कुँवरि-छवि, मनो भरयौ रस-जाल ॥३६॥

(कजली)

प्यारी झूलन पधारो, झुकि आए बदरा ।
ओढ़ो सुरख चूनरि, तापै स्याम चदरा ॥
देख बिजुरी चमकै, बरसै अदरा ।
'हरीचद' तुम बिन, पिय अति कदरा ॥३७॥

*

(दोहा)

नवल निलय नीरज महा, अगन अंग रसाल ।
नवल हिंडोरे झूलहीं, आली री नव लाल ॥३८॥

(राग मलार)

आली री, झूलत है नव लाल नवल हिंडोरना ॥
नवल वृदा विपिन अवनी, सहज सुखद रसाल ।
ललित लतिका लपटि रही, लहलहै तरु तामाल ॥
फूल-फल-दल विमल झलमल, बरन-बरन बिसाल ।
भयौ सुरभित सकल बन घन, मुदित मधुप रसाल ॥
नवल कुंज-निकुंज प्रति-प्रति रही अति छवि छाय।
उमडि-उमडि सु घाट घट सो, घटा घुमडी आय ॥
बकनि-पाँति सु भाँति, दमकत दामिनी दरसाय ।
त्रिविध पवनहि गवन की मनरमन लेत रमाय ॥
नवल निरमल नीर जमुना, बहत तरल तरंग ।
तहाँ कमल-कुल डहडहे, अग-अग रंग सुरंग ॥

जुग तटी नग जटि सुमन सो, अटी सौरभ संग ।
तीर-तीरन तरुन की, छबि भरी उदित उतग ॥
नवल चातक-सुक-पिकन की, मधुर धुनि सुनि मंद ।
कुहुक कै-कै केकि-केलिन, नृत्य करत सुछंद ॥
बजन बाजन विविध आली, सुमिल चाली चद ।
तैसि रमकनि झमकि गति मे, बढत अति आनद ॥
नवल नीरज-निलय आँगन, रच्यौ रग-हिंडोर ।
तहाँ झूलत फूलि-फूले, उभय नवल किसोर ॥
पुलकि पेमानंद मे, सुख बढ्यौ, नाहिन थोर ।
अंग-अगनि सहचरी छबि भरी, लेत हिलोर ॥
अरुन बरन पाटबरन की, फबि रही फहरानि ।
चपल चख चितवन लसी, मन बसी मृदु मुसकानि ॥
नवल डाडी कर गहै दोउ, भूमि-झुकि रस लेत ।
मृदुल अग मनोज मोहन, सुरत संग निकेत ॥
चद्रिका सी चटक मंजुल, मुकट अति सुख देत ।
किरत कबरी कुसुम रजन, गिरत गुंजिक उपेत ॥
नवल केलि-कला कुतूहल, रमत रहसि उमाहि ।
रूख लिएँ दोउ रसिक सन्मुख, सुख न बरन्यौ जाहि ॥
सखि-सहेली-सहचरी छबि निरखि दृग न अघाहि ।
हितू 'श्री हरिप्रिया' बिलसत, हुलसि हीयन माँहि ॥३९॥

*

वर्षा रूपक

(राग मलार)

आज अति सोभित है नँदलाल ।
उत गरजत बादर चहुँ दिसि ते, इत मुरली सब्द रसाल ।
उत राजत कोदंड इंद्र कौ, इत राजत बन-माल ।
उत सोभित दमकत दामिनि, इत पीत बसन गोपाल ॥
उत धुरवा, इत धातु विचित्र किए, बरसत अमृत-धार ।
उत बग-पाँति उडत बादर मे, इत मुकुता फल-हार ॥
उत दादुर स्वर कोकिल कूजत, इत बजत किंकिनी-जाल ।
'गोविंद' प्रभु कौ बानिक निरखत, मोह रही ब्रज-बाल ॥४०॥

(राग मलार)

देखो माई, सुंदरता कौ कंद ।
स्याम अंग घन घोरत मुरली, गाजत मंद ही मंद ॥
इंद्र धनुष बनमाल विराजत, गज-मुक्ताहल द्वंद ।
मानो बीच बनी बग-पगति केहरि-कामनि कंध ॥
मुकुट,स्याम कच, मिथिल बसन, मानो बादरन छायौ चंद ।
चमकत उर राधा सौदामिनि, चलत पवन दृढ छंद ॥
पीतांबर तन चित्र-विचित्रित अरुन काछिनी फंद ।
पुलकित प्रेम उमँगि-उमँगि मानो नौतन बरषानंद ॥
हित बरषत, फूलत वृंदाबन, तरलित तनय निकंद ।
'सूरजदास' रसिक ललितादिक, हित चातक सखि-वृंद ॥४१॥

*

सखी री, सावन दूल्है आयौ ।
चार मास कौ लग्न लिखायौ, बदरन अबर छायौ ॥
बिजुरी चमकै, बगुला बराती, कोयल सब्द सुनायौ ।
दादुर-मोर-पपैया बोलें, इंद्र निसान बजायौ ॥
हरी-हरी भुइ पर इंद्र-बधू सी, रंग बिछौना बिछायौ ।
'सूरदास' प्रभु तिहारे मिलन को, सखियन मंगल गायौ ॥४२॥

*

आज छवि स्यामा-स्याम निहारें ॥
बरषत प्रेम लाय भर निसि-दिन, गरजन नेह नियारें ।
मुकुता बग-पंगति, दादुर-धुनि नूपुर-चलनि सुढारें ॥
केकी चित्र पपीहा काँची, त्रिवली चहति सुतारें ।
नाभि सरोवर भरत न उपटै, अंग पुलिक तृन वारें ॥
विकसत पद्म मंद मुसकनि को, निरखहि नैन सुखारें ।
'रूपरसिक' सब जीवन जिय की, जिन ये रूप निहारें ॥४३॥

*

स्याम घन उमँगि-उमँगि इत आवै ।
क्रीट-मुकुट-कुंडल-पीतांबर, मनु दामिनि दरसावै ॥
मोतिन-माल लसत उर ऊपर, मनु बग-पंक्ति लखावै ।
मुरली-गरजि मनोहर धुनि सुनि, स्रवन मोर सचुपावै ॥
हम पर कृपा करी हरि मानो, नीर-नेह भर लावै ।
'रूप रसिक' ये सोभा निरखत, तन-मन नैन सिरावै ॥४४॥

वर्षा वियोग

(राग मलार)

देखि बदरिया सावन की ।
इकटक ह्वै ठाडी मग जोवत, मनमोहन के आवन की ।।
दामिनि दमक, घन गरजन लाग्यौ, मद-मद बरषावन की ।
तैसैई पीउ-पीउ रटति पपीहा, बिरहनि बिरह जगावन की ।।
कोकिल-कूक परी स्रवनन मे, बग-पगति दरसावन की ।
'श्री बिट्ठल गिरिधरन' लाल बिन, तन की तपत बढावन की ।।४५।।

★

सखि, ये पावस की रितु आई ।
नैन्ही-नैन्ही बुदन बरषत रिमझिम पवन चलत पुरवाई ।।
हरित भूमि पै अरुन देखियत, दामिनि अति दरसाई ।
तैसौई चातक रटत, स्रवन सुनि विकल होत अधिकाई ।।
अबई विचार सबै मिलि सजनी, ये निश्चै ठहराई ।
श्री विट्ठल गिरिधरन' लाल को, मिलै कुंज-बन जाई ।।४६।।

★

हरि बिनु बरसन आयौ पानी ।
चपला चमकि-चमकि डरपावत, मोहि अकेली जानी ।।
रात अँधेरी, हाथ न सूझै, मै बिरहिनि बिलखानी ।
हरीचद' पिय बिनु, बरषा मे हाथ मीजि पछितानी ।।४७।।

★

सखी री, घन तौ गरजन लाग्यौ ।
बरषत मेह पवन-फूहिन सो, अपुने मद अनुराग्यौ ।।
बोलत मोर, पपीहा बोलत, नयौ विरह तन जाग्यौ ।
हम बिछुरी बठी भवनन मे, इहै रहति रस-पाग्यौ ।।
ये सुख मानत अपनी रितु सो, हमरौ हियरा दाग्यौ ।
श्री विट्ठल गिरिधरन' बिन जानै, आवत इतही भाग्यौ ।।४८।।

★

निठुर पपैया बोल्यौ रतियाँ ।
हौ मेचक पर रही सेज पै, सुरत भई वै बतियाँ ।।
राग मल्हार कियौ काहू नें, देह जरति जिहि मतियाँ ।
'कृष्णदास' गिरिधरन मिलन की, नहि भूलत गुन-गतियाँ ।।४९।।

(राग मलार)

ए मा, कारी बदरिया बरसै ।
तसै पीउ-पीउ रटति पपीहा, सुनि-सुनि जियरा तरसै ॥
तैसिय चलति पवन पुरवाई, लागत तन अति करसै ।
तैसि बेलि लपटानी द्रुम ते, जानत देखि मोहि हरसै ॥
'श्री विट्ठल 'गिरिधर' कौ रूप ये, कैसे नैनन दरसै ।
ये औसर कैसेहु मिलिवे कौ प्रीतम अँग-अँग तरसै ॥५०॥

*

दामिनि दमकत जोबन-माती ।
गरजि-गरजि आवत इतही को, डोलत एती माती ॥
आपु रहति घन के सँग लागी, पहिलै उनई बिछुराती ।
हम बिछुरी बैठी जु भवन मे, तिनको हू न सुहाती ॥
याकौ तेज देखि मेरी सजनी, काँपत है मेरी छाती ।
'श्री विट्ठल गिरिधरन' लाल तें, ये नहि नैक सँकाती ॥५१॥

*

बोले माई गोवरधन पै मुरवा ।
तैसिय स्यामघन मुरलि बजाई, तैसेइ उठे झुक धुरवा ॥
बडी-बडी बूँदन बरषन लाग्यौ, पवन चलत अति झुरवा ।
'सूरदास' प्रभु तुम्हरें मिलन को, निसि जागन भयौ भुरवा ॥५२॥

*

ये रितु आई बरपन, पिय बिन हियरा धरकै ।
घन की गरज अरु लरज मोरन की, सुनि-सुनि छतियाँ दरकै ॥
कौन भाँति करूँ, कैसै-धीरज धरूँ, पिय-मूरति मेरे हियमे अरकै ।
उनकी मिलन रही मेरे मन, रोम-रोम मे भरकै ॥
तैसिय घटा अँधियारी, नैसिय रनकारी, तैसौई पपीहा पिउ-पिउ ररकै ।
'श्री विट्ठल गिरिधरन' की विरहिनी, निसि-दिन ये विधि करकै ॥५३॥

*

बदरिया ! तू कत ब्रज पर घोरी ।
असलन साल सलावन लागी, बिधिना लिख्यौ बिछोरी ॥
रहो जु रहो, जाओ घर अपने, दुख पावत है किसोरी ।
'परमानंद' प्रभु सो क्यो जीवै, जाकी बिछुरी जोरी ॥५४॥

वर्षा–विनय

जय जग–जीवन जलद! नवल–कुलहा–उलहावन।
विस्व वाटिका विमल बेलि–बन बारि बहावन॥
जीवन दै बन, बनसपती मे जीवन लावन।
गरु ग्रीषमपन–दरप दलन, मन मोद मनावन॥
जय मनभावन, बिपत–नसावन, सुख सरसावन।
सावन को जग टेलि केलि जल चहुँ बरसावन॥
जय घनस्याम ललाम प्रेम–रस उरहि ढ़ढावन।
फूल भरी बसुधा सिर सारी हरी उढावन॥
बाँधि मडलाकार पुरंदर कौ धनु पावन।
तरजि दिखावन गरजि, लरजि मन भय उपजावन॥
मनकावन गन पवन, जोति जुगनू चमकावन।
ठनकावन घन सघन, दामिनी–दुति दमकावन॥
पठई सदा धरावर वावन, कृषी जुतावन।
घोर घमड सुनावन, बलकर अनल बुतावन॥
निज सुखमा दरसावन, गावन मनहि लगावन।
सीर समीर रसावन, अंग उमग जगावन॥
तापन–सतत सतावन, कृषकन जीय जुरावन।
अतुलित जोम जतावन, युवजन हीय चुरावन॥
झर लावन, बुदबुग उठावन, भुवि लरजावन।
अगनिन अमित अनूप कीट–कुल–बल सरजावन॥
उमगावन सर–सरित, उमँग उल्लास गुँजावन।
पपियन प्यास बुझावन, जग की आस पुजावन॥
जयति! नबेली अलबेली, झूला झुलवावन।
मधुर मनोरजन कजरी–धुनि कलित सुनावन॥
सोक–समूह भुलावन जय! छिति–छटा सुहावन।
बादर बलहि बुलावन, पावस परम सुहावन॥
अद्भुत आभावंत अग अति अमल अखडत।
घुमडि–घुमडि घन घनौ, घूम घिरि घोर घमडत॥
कारे कजरारे मतवारे धुरवा धावत।
सुख सरसावत, हिय हरसावत, जल बरसावत॥

यमुना ढरकि करारनि दै-दै ढका ढहावति ।
प्रेम-पगी रज-रँगी लखहु जनु झूमत आवति ॥
मेह थमत चुहकार चहचही करत चाव चित ।
फर फराय निज परन फिरत पछी गन प्रमुदित ॥
धोये धोये पात तरुन के हरसावत मन ।
नैक झकोरत डार झरत अनगिनत अबु-कन ॥
सुखद सुरीलौ गामन मे ललना गन गावन ।
भरि उछाह घर सो तिन आवन झूलन जावन ॥
पवन उडत उर के पट को झटपटहि सँभारन ।
मजुल लोल कलोलनि बालन विविध मल्हारन ॥
मन-मयूर को करसत, दरसत बरसत बादल ।
तरसत तरुनि नबेलिन बेलिनि फुरत नवल दल ॥
कमल--केतकी-जुही-कुटज केसर प्रिय प्रफुलित ।
कुसुमित कलित कदंब करत बन उपवन सुरभित ॥
कोयल करत किलोल, ललित रूखन चहुँ लखि-लखि ।
मंद-मद चलि मधुप पियत मकरदहि चखि-चखि ॥
बरन-बरन के बादर सो कहुँ परति फुआर अति ।
भीनी-भीनी गध गहति, वर बहति पवन गति ॥
देखहु मनहि प्रसन्न ललित मृग छौननि आनन ।
डोलनि तिनकी कानन, करि ऊपर कौं कानन ॥
रज विहीन पतरी लतिकन को देखहु लहकन ।
घूँघट पट सो मुख निकारि चाहत जनु चहकन ॥
झरत द्रुमन सो सुमन सौरभित डारनि हलिहलि ।
मनहुँ देत बनथली तोहि स्वागत पुष्पांजलि ॥
निरखि चहूँ छवि पुज लगत जनु यह मनभावन ।
कुज-बिहारी कुंजन सो कढि चाहत आवन ॥
यद्यपि कवियन गाई, पाई ताकी थाह न ।
मन ही मनहि समाई, आई नहि अवगाहन ॥
रह्यौ अछूतौ गुन गन हू सो, जब तव गुन धन ।
कहा हमारौ बूतौ, देखहु जासो गुनि मन ॥
तउ तव सोभा-सुखद, विसद-सुठि पद-मय दरपन ।
करत 'सत्यनारायन' जन तुम्हरे ही अरपन ॥५४॥

वर्षा-वर्णन

मल्लिकान मंजुल मलिंद मतवारे मिले,
मंद-मंद मारुत मुहीम मनसा की है।
कहै 'पद्माकर' त्यों नदन-नदीन नित,
नागरि नबेलिन की नजर नसा की है॥
दौरत दरेरौ देत दादुर सु दुंदै दीह,
दामिनी दमकत दिसान मे दसा की है।
बद्दलनि बुंदनि बिलोकौ बगुलान बाग,
बंगलान बेलिन बहार बरषा की है॥५६॥

*

बाटिका बिहंगन पै, बारिगा तरंगन पै,
वायु वेग गगन पै बसुधा बगार है।
बाँकी वेनु तानन पै, बगला बितानन पै,
बेस औंध पानन पै, बीथिन बजार है॥
वृंदावन-बेलिन पै, बनिता नबेलिन पै,
'ब्रजचंद' केलिन पै, बंसीबट मार है।
बारि के बनावन पै, बद्दलन बाँकन पै,
बिज्जुली बलाकन पै, बरषा बहार है॥५७॥

*

दामिनी दमंकन ते, झिल्ली की झमंकन तें,
दादुर असकन तें, उमँगि उई परै।
बादर तें, बन ते, बहार बरही ते, बेस-
बेलिन तें, फूलन ते, फहरि फुही परै॥
जल की जलूस जेब, जोबन जमाजम तें,
जुगुनू जमक हरिया ते दुई परै।
पोहसी पहारन ते, पारावार पारन ते,
पौन तें नवीन रितु पावस चुई परै॥५८॥

*

हहरावत नील पयोदन तें, नभ मे घन घोर घटा घहरावत।
छहरावत बूँद झलाझल, दामिनि भामिन सी नभ मे लहरावत॥
छिटकावत चारु छटा छिति पै,बर दीप्ति दिगंतन मे बगरावत।
झमकावत रिम-झिम रिम-झिमकै, झुकिझूमत लूमत,पावस आवत॥५९॥

बोलत मयूर हम गहै ये पहारन मे,
दादुर कहत हम ऐहे खंदरान मे ।
चातक पुकारै पीउ-पीउ द्रुम-डारन मे,
झिल्ली झमकानी पिक प्रेम मदरान मे ॥
'ठाकुर' कहत ऐसी पावस प्रभा मे, दुख-
दैन बिरहीन, आजु आली गदरान मे ।
छम छम-छम बाजै, छम-छम छेई-छेई,
थेई-थेई चचला नॅचत बदरान मे ॥६०॥

*

झूम-झूम चलत चहूँघा घन घूम-घूम,
लूम-लूम भूमि छ्वै-छ्वै धूम मे दिखात है ।
तूल के से पहल, पहल पर उठे आवे,
महल—महल पर महल सुहात है ॥
'ग्वाल कवि' भनत, परम तम सम के तें,
छम-छम-छम डारे बूँदे दिन-रात है ।
गरज गये हे एक, गरजन लागे देखो,
गरजत आवें एक, गरजत जात है ॥६१॥

*

दिसि-बिदिसनि ते उमडि मढि लीन्हौ नभ,
छेडि दीनौ धुरवा जवासे जूथ झरिगे ।
डहडहे भए द्रुम रंचक हवा के गुन,
कहूँ-कहूँ मुरवा पुकारि मोद भरिगे ॥
रहि गये चातक जहाँ के तहाँ देखत ही,
'सोमनाथ' कहै बूँदा-बूँदी हू न करिगे ।
सोर भयौ घोर, चहुँ ओर महि मडल मे,
आए घन, आए घन आइ कै उघरिगे ॥६२॥

*

सुनि कै धुनि चातक-मोरन की, चहुँ ओरन कोकिल-कूकन सो ।
अनुराग भरे बन-बागन मे, हरि रागत राग अचूकन सो ॥
'कवि देव' घटा उनई जु नई, बन-भूमि भई दल-दूकन सो ।
रॅगराती हरी हहराती लता, झुकि जाती समीर के झूकन सो ॥६३॥

बीत गयौ ग्रीषम, बितीत भयौ ताप-दाप,
बार-बार सीतल समीर तरजै लगे ।
पथिक पधारे निज गेह मे सनेह भरे,
हरे-हरे पात वारे तरु लरजै लगे ।।
दमकि दिमाक तें दुरित दुति दामिनी की,
मुदित मयूर मन मौन बरजै लगे ।
घरी-घरी घेरि-घेरि घुमडि घमड भरे,
घ.घ से घनेरे घन घोर गरजै लगे ।।६४।।

*

कोकिल कदंबन की डार पै कुहूकै कल,
कुंजन मे बौरन के पुज दरसै लगे ।
बिसद बलाकन की पाँति भाँति-भाँति चारु,
चाहि चित चातक पियासे तरसै लगे ।।
मंजुल कलापिन की मडली भली है बनी,
सुखद सुसीतल समीर सरसै लगे ।
चारो ओर चपला चमाकै चख चोरि-चोरि,
मद-मद बारिद के वृंद बरसै लगे ।।६५।।

*

प्यारी आउ छात पै, निहारि नये कौतुक ये,
घन की छटा तें खाली नभ मे न ठौर है ।
टेढी, सूधी, गोल औ चखूँटी, बहु कौनवारी,
खाली, लदी, खुली, मुँदी, करे दौरादौर है ।।
'ग्वालकवि' कारी, धौरी, घुमरारी, घहरारी,
धुरवारी, बरसारी, झुकी तौरातौर है ।
ये आई, वो आई, ये गई, वो गई,
और ये आई, उठी आवत वे और है ।।६६।।

बहु बेग बढे गदले जल सो, तट रूखि उखारि गिरावती है ।
करि घोर कुलाहल व्याकुल ह्वै, पल कोर-करारन ढावती है ।।
मरजादहि छाँडि चली कुलटा सम, बिभ्रम भौर दिखावती है ।
इतराति उतावरी-बावरी सी, सरिता चढि सिंधु को धावती है ।।६७।।

पावस के प्रथम पयोद की परत बूँद,
औरै ओप उमडि अकास छिति छ्वै रही ।
रंग भयौ बूढनि, अनूढनि अनग भयौ,
अंग उठि आनँद तरंग दुख ध्वै रही ॥
सूहे साजि सुघर दुकूल सुख-फूलि-फूलि,
चौहरी अटा पै चढी चद-मुखी ज्वै रही ।
धूम सुखमा की, झूम-झूम अलि-पुंजन की,
अंबन की डार ते कदबन पै ह्वै रही ॥६८॥

*

राजै रस मे री तैसी बरषा समै री चढी,
चचला नँचै री, चकचौधा कौधा बारै री ।
व्रती व्रत हारै हिए, परत फुहारै, कछू-
छोरै, कछू धारै, जलधर जल-धारै री ॥
भनत 'कविद' कुज भौन पौन सौरभ सो,
काके न कँपाइ प्रान परहथ पारै री ।
काम के तुका से, फूल डोलि-डोलि डारै, मन-
औरै किए डारै, ए कदबन की डारै री ॥६९॥

*

छाई सुभ सुखमा सुहाई रितु पावस की,
पूरब मे पच्छिम मे उत्तर उदीची म ।
कहै 'रतनाकर' कदब पुलके है बन,
लरजै लवगलता ललित बगीची मे ॥
अवनि-अकास मे अपूरब मची है धूम,
भूमि से रहे है रुचि सुरस उलीची मे ।
हिरकि रही है इत मोर सो मयूरी, उत-
थिरकि रही है, बिज्जु बादर-दरीची मे ॥७०॥

बरसत घन, गरजत सघन, दामिनि दिपै अकास ।
तपति हरी, सफलौ करी, सब जीवन की आस ॥
सब जीवन की आस, पास नूतन तिन अनगन ।
सोर करत पिक-मोर, रटत चातक बिहग गन ॥
गगन छिपे रवि-चंद, हरष 'सेनापति' सरसत ।
उमँगि चले नद-नदी, सलिल पूरन सर बरसत ॥७१॥

मान गढ़ घेरा होत, गरज अरेरा होत,
दादुर दरेरा होत, जेरा होत जाम कौ।
पिक भटभेरा होत, धकपक हेरा होत,
गरब अरेरा होत, बेरा होत साम कौ॥
पवन सरेरा होत, धनुष धरेरा होत,
बदन गरेरा होत, खेरा होत बाम कौ।
बीजुरी उजेरा होत, कौधा चकफेरा होत,
घनन कौ घेरा होत, डेरा होत काम कौ॥७०॥

*

ग्रीषम बिताय, ताय रंग, रग बरसा के,
बरसि-बरसि वारि सरस सोहाए है।
'द्विज बलदेव' बल बागन बहार वर
बाजत है बाजने, विहंग बन गाये है॥
विसद बसन, बक बिलग-बिलग व्योम,
बेलिन-बितान वनिता अतन ताये है।
बिज्जुल बिपुल लखि, बरही बोलत बैन,
मैन के बिरादर, ये बादर ह्वै आये है॥७३॥

*

घन घहरान लागे, अग सहरान लागे,
केकी कहरान लागे, बन के बिलासी जे।
बोलि-बोलि दादुर दिरादर सो आठों याम,
ग्रीषम को दैन लागे बिरह-बिदा सी जे॥
'ठाकुर' कहत देखो पावस प्रबल आयौ,
उडत दिखान लागे, बगुला उदासी जे।
दावे से, दबे से, चहुँ ओरन छये से बीर,
बसि-बसि रहन लागे बदरा बिसासी जे॥७४॥

*

पिक बोलत, डोलत मारुत है, लतिका द्रुम जानि नये बन ये।
उलहे महि अंकुर मजु हरे, बगरे तहँ इंद्र-बधू गन ये॥
अस पाय 'किसोर' समै रस में, कस होइ न मैन मई मन ये।
चित चैन चये, मन आन छये, अब देख नये उनए घन ये॥७५॥

घहरि-घहरि घेरि-घेरि घोर घन आए,
छाए घर-घरन घुमोलै घने घूमि-घूमि ।
डारे जल धारे, जोर जमन जमाति जोरि,
करै ललकारें बार-बार व्योम जूमि-जूमि ॥
'गिरिधरदास' गिरिराज के सिखर सब,
चपल चहूँवा लै रहे है चारु चूमि-चूमि ।
झूलि-झूलि झहरि, झहरि-झरि झेलि-झेलि,
झपकि-झपकि झपि, झुकि-झुकि, झूमि-झूमि ॥७६॥

★

झंझा झकझोरन सो, धूकै चहुँ ओरन सो,
पावस-झकोरन सो, अमी सौ छन्यौ परै ।
तरुनाई तो न सो, हिय की हिलोरन सो,
विथा-सिंधु बोरन सो, तन हू हन्यौ परै ॥
बोलन मरोरन सो, दादुर पिक-सोरन सो,
हित 'मोतीराम कवि' कैसे कै भन्यौ परै ।
बादर की कोरन सो, जल की बँधोरन सो,
मोरन के सोरन सो, मैन उफन्यौ परै ॥७७॥

★

कूकै लगी कोकिलैं कदंबन पै रातो-दिन,
मोर-पिक सोर हू सुनात चहुँ पास है ।
मंद-मंद गरजि घनेरी घटा घूमि-घूमि,
बहत समीर धीर संयुत सुबास है ॥
जित-तित नारी-नर गावे, सुख पावे अति,
झूलत हिंडोरे लाल बाढ़त हुलास है ।
हिय तरसावन को, काम सरसावन को,
बुंद बरसावन को, सावन सुभास है ॥७८॥

तड़पै तड़िता चहुँ ओरन तें, छिति छाइ समीरन की लहरै ।
मदमाते महा गिरि सृंगन पै, गन मंजु मयूरन के कहरै ॥
तिनकी करनी बरनी न परै, सो गरूर-गुमानन सो गहरै ।
घन ये नभ मंडल तें छहरै, घहरै कहुँ जाय, कहूँ ठहरै ॥७९॥

पौन के झकोरन कदंब झहरान लागे,
तुंग फहरान लागे, मेघ मंडलीन के ।
भनत 'कविंद' धरा सारन भरन लागे,
कोस होन लागे बिकसित कदलीन के ॥
?टज निवासिन को त्रास उपजन लागे,
?पुट खुलन लागे, कुटज-कलीन के ।
नॉच बरहीन के, अदीन स्वर झिल्लिन के,
दीन भए बदन मलीन बिरहीन के ॥८०॥

*

कूकै लगी कोयलैं कदंबन पै बैठि फेरि,
धोए-धोए पात हिलि-हिलि सरसै लगे ।
बोलै लगे दादुर, मयूर लगे नॉचै फेरि,
देखिकै सयोगी जन हिय हरषै लगे ॥
हरी भई भूमि, सीरी पवन चलन लागी,
लखि 'हरिचंद' फेरि प्रान तरसै लगे ।
फेरि झूमि-झूमि बरषा की रितु आई घेरि,
बादर निगोरे झुकि-झुकि बरसै लगे ॥८१॥

*

मद मयी कोयल, मगन ह्वै करत कूकै,
जल मयी मही, पग परत न मग मे ।
बिज्जु नॉचै घन मे, बिरह हिय बीच नॉचै,
मीचु नॉचै ब्रज मे, मयूर नॉचै नग मे ॥
'श्रीपति सुकवि' कहै सावन मे आवन-
पथिक लागे, आनंद भयौ है अँग-अँग मे ।
देह छायौ मदन, अछेह तम छिति छायौ,
मेह छायौ गगन, सनेह छायौ जग मे ॥८२॥

*

घेरि घटा घन कारी चहूँ दिसि, सोर कठोर रहे कर दादुर ।
बदि छटा छबि छाई हरी-भरी, भुम्मि लतानन की बिछी चादर ॥
आदर सो रहे कूक सिखी, निसि कारी अँध्यारी करै हिय कादर ।
ताल-तमालन जाल बिसाल, रसालन पै उनए घने बादर ॥८३॥

उमडि-उमडि घुमडत आग घने घोर,
देत है निरादर नगारन की धूम को ।
कहत 'किसोर' चारो ओरन ते जोरावरी,
जोरें देत जुर बिजुरीन वारी घूम को ॥
झाँझ कर झझा तैसी झुकि-झुकि झोरै देत,
झालरे तमालन की झाप-झाप झूमि को ।
जलज को जोरै देत, जलद को फोरै देत,
जलन को टोरै देत, बोरै देत भूमि को ॥८४॥

*

हरित-हरित हर लेत मन बेली बन,
सघन घटान घन घिरि घहराने है ।
बोले चहुँ ओर, कीर-कोकिल, पपीहा-मोर,
कुज-कुज गूजै अलि-पुज मनमाने है ॥
अकुर बिछाय हित कीन्ही मरकत मनि,
तामै इद्र-बधू जाल लाल सब जाने है ।
दिसि-दिसि देखि दुति चाह मनभावन की,
सावन की सब्जी मे सब जी भुलाने है ॥८५॥

*

धावन घुँरारे धुरवान की निहारो पिय,
चातक-मयूर-पिक आनँद मगन भौ ।
'श्रीपति' हो सावन सोहावन के आवन मे,
बिरह सुभट ते बियोगिनी कौ रन भौ ॥
जल मयी धरनि, तिमिर मयी देह दीह,
घन मयी गगन, तडित मयी घन भौ ।
छवि मयी बन भौ, बिलास मयी तन भौ,
सनेह मयी जन भौ, मदन मयी मन भौ ॥८६॥

*

केकी की कूक, पिकी की पुकार, चहूँ दिसि दादुर दुंदि मचायौ ।
भूमि हरी, चमकै चपला, अरु स्याम घटा जुरि अंबर छायौ ॥
ऐसे मे आवन होइ 'लछू', अबला लखि लाल संदेस पठायौ ।
बावन कौ पगु भौ बिरहा, सो अहो मनभावन सावन आयौ ॥८७॥

घहरात घमड केकी-झलकै, लहरात सुहात बने बन ये ।
उलहे महि अंकुर मंजु हरे, बगरे तहाँ इंद्र-बधू गन ये ॥
अस जानि 'किसोर' समै रस मे, कस हौं इनमें नमई मन ये ।
चित चैन चये, नभ आनि छये, अबै देखु नये उनए घन ये ॥८८॥

*

दुख दूर भयौ अरी ग्रीषम कौ, करिवे पिक-चातक गान लगे ।
चपला चमकै लगी चारो दिसा, निसि मे जुगुनू दरसान लगे ॥
'गिरिधारन' पावस आवत ही, बक-वृंद अकास उडान लगे ।
धुरवा सब ओर दिखान लगे, मुरवान के सोर सुनान लगे ॥८९॥

*

धूम से धुँधारे, कहूँ काजर से कारे, ये-
निपट बिकरारे, मोहि लागत सघन के ।
'श्रीपति' सुहावन, सलिल बरसावन,
सरीर मे लगावन, बियोगिन तियन के ॥
दरजि-दरजि हिय, लरजि-लरजि करि,
अरजि-अरजि प म[illegible]र के
बरजि-बरजि अति, तरजि-तरजि मोपै,
गरजि-गरजि उठै बादर गगन के ॥९०॥

*

झिल्ली गन की झनकार बढी, मदमाते मयूर महा धुनि टेरत ।
देत दोहाई मनोज बहादुर, दादुर दु दि दिसान दरेरत ॥
ऐसे मे कैसी भई है 'नरायन', नैक इनै न चितै हँसि हेरत ।
बिज्जु-छटा उछटै री पटा सम, देखि अटा तें घटा घन घेरत ॥९१॥

*

चहुँ ओरन ज्योति जगावै 'किसोर', जगी प्रभा जीवन जूटी परै ।
तेहि ते झरि मानो अगार अनी, अवनी घनी इंदु-बधूटी परै ॥
चहुँ नाँचै नटी सी, जराव जटी सी, प्रभा सो पटी सी, न खूटी परै ।
अरी एरी हटापटी बिज्जु छटा, छटी छूटी घटान तें टूटी परै ॥९२॥

*

छिन ही छिन दौर दुरै दरसै, छवि-पुंज 'किसोर' जमासे करै ।
अति दीन बिना पिय जानि जिए, बिरहीन हिए बरमासे करै ॥
अरु देखी भई कबहूँ थिर ह्वै, घन को हरि की उपमा से करै ।
चहुँघा तें महा तरपै बिजुरी, तम-तोम मे आजु तमासे करै ॥९३॥

वर्षा-विलास

सीरी-सीरी बही, चहुँ ओर तें बयारि बडी,
घटन बगारि बडौ आसरौ सौ दै रह्यौ।
याही हेतु छोडिकै नदीन-नद एते दिन,
तेरी आस गहै, तेरी ओर तकतौ रह्यौ॥
नीरद ! तू आपुनौ विचारि देखु नाम 'राम'
कहा ऐसे औसर मे ऐसौ हठ लै रह्यौ।
गरजि-गरजि हुलसायौ हियौ चातक कौ,
बुंदन के समय मे निमुंद मुख कै रह्यौ॥६४॥

★

मेचक कबच साजि, बाहन बयारि बाजि,
गाढे दल गाज रहे दीरघ बदन के।
'भूषन' भनत समसेर सोई दामिनी है,
हेतु नर कामिनी के मान के कदन के॥
पैदर बलाका, धुरवान के पताका गहै,
घेरियत चहुँ ओर सूने ही सदन के।
न करु निरादर, पिया सो मिलि सादर,
ए आए बीर बादर, बहादर मदन के॥६५॥

★

कैसै चित चोरै, गुन पवन झकोरै, मोर-
अति बरजोरै, सोरै सुखमा बदन के।
'द्विज बलदेव' बारि बानि कै बसन बेस,
बीजुरी लै धाये है, बिरादर मदन के॥
तू ही जस लीजै, दरसाय नेक दीजै,
अधरामृत को पीजै, मोद दाडिम-रदन के।
प्रानप्रिय आवन, अनंद अति छावन, ये-
आयौ बीर सावन, सोहावन सदन के॥६६॥

★

'कवि बेनी' नई उनई है घटा, मुरवा बन बोलत कूकन री।
छहर बिजुरी छिति मडल छ्वै, लहरै मन मन भभूकन री॥
पहिरो चुनरी चुनिकै दुलही, सग लाल के झूलिये झूकन री।
रितु पावस योही बितावती हो, मरि हौ फिरि बावरी हूकन री॥६७॥

साजै सोर, बादुर समाजै जोर चहूँ ओर,
बाजै रितुराज के बधाई के तुतुरवा ।
तैसी मन तीर सी बयार बहै सीरी-सीरी,
मद-मंद बोलै मदमाते बन मुरवा ॥
गवन की तुम्है परी, आजु इहि समै हरी,
हरी-हरी भूमि भई दूब के अँकुरवा ।
बूँदै बरसावन, पिया के परसावन,
सनेह सरसावन, ये सॉवन के धुरवा ॥९८॥

★

लाग्यौ ये सावन, सनेह सरसावन,
सलिल बरसावन, पटाधर टटान को ।
गोरी गाम-गामन, लगी है गीत गावन,
हिंडोरौ भूम लावन, उठान छवै अटान को ॥
भनत 'कविंद' बिरही जनन सतावन सो,
देखो चमकावन री, बिज्जुल छटान को ।
प्यारे परौ पाँयन, न लीजै नाम जावन कौ,
देखो आजु आवन सुहावन घटान को ॥९९॥

★

आई रितु पावस, असाढ धराधर बाढि,
ललित कदबन लतान ललिताई है ।
कहत 'किसोर' जोर दाहन दरप जैसी,
तैसिऐ तडप तडिता की अति छाई है ॥
छोड़ै को न मान, रति सो बगोडै को न आली,
उनई घटा की छिति छबि अति छाई है ।
मेघन की झुकन, झकोरन प्रभंजन की,
झिल्लिन की झनक, झलान की अवाई है ॥१००॥

★

आवते गाढ असाढ के बादर, मो तन मे अति आगि लगावते ।
गावते चाव चढे पपिहा, जिन मोसो अनंग सो बैर बधावते ॥
धावते बारि भरे बदरा, 'कवि श्रीपति जू' हियरा डरपावते ।
पावते मोहि ना जीवते प्रीतम, जो नहि पावस मे घर आवते ॥१०१॥

प्यासे पपीहन के कुल पै, जल-जाँचना त्रास भरी करव यिल ।
वारि के भार नये उनए झुकि-झूमि छटा अलबेली दिखावत ॥
बोरि सुधा जल-सो बसुधा-तल, स्रौन मनोहर घोर सुनावत ।
प्यारी अहो, किमि बादल ए, गति मद महादल बाँधि कै धावत ॥१०२॥

★

नाँचत कलापी जूह संग लै कलापिनि कौ,
झिल्लिन की भीर झनकार कै जमक रही ।
दादुर करत सोर, घोर चहुँ ओरन ते,
देख बक-पाँति बिरहीन को धमक रही ॥
'द्विज कहै' ए री ! कैसौ समय सुहावन है,
मोहन सो मिलि, लखि लतिका लमकि रही ।
छाइ-छाइ मेघ रहे चावन सो व्योम माँहि,
धाइ-धाइ चहुँ ओर चपला चमकि रही ॥१०३॥

★

बादर रेख उठी नभ मे, पुनि फैलि गई अति आतुरताई ।
स्याम तमाल ते भूमि भई, तम पुज छये तिहि औसर आई ॥
घोर घटा घन वार लगी, अँधियार भयौ, बिजुरी अरराई ।
लाय हिए हरि को 'नंदराम', डराय उठी अबला छितिराई ॥१०४॥

★

भूली किधौ ह्यां की, पीर बाढी है उहाँ की,
भरै नैन झरना की, सुधि आऐ उर वाकी है ।
चचला चलाकी, करै नट की कला की,
तैसी दौर बदरा की, औ धुकार धुरवा की है ॥
है न कछु बाकी औधि, आसरौ निसा कौ,
तामे आई परै डाकी, ये झकोर पुरवा की है ।
टेर पपिहा की करै, सेल समता की डरै,
करै उर झाँकी, ये पुकार मुरवा की है ॥१०५॥

★

झूमि रहे घन घूम घने, तलि बोरत भूमि मनो चहुँधा घिरि ।
है अफसोस न, रोस न वासै, विन हौस लता रही रूखन सो भिरि ॥
'बेनी' पपीहन-मोरन हू हहरानन दुदि करैं बहुतै फिरि ।
ज्यो डरपै, तड़पै बिजुरी, परै काहू बियोगिनि पै न कहूँ गिरि ॥१०६॥

छाय रह्यौ तम कारी घटान यों, आपनौ हाथ पसारि लखै को ।
अंग रचे मृग के मद सों, मनि-मरकत भूषन साजि अँकै को ॥
नील निचोलन की छबि छाजति, ज्यों भ्रमरावली सोभ गहै को ।
सावन की निसि साहस कै, निकसी मनभावन के मिलिवे को ॥१०७॥

*

तीर है न बीर कोऊ, करै न समीर धीर,
बाढ़ौ स्रम नीर, मेरौ रह्यौ न उपाउ रे ।
पखा है न पास, एक आस तेरे आवन की,
सावन की रैनि मोहि मरत जियाउ रे ॥
'संगम' मैं खोलि राखी खिरकी तिहारे हेत,
होत हौं अचेत, मेरी तपनि बुझाउ रे ।
जानु जानि मानो कौन, कीजिऐ उताल गौन,
पौन मीत मेरे भौन, मंद-मंद आउ रे ॥१०८॥

*

नई नोखी भई हौ कहा तुम हो, उमही रहती मति दीन्ही दई ।
दई कान्ह की बीरी न लेति भटू, तुम्है ये बतियाँ कहो को सिखई ॥
खई मे न बड़ौ भयौ कोऊ कहूँ, छिनही अति ही रिसि पूरि गई ।
गई भार मे नाँही, न नाँही करो, लखो कैसी घनेरी घटा उनई ॥१०९॥

*

अंबुज तटान, फैनि फूटत फटान जैसे,
धावत नटान, छबि छाई है छटान की ।
चातक रटान, नदी-नद उपटान, जल-
जंगल बटान, महा मारुत कटान की ॥
भीजत पटान, बुंद चुवत लटान 'पूषी',
तन लपटान, मानो मदन घटान की
पीव के तटान, ओढ़ै कुसुंभी पटान, अरु-
ठाढ़ी है अटान, लेत लहरैं घटान की ॥११०॥

*

काहे को रूसत पावस मे, इन बातन तोहि न कोऊ सराहै ।
पौन लगै लहराती लता, तरु-कुंज कदंब मे केकी कराहै ॥
बोल सुहावने चातक के लगै, इंद्र-बधू गन धाई धरा है ।
बोलि पठाइ उतै उनको, उनए नये देखि नये बदरा है ॥१११॥

वर्षा-संयोग

घन घिरि आयौ, बन सघन तिमिर छायौ,
रैन को डरेगे लेखि देखि यो द्दगन ते ।
नंद जू कहत वृषभान-नदिनी सो,
नदनंदनहि घरै जाहु लै कै बेगि बन ते ।।
गुरु के बचन पाय, प्रेम की रचन भरे,
चले कुज तीर तरु देखिकै बिपिन ते ।
यमुना के कूल मे, रहसि रस केलि मयी,
ऐसे राधा-माधौ बाधा हरहु मेरे मन ते ।।११२।।

*

घने घन घेरि-घेरि, उमडि-घुमडि आए,
ऐसौ तम छायौ, मानो भूमि परसत है ।
चपला चमकि चहूँ ओर चारु चोरै चित्त,
तामे बक-पाँतिन के पुंज दरसत है ।।
इतै भरि लागी, उतै अनुरागी भए दोऊ,
कैसे हाव-भावन मे मैन सरसत है ।
'सूरज सुकवि' आजु लखे पिय-प्यारी सग,
लाल बगला मे लाल रंग बरसत है ।।११३।।

*

झूमि-झूमि आये घूमि घने घनस्याम आली,
कूकै काकपाली काम पाली बरसात है ।
ऐसे समय कुज-भौन कीरत-किसोरी तौन,
सखिन समूह साथ सुख सरसात है ।।
कहा कहौ तोहि, ताहि देखि आई तैसे भटू,
कौतुक विलोकि 'हठी' हिय हरषात है ।
यमुना के तीर, बहै सीतल समीर तहाँ,
बीर बलबीर जू कौ बलि-बलि जात है ।।११४।

*

राधा औ माधौ खडे दोउ भीजत, वा झरि मे झपकै बन माँही ।
'बेनी' गये जुरि बातन मे, सिर पातन के छतना, गल बाँही ।।
पामरी प्यारी उढ़ावत प्यारे को, प्यारौ पितंबर की करै छाँहीं ।
आपुस मे लहा छेह मे छोह मे, काहू को भीजिबे की सुधि नाँही ।।११५।।

कचन-अटा पै बैठी जोवत घटा है प्यारी,
बिज्जु की छटा सी सखी सेवत सिहाती है ।
लीन्हे कर बीनै एकै गावती प्रवीनै 'हठी',
राग-रागनीन के प्रमान दिखराती है ॥
राधा-मुख-चद की मरीचै ब्रजचद ए,
उमड कै प्रचड ह्वै कै ऐसी सरसाती है ।
मड खड मडल को, दाबि कै अखंडल को,
फोर चद-मडल को, छोर कढि जाती है ॥११६॥

*

छोटे-छोटे कैसे तृन अकुरित भूमि नए,
जहाँ-तहाँ फली इद्र-बधू बसुधान मे ।
लहकि-लहकि सीरी डालति बयारि, और-
बोलत मयूर मात ललित लतान मे ॥
धुरवा धुकारै, पिक-दादुर पुकारै,
बक बाँधिकै कतारै, उड़े कारे बदरान मे ।
अस भुज डारै, खडे सरयू किनारै,
'प्रेमसखी' वारि डारै, देखि पावस बितान मे ॥११७॥

*

प्यारे ही के काज प्यारी हित काज सारै दुहुँ-
दुहुँन सिगारै, तन नीक चद मट सो ।
यमुना के नीर तीर हँसि-हँसि बातै करे,
मन अटकायौ कल कोकिला की रट सो ॥
एतै 'रघुराई' घन-घटा घहराय आई,
बरसन लाग्यो नैन्हीं बूदन के ठट सो ।
जौलो प्यारौ प्यारी को उढायौ चहै पीत पट,
तौलौ प्यारी प्यारौ ढाँप लीन्हो नील पट सो ॥११८॥

*

लेहु जू गेह कौ जैबौ कहा, इत आयौ है नेह सो मेह उनैहै ।
हौ न तौ इत रैहौ कहाँ, पिय भीजत बूँदन कौन छपैहै ॥
'शेखर' ऐसी कहो न तिया, छपिऐ छतियाँ मे भलौ रग रैहै ।
रग तिहारौ रहेगौ लला, पै हमारी तौ चूनरी कौ रग जैहै ॥११९॥

रस रग भरे, दोऊ उज्जल अटा पै खडे,
हरै-हरै हेरत सुहेत हिए पटि उठै ।
दमकि-दमकि जात दामिनी चहूँधा चाह,
चमकि-चमकि चूनरी मे अंग ठटि उठै ।।
कहै 'ऋपिनाथ' मोर-दादुर करत सोर,
जोह-जोह जमकि पपीहा पीउ रटि उठै ।
घुमडि-घुमडि घन घिरि-घिरि आवै मोद,
उमडि-उमडि दोऊ छतियाँ छपटि उठै ।।१२०।।

*

सावन के मास, मनभावन के सग प्यारी,
अटा पर ठाढी भई घटा अँधियारी मे ।
दामिनी के चोखै चकचौंधे दृग 'कविनाथ',
छबिन मो मुरि, दुरै पिय अकवारी मे ।।
कोटि रति वारौ, ऐसी राधा जू के रूप पर,
रभा रक कहा, सक सची के निहारी मै ।
पागि रही रस, जागि रही जोति लाजनि मे,
नेह भीजौ देह, मेह भीजौ स्वेत सारी मे ।।१२१।।

बादर पटान कारे सटित सटान जनु,
धावत नटानन ज्यो बिज्जु-सटकान की
अबर झुमटान, ज्यो लपटत भुजटान देय,
विजय-निसान बूद उदित कटान की ।।
भनै 'जगेश्वर' रितु पावस भट जानि यो,
चातक रटान कूक कोयल हटान की ।
नद के तटान, ओढै कुसुंभी पटान ठाडी,
देखत अटान चढी, लहरै घटान की ।।१२२।।

*

भादो की भारी अँध्यारी निसा, झुकि बादर मद फुही बरसावै ।
लाड़िली आपनी ऊँची अटा पै, चढी रस-रीति मलारहि गावै ।।
ता समय मोहन के दृग दूरि तें, आतुर रूप की भीख यो पावै ।
पौन मया करि घूँघट टारै, दया करि दामिनी दीप दिखावै ।।१२३।।

आए असाढ घटा लखि कै, चपला चमकै घन बीच समैहै ।
एक ही बार बडे-बडे बुंद, परै छिति पै छहरान मचैहै ॥
भीजत देखि उढाय कै कामरि, लाय गरे हरि मोहि बचैहै ।
ह्वैहै अनंद सबै ब्रज मे, जब गोकुलचद जू गोकुल ऐहै ॥१२४॥

★

झर है, झहरान झकोरन है, दुरहै कहि दादुर दूंदन को ।
बरही करही मिलि सोर महा, भय नैक न दामिनि कूंदन को ॥
ब्रजराज बिचारत भीजैगी राधिका, कुंजन कौनन मूँदन को ।
अपने कर तानत कामरी कान्ह, जितै भर जानत बूँदन को ॥१२५॥

★

प्रेमी भरी बूँदन मे दूँदन उठायौ काम,
मूंदै मुख प्यारी बनी गूंदै न बहरि कै ।
कहै 'कवि सिवनाथ' झिल्ली गन गाजत है,
सावन मे बहै रस लहरी छहरि कै ॥
ऊन री सु कज, दुति दूनरी दृगन बाढी,
हून री कहति और दैन री गहरि कै ।
ऊनरी घटा मे गोरी तू न री अटा पै बैठ,
खून री करैगी, लाल चूनरी पहरि कै ॥१२६॥

★

गरजै घन, दौरि रहे लपिटाय, भुजा भरि कै सुख पागी रहै ।
'हरिचंद जू' भीजि रहे हिय मे, मिलि पौन चलै मद जागी रहै ॥
नभ दामिनि के दमकै सतराइ, छिपी पिय-अग सुहागी रहै ।
बड भागिनि ओई अहै बरसात मे, जे पिय-कठ सो लागी रहै ॥१२७।

★

ये सावन सोक नसावन है, मनभावन यामै न लाजै भरो ।
यमुना पै चलौ सु सबै मिलि कै, अरु गाय-बजाय के सोक हरौ ॥
इमि भाषत है 'हरिचद' पिया, अहो लाडिली ! देर न यामे करो ।
बलि झूलो-झुलाओ, झुको-उझको, ये पाखै पतिव्रत ताखै धरो ॥१२८॥

★

झर लाग्यौ झरी, उघरै न घरी, नदियाँ उमँगी जल-धारन सो ।
यह भूमि हरी, मन लेत हरी, धुरवा ५कि जात बयारन सो ॥
लखि बादर, दादुर सोर करे, मिलि कूकत मोर पलारन सो ।
हँसि दोऊ मिले गर-बाँह गरे, झुकि झूमे कदंब की डारन सो ॥१२९॥

बहु फूले कदंबन कुंजन मे, अरु भावतौ पौन बहै नित मे ।
बरजै जनि कोऊ मयूरन को, गरनै घन आपने ही मत मे ।।
'सिवलाल' भयौ मन भायौ जितौ, अब और करोगी तितौ नित मे ।
वर साइत मे घर आय गये, बडे भाग भट्ट बरमाइत मे ।।१३०।।

*

गरजै चहूँघा घन घोर, मोर सोर करै,
लरजै लतान वृंद सोभा सरसाई है ।
दामिनी दमाकै, जुरि जुगनू चमाकै, कहूँ-
कैलिया रमाकै भरी कूकै सुखदाई है ।।
मन अनुरागै, प्रीति रीति उर लागै लखि,
इंद्रभट्ट रागै, बन-बागै छहराई है ।
अरज बिहारी पै हमारी 'भुवनेस' एती,
मिलन के जोग बेश पावस रितु आई है ।।१३१।।

*

बक बीर बधू जुगुनू सुर चाप, सबै सुख के सरसावन मे ।
मुरवा गन, दादुर-चातक-चोर, 'गुलाब' कहै हित जावन मे ।।
वर बापि तडागन बान नदी, नद-नारन के जल आवन मे ।
घर आवत ही मनभावन के, घन सावन के मनभावन मे ।।१३२।।

*

कूजन दै कल कोकिल कूक, पपैयन सोर मचावन दै री ।
गावन दै मुरवान अरी, धुरवा नभ मंडल छावन दै री ।।
आलिन के गन को बरजै, जिन पावस गीन सुनावन दै री ।
अंक मे जो मनभावन तौ, घन सावन के बरसावन दै री ।।१३३।।

*

काजर से कारे, घन साजिकै सिधारे अब,
देत ये नगारे बरवारे जल धारे है ।
आनँद मचारे, 'बलदेव' हितकारे,
उमँगात नद-नारे, ह्वै किनारे समधारे है ।।
मदन प्रचारे, सुनि झिल्ली झनकारे,
दिन आप हू गारे, नभ तारे ना निहारे है ।
चोर पटवारे, नख अग्र गिरिधारे,
बनमाल उर डारे, ते हमारे रखवारे है ।।१३४।।

कालिंदी कूल कदंब की डारन, कूजत केकिन के गन ऐखै ।
तुंग तरंगित त्यों जमुना तहँ, ता महँ सोर करै बहु भेखै ॥
मंदहि मंद सु गाजत है घन, राजत बूँद महीन अलेखै ।
'बल्लभ' राधिका-स्याम तहाँ, सुभ स्याम घटान अटा चढ़ि देखै ॥१३५॥

*

घहरारी घने घन घोर घटा, कर सोर उठे बहु मोर अटा ।
घनस्यामै मिली तिय ताही समै, चली दामिनी सी फहरै दुपटा ॥
वाके नैन घने-घने घालै कटाच्छ, भनै 'भुवनेस' सु कौन छटा ।
जनु विस्व फतै करिबे के हितै, फरकावै मनोभव भूप पटा ॥१३६॥

*

रितु आई सोहाई नई बरषा, बढ़ौ मोद मयूरन के हिय कौ ।
हरियाई चहुँ दिसि फैलि रही, अनुराग बढावत है जिय कौ ॥
चढ़ि ऊँचे अटान बिलोकै घटा, कर कंज सो हाथ गहै पिय कौ ।
लखि कंज-कलीन तडागन मे, मुख मंजु मलीन भयौ तिय कौ ॥१३७॥

*

वर्षा-झूलन

होय रही हरी-हरी ब्रज की सकल भूमि,
फूलन के भार झूमि रही द्रुम-डारी है ।
लहरैं कलिंद-नंदिनी की नीकी लसै, नभ-
उमडि-घुमडि रही घटा घुरवारी है ॥
प्यारी मनमोहन जू झूलत हिंडोरे जहाँ,
सुरभि समीर धीर चलै सुखकारी है ।
प्रेम बस भीजत फिरत फेर बरषा मे,
बन मे बिहार करै राधिका-बिहारी है ॥१३८॥

*

हरी-हरी भूमि मे हरित तरु झूमि रहे,
हरी-हरी बल्ली बनी विविध विधान की ।
कहै 'रतनाकर' त्यो हरित हिंडोरा परयौ,
तापै परी आभा हरी हरित बितान की ॥
ह्वै है हिय हरित, हरै ही चलि हेरो हरि,
तीज हरियाली की प्रभाली सुभ मान की ।
एती हरियाली मे निराली छबि छाइ रही,
बसन गुलाली साजै लाली वृषभान की ॥१३९॥

तीज नीके रोज, सब सजनी गई री उहाँ,
भूलन हिंडोरे व्रजबाला बीर वर-वर ।
'तोषनिधि' तौलौं उठि धुरवा वरा लौं घूमि,
धाराधर धरनि बरसि परौ वर-धर ॥
मोहि तौ कन्हाई करि कामरी बचाय लीनी,
और सब भीजी, तिन तन होय थर-थर ।
ऐसौ बदनाम यहि गाँउ भौ गरीबिनी कौ,
देखि सूखी चूनरी चबाउ फैलौ घर-घर ॥१४०॥

*

तीर पर तरनि-तनूजा के तमाल तरैं,
तीज की तयारी तकि आई तकियान मे ।
कहै 'पद्माकर' सो उमंग उमंगि उठी,
मेंहदी सुरग की तरग नखियान मे ॥
प्रेम-रंग-बोरी गोरी नवल किसोरी तहाँ,
भूलत हिंडोरे यो सुहाई सखियान मे ।
काम भूलै उर मे, उरोजन मे दाम भूलैं,
स्याम भूलैं प्यारो की अन्यारी अँखियान मे ॥१४१॥

*

सावन की तीजै, पिया भीजै वारि-बुंदन सो,
अंग-अग ओढनी सुरग रंग बोरे की ।
गावत मलारै, धुरवान की धुकारै कहूँ,
झिल्ली झनकारै, भन्न करत झकोरे री ॥
करत बिहार दोऊ अति ही उदार भरे,
'बीर' कहै मंद सोभा पौन के झकोरे की ।
झमक झरी की, त्यो चमक चारु चपला की,
घमक घटा की, तापै रमक हिंडोरे की ॥१४२॥

*

सुचि सावनी तीज, सुहावनी बिज्जु, घने घन हू घहरान लगे ।
बन कै बन 'गोविंद' चातक-मोर, मलारन के सुरबान लगे ॥
दुवौ भूलैं, झुकै, झमकै, रमकै, हियरा अतिसै उमँगान लगे ।
पट प्रेम-पगे फहरान लगे, नथ के मुकता थहरान लगे ॥१४३॥

दोऊ मखतूल झूल, झूलै मखतूल-झूला,
लेत सुख-मूल, रहै 'तोप' भरि बरसात ।
छूटि-छूटि अलकैं कपोलन पै छहरात,
फहरात अंचल, उरोज ह्वै उघर जात ॥
रहो-रहो, नाहीं-नाहीं, अब ना झुलाओ लाल,
बबा की सौं, मेरी ये जुगल जानु थहरात ।
ज्यों ही ज्यों मचत लचकत लचकीलौ लंक,
संकन मयंकमुखी अंकन लपटि जात ॥१४४॥

*

बरसैं सघन घन, सावन सुहाई बूँदैं,
कुंज मे पवन चलै लहर झकोरे मे ।
कुहकै पपीहा-मोर, दादुर करत मोर,
गजत भँवर, बिज्जु नँचत सु जोरे मे ॥
'आनँद' कहत सखी चहुँघा चँवर ढारैं,
हाथन ललाई मानो लाल रंग बोरे मे ।
लहकि ढरकि जाँय अलकैं कपोलन पै,
लचकि-लचकि झूलैं मचकि हिंडोरे मे ॥१४५॥

*

रहसि-रहसि, हँसि-हँसि कै हिंडोरे चढी,
लेत खरी पैंगै छबि छाजै उकसन मे ।
उडत दुकूल, उघरत भुज-मूल, बढी-
सुखमा अतूल, केस-फूलन खसन मे ॥
ओझल ह्वै देखि-पेखि भए अनिमेष स्याम,
रीझत बिसूरि स्रम-सीकर लसन मे ।
ज्यों-ज्यों लचि-लचि लंक लचकत भाँवती कौ,
त्यों-त्यों पिय प्यारौ गहै आँगुरी दसन मे ॥१४६॥

*

झूलत प्रेम सो हेम की डार सी, बार सी पातरी है कटि खीनी ।
दै मचकी लचकावत अंगन, रंग मचावत नारि नवीनी ॥
पीय झुलाय दियौ है अचानक, प्यारी महाछबि सो भय भीनी ।
लाल हिंडोरन गोद भरी तिय, मोद भरी अँखियाँ भरि लीनी ॥१४७॥

भूलत हिंडोरे दुहूँ बोरे रस रंग, जिन्है-
जोहत अनंग-रति-सोभा कटि-कटि जात ।
मजु मचकी सो उचकत कुच-कोरन पै,
ललकि लुभाइ रसिया की डीठि डटि जात ॥
देखत बनै ही, कछु कहत बनै न नैक,
बाल अलबेली जब लाज सो सिमटि जात ।
हट जात घूँघट, लटक लाँबी लट जात,
फट जात कचुकी, लचकि लौनी कटि जात ॥१४८॥

*

फुहू-फुहू बुद भरै 'बीर' बारि-वाहन ते,
कुहू-कुहू धुनि होत, कीर-कोकिलान की ।
ताही समै स्यामा-स्याम भूलत हिंडोरे बैठ,
वारो छबि कोटिन मै रति-पंचबान की ॥
कुडल-लटक सोहै, भृकुटी-मटक जोहै,
अटक चटक पट पीत फहरान की ।
भूलन समै की सुधि भूलत न, हूलत री,
उभकन, भुकन, भकोरन सुजान की ॥१४९॥

*

कूकन मयूरन की, धुरवा के धूकन की,
भूकन समीरन की, खसन प्रसून की ।
दमकन दामिनी की, भामिनी की रमकन,
भमकन नेह की, करोर रति हू न की ॥
'नाथ' की सौ मानन की, भोकै चढि जानन की,
हँसि-हँसि, भुकि-भुकि, तानन दुहून की ।
उडन दुकूलन की, छबि भुज-मूलन की,
काम मन-हूलन की, भूलन दुहून की ॥१५०॥

*

भूलत दपति नेह रँगे, रस-पुंज निकुजन हौ बलिहारी ।
रग भरे पिय दीन्ही सखी, कल भूल भकोरिकै रंचक भारी ॥
ढीली भई मोतियान की डोर, सुकोर ह्वै हेरयौ लला-तन प्यारी ।
आली री, लाज भरी बिच घूँघट, कैसी लसी अँखियाँ अनियारी ॥१५१॥

चहुँ दिसि छाई हरियाई सुखदाई जहाँ,
मोहत सुहाई तापै फवनि फुहीन की।
कहै 'रतनाकर' ब्रजगना उमग भरी,
झूलत हिंडोरे झोरै सुखमा सुचीन की॥
मापै चित-चाव कौन, भौन-सुख-भोगिनि कौ,
डहकि डगाए देत मनसा मुनीन की।
ऊरुन की हचक, सु उचक उरोजन की,
लक की लचक, औ मचक मचकीन की॥१५२॥

★

घॉघरे की घुमडि, उमडि चारु चूनरी की,
पॉयन मलूक मखमल बरजोरे की।
भृकुटी बिकट, छूटी अलकै कपोलन पै,
बड़ी-बडी ऑखिन मे छबि लाल डोरे की॥
तरवन तरल जडाऊ जरबीले जोर,
स्वेद-कन ललित बलित मुख मोरे की।
झूलत न भामिनी की गावन गुमान भरी,
सावन मे 'श्रीपति' मॅचावन हिंडोरे की॥१५३॥

★

राग भरी भीजी सी हिंडोरे झूलै सूहे पट,
प्यारी मुख-चद पै चकोर झगरत है।
'भूधर सुकवि' बीर कठ मॉहि मनि-माल,
बाजूबद किकिनी-कनक नग रत है॥
गहै कर डोरी-जोति जोति जीति लालन सो,
सौरभ मगन भौर-जाल डगरत है।
कहूँ फूले फूल, कहूँ उडत दुकूल, कहूँ—
उर उघरत, कहूँ बार बगरत है॥१५४॥

★

घेरि घटान ते आयौ उनै, धुरवान की डोरन लागी कगारन।
मोरन के गन सोर करै, चहुँ ओर तें चातक लागे चिकारन॥
ऐसे समै छवि देखिवे को 'द्विज', तू हू चलै किन दौरि अगारन।
झूलत हेम-हिंडोरन मे, दोऊ कालिदी-कूल कदब की डारन॥१५५॥

जाके मुख चंद सोहै लागत है मंद चंद,
कुंदन ते सुंदर सलौनो जासु गात है ।
औरै छवि छाय रही अंगन मे अंगना के,
अचल ते उघरि उरोज दरसात है ॥
कहै 'हनुमान' प्रेम पूरन उघरि परयौ,
छपत न कैसे हू छपाऐ सरसात है ।
ज्यो-ज्यो मचकीन को मचाय बाल झूलत है,
त्यो-त्यो खरो झूमै लाल लफि-लफि जात है ॥१५६॥

★

अबली अलीन की अनोखी नवला लै संग,
चोखी रति हू तें राजै आनंद अथोरे पै ।
साजै बिन दूषन के भूषन को अंगन मे,
और ही अनूप आब आई मुख गोरे पै ॥
कहै 'हनुमान' बरहाई के सँकोचन ते,
हेरत न लालै भई सोचन करोरे पै ।
हूलै हिय सौति के अतूलै छवि धारि, झूलै–
मन सो पिया की गोद, तन सो हिंडोरे पै ॥१५७॥

★

पकरै उरोजन को सकुच नवाय ग्रीव,
नाँही–नाँही कहि–कहि बातै अरती है जे ।
हरी–हरी डारन मे परे जहाँ डोरा, तिन्है—
देखि झूलिबे को, अनखाय लरती है जे ॥
कहै 'हनुमान' तेई धन्य सुंदरीन माँहि,
पहरि लाल सारी हिये मोद भरती है जे ।
सावन की हेरि घटा बैठी रंग–रावटी मे,
भावन की गोद मे कलोल करती है जे ॥१५८॥

★

आई सोहाई नई बरषा रितु, रीझि हमारी कही पिय कीजिऐ ।
जैसे ही रंग लसै चुनरी पिय, तैसी ही पाग तुहूँ रँग लीजिऐ ॥
झूला पै झूलहि एक ही संग, 'मुबारक' एतौ कह्यौ पुनि कीजिऐ ।
जैसे लसै घनस्याम सो दामिनि, तैसै तुम्हारे हिऐ लगि भीजिऐ ॥१५९॥

यमुना के तीर, भीर भई है हिंडोरन पै,
दूर ही ते गहगही गति दरसत है।
गान-धुनि मंद-मंद आवत है कानन मे,
बीच-बीच बसी-धुनि प्रान परसत है॥
देखि कारे द्रुमन-लतान माँझ दामिनी सी
पट फहरात पीत, सोभा सरसत है।
हा-हा, चलि नागर पै, हिय तरसत आली,
आजु वा कदंब तरे रंग बरसत है॥१६०॥

*

हेरि कै बहार बरषा की बलि बार-बार,
आई बन-बाग बीच मदन मरोरे पै।
आस-पास गावै मंजु घोष सी सहेली सबै,
मंजुल मलार मन मोहै बरजोरे पै॥
कहै 'हनुमान' ता समान मे सची है कहाँ,
जाके रूप सोहै, रहै रति हू निहोरे पै।
हीरन जटित चारु, चाँदी कौ तखत डारि,
बैठी बाल झूलत है, हेम के हिंडोरे पै॥१६१॥

★

करत अकास वारि-बाहक विलास तैसै,
बुंद परै बसन ,कसुभी रंग बोरे पै।
छन छबि छटा तैसी, घटा घन घहराय,
हीरन के भूषन त्यो सोहै तन गोरे पै॥
'गिरिधरदास' लिऐं गिरिधर लाल संग,
झुकत, झपति जात, थोरे हू झकोरे पै।
हूलत है सूल, सुख सौति उनमूलत है,
फूलत है, झूलत है, हेम के हिंडोरे पै॥१६२॥

★

सघन घटान छबि जोति की छटान बीच,
पिक की रटान जोति जीगन जुई परै।
हार हिए हरित, नदीन-नद भरित,
झरीन-झर झरित, सो धरनि धुई परै॥

ऐसे मे किसोरी गोरी झूलत हिंडोरे, झुकि-
झूकनि झकोरे फैल फलन फुही परै ।
कीजिये दरस नँद-नंद ब्रजचंद प्यारे,
आजु मुख चंद पर चूनरि चुई परै ॥१६३॥

★

नाजुक नवेली अलबेली लै सहेली संग,
आई वर बाग बीच अधिक निहोरे पै ।
हरी-हरी क्यारिन मे डोलै गलबाही दिए,
बोलै बैन मधुर, सुभाय भाव भोरे पै ॥
कहै 'हनुमान' ज्योही झूलिबे को कीन्हो मन,
त्योही सान छाई है सुहाई मुख गोरे पै ।
झूलत हमारै, हिए हूलत है सौतिन के,
फलन कमीली बाल बैठी जो हिंडोरे पै ॥१६४॥

★

झूलत हिंडोरै, उठै छबि की झकोरै,
मन-माधुरी मे बोर, पौन खान मुसक्यान की ।
जोरै दृग-कोरै, हिए सबके मरोरै, मानो-
सोभा चौर ढोरै, दुति पट-फहरान की ॥
जोबन के जोरै, झूला थामत निहोरै हू न,
चोप दुहूँ ओरै, छुवै फुनगि लतान की ।
'बेनी' हू हिलोरै, फूल छोरै, हार डोरै, लख-
आली तृन तोर, सुधि भूली गान-तान की ॥१६५॥

★

झूलत हिंडोरै प्रिया-प्रीतम यमुन-तीर,
बोलै पिक-कीर छबि छाजत लतान की ।
बाँधै पाग पचरंग, ओढ़ै चूनरी सुरंग,
कंचुकी दुरंग, बेंदी करै दुति भान की ॥
ब्रज-बधू गावै, झुकि-झुकि कै झुलावै, स्यामा-
स्याम को रिझावै, होत बरषा सुगान की ।
घोर घन गाजै, बग-पाँति हू बिराजै, ताके-
बीच-बीच बाजै, बंसी सुंदर सुजान की ॥१६६॥

वर्षा–विरह

दूर जदुराई, 'सेनापति' सुखदाई देखो,
आई रितु पावस, न पाई प्रेम-पतियाँ ।
धीर जलधर की, सुनत धुनि धरकी, है-
दरकी सुहागिन की छोह भरी छतियाँ ॥
आई सुधि बर की, हिए मे आन खरकी, 'तू–
मेरी प्रानप्यारी'–ये प्रीतम की बतियाँ ।
बीती औधि आवन की, लाल मनभावन की,
डग भई बावन की, सावन की रतियाँ ॥१६७॥

*

बिन घनस्याम, धाम लागत निकाम, बाम–
आठौ जाम दहत, अतन तन छतियाँ ।
केकी–पिक कूकै, हूकै उठै ये अचूकै अंग,
लूकै देत दादुर, बिरह–आग ततियाँ ॥
पतियाँ न आई बीर, छतियाँ जरन लागी,
बतियाँ सोहात नाँही, भूली गति–मतियाँ ।
बीती औधि आवन की, लाल मनभावन की,
डग भई बावन की, सावन की रतियाँ ॥१६८॥

*

दामिनी-दमक, सुरचाप की चमक, स्याम–
घटा की झमक, अति घोर घनघोर ते ।
कोकिला–कलापी कल कूजत है जित-तित,
सोकर ते सीतल समीर की झकोर ते ॥
'सेनापति' आवन कह्यौ है मनभावन, सु–
लाग्यौ तरसावन बिरह–जुर जोर ते ।
आयौ सखी सावन, मदन सरसावन, ल–
ग्यौ है बरसावन, सलिल चहूँ ओर ते ॥१६९॥

बैठ अटा पर औधि बिसूरत, पाय सँदेस न 'श्रीपति' पी के ।
देखत छाती फटै निपटै, उछटै जब बिज्जु–छटा छवि नीके ॥
कोकिल कूकै लगै मन लूकै, उठै हिय हूकै बियोगिन ती के ।
बारि के बाहक, देह के दाहक, आए बलाहक गाहक जी के ॥१७०॥

नीके हो निठुर कंत, मन लै पधारे अंत,
मैन मयमत, कैसै बासर बराइ हौ ।
आसरौ अवधि कौ, सो अवध्यौ बितीत भई,
दिन दिन पीत भई, रही मुरझाइ हौं ॥
'सेनापति' प्रानपति साँची हौं कहति, एक-
पाइकै तिहारे पाँय, प्रानन को पाइ हौं ।
इकली डरी हौं, घन देखि कै डरी हौं, खाइ-
बिष की डरी हौं, घनस्याम मरि जाइ हौं ॥१७१॥

★

उन एते दिन लाए, सखी अजहूँ न आए,
उनए ते मेह भारी है काजर-पहार से ।
काम के बसीकरन, डारै अब सीकरन,
तातै ते समीर जे है सीतल तुषार से ॥
'सेनापति' स्याम जू कौ बिरह छहरि रह्यौ,
फूल प्रतिकूल तन डारत पजार से ।
मोर हरषन लागे, घन बरषन लागे,
बिन बर खन, लागे बरष हजार से ॥१७२॥

★

अब आयौ भादौं, मेह बरसै सघन कादौं,
'सेनापति' जादौपति बिना क्यो बिहात है ।
रबि गयौ दबि, छबि अंजन तिमिर भयौ,
भेद निसि-दिन कौ न क्योहू जान्यौ जात है ॥
होति चकाचौंधि जोति चपला के चमके तें,
सूझि न परत पीछे मानो अधरात है ।
काजर तें कारौ, अँधियारौ भारौ गगन मे,
घुमरि-घुमरि घन घोर घहरात है ॥१७३॥

★

सारंग-धुनि सुनि पीय की, सुधि आवत अनुहारि ।
तजि धीरज, बिरहिनि विकल, सबै रहै मनु हारि ॥
सब रहै मनुहारि, जे न मानै जुवती-जन ।
ते आपुन तें जाइ, धाइ भेंटति प्रीतम--तन ।
मत न मान के चलहि, देखि जलधर चपला रँग ।
'सेनापति' अति मुदित, देखि बासरै निसा रँग ॥१७४॥

पर-काजहि देह को धारे फिरौ, परजन्य जथारथ ह्वै दरसौ ।
निधि–नीर सुधा के समान करौ, सब ही बिधि सज्जनता सरसौ ॥
'घनआनँद' जीवनदायक हौ, कछु मेरियौ पीर हिएँ परसौ ।
कबहूँ वा बिसासी सुजान के आँगन, मो अँसुवानहिं लै बरसौ ॥१७५॥

*

'घनआनँद' जीवन मूल सुजान की, कौंधनि हू न कहूँ दरसै ।
सु न जानिए धौं कित छाय रहे, दृग चातक प्रान तपै तरसैं ॥
बिन पावस तो इन्हे थ्यावस हो न, सु क्यों करि ये अब सो परसै ।
बदरा बरसै रितु मे घिरि कै, नितही अँखियाँ उघरी बरसै ॥१७६॥

*

सावन आवन हेरि सखी, मनभावन आवन चोप बिसेखी ।
छाए कहूँ 'घनआनँद' जान, सम्हारि की ठौर लै भूल न लेखी ॥
बूँदैं लगै, सब अंग दगै, उलटी गति आपने पापन पेखी ।
पौन सो जागत आगि सुनी ही, पै पानी सो लागत आँखिन देखी ॥१७७॥

*

कंत बिन भावत सदन ना सजनि ! मोपै—
बिरह प्रबल मैनमत कोप्यौ बाढ़ के ।
'श्रीपति' कलोल, बोलै कोकिल अमोलै, खोलै—
गौन गाँठ तोपै गौन राखे आढ–आढ के ॥
हहरि–हहरि हिय, कहरि–कहरि करि,
थहरि–थहरि दिन बीते जिय माढ के ।
लहरि–लहरि बिज्जु, फहरि–फहरि आवै,
घहरि–घहरि उठे बादर असाढ के ॥१७८॥

*

हरी है सबै सुधि-बुद्धि हरी, तिय सेज परी, तन चेत री है ।
नरी है, कहा रति-रूप रती-कन, सौने के साँचे ढरी पुतरी है ॥
तरी है मनोज महानद की, 'नृप सकर' सोभित लाल डरी है ।
डरी है खरी यह पावस में, सखि सोर सुनै लखै भूमि हरी है ॥१७९॥

*

तेरई वे झमकै लखिकै, जुगुनून की जे तन लूकै लगी ।
वर की सुधि कै दरकी छतियाँ, जब सीरी बयारि की भूकै लगी ॥
भनै 'श्रीपति' आप घटा घहरै, हहरै हियरा अति ह्वै कै लगी ।
अब कैसै बनाव बनैगौ पिया बिन, पापिनी कोकिल कूकै लगी ॥१८०॥

तेरे डाह दही, बैठ कोठरी के कौने रही,
अजहूँ तौ देहि कौल निकसौ तो कौने सो ।
कहै 'मकरंद' कोई पछी न गहै पंख,
काम सो निहोरौ करि देखौ जौन-तौने सो ।।
तो को मै जराय जरौं,चोप करि ओप करौं,
चुनि-चुनि चुनी-लाल लाखन के लौने सो ।
ए रे ए पपीहा ! जैसै पीय-पीय कहे, तैसे-
आव-आव कहै तो, मढावो चोच सौने सो ।।१८१।।

★

झिल्ली झनकारै, पिक-चातकी पुकारै बन,
मोरन गोहारै, उठै जुगनू चमकि-चमकि ।
घोर घन कारे, भारे धुरवा धुँधारे, धाम-
धूमन मचावै, नॅचै दामिनी दमकि-दमकि ।।
झूँकन बयारि बारि लूकन लगावै अग,
कूकन भभूकन सो और मो खमकि-खमकि ।
कैसे रहै प्रान, प्रान-प्यारौ 'जसवत' बिन,
छोटी-छोटी बुंदन सो बरसै झमकि-झमकि ।।१८२।।

★

मरज बढावै महा, दुर्जन फरज बाँवै,
काज न करत कछू कारज सो आनै री ।
चरज न जानै, हिय दरज दुरावे हाय,
बरज न सीखै, समय प्रीतम पयानै री ।।
भनै 'रघुराज' अबै अरज सुनै ना नैक,
बिरही परज पर जन अनुमानै री ।
तरज न जानै, और दरज न जानै नैक,
गरज न जानै, मेघ गरजन जानै री ।१८३।

★

भादौ मे कारी बिकरारी रात ह्वै है प्यारी,
जुगनू-जमाति जोर-जोर धमकावैगी ।
घनन घमंड ह्वै कै, बरषा अखंड ह्वै कै,
पवन प्रचंड दुति दामिनी दवावैगी ।।

अग्न बरन ह्वै कै इंद्र-बधू ठौर-ठौर,
'मल्ल कवि' कहै जोर आपनौ जनावैगी ।
पावस समय मे जोपै ऐहैं नहीं कंत, तौपै-
मदन महीपति की फौजैं उठि धावैगी ॥१८४॥

★

धुंधरित धूरि धुरवॉन की सु छाई नभ,
जलधर-धारा धरा परसन लागी री ।
'द्विजदेव' हरी-भरी ललित कछारै त्यो,
कदबन की डारै रस बरसन लागी री ॥
काल्हि ही तें देखि बन-बेलिन की बनक,
नवेलिन की मति अति अरसन लागी री ।
बेगि लिखि पाती, वा सँघाती मनमोहन को,
पावस-अवाती ब्रज दरसन लागी री ॥१८५॥

★

बिज्जु की छटा मे, घन घोर की घटा मे,
बक-पॉति की प्रभा मे, कैधौ नैनॉन लगाए ना ।
दादुर-कलामे, जोर-सोर सरनामे, पीऊ-
पीऊ पपिहा मे, हामे सोर सरसाए ना ॥
'सकर जू' जामे, नीलमनि सी ललामै भूमि,
सोहै ठाम-ठामै, तामै काम-तेज ताए ना ।
मोर-हरषा मे, नदी-नद-तरषा मे, अज-
हू लौ परसा मे, बरषा मे हरि आए ना ॥१८६॥

★

आढ-आढ करत असाढ आयौ मेरी आली,
डर सौ लगत देखि तम के जमाक ते ।
'श्रीपति' ये मैन माते मोरन के बैन सुनि,
परत न चैन बुँदियान के झनाक ते ॥
झिल्ली गन झॉझ झनकारै न सँभारै नैक,
दादुर दपट बीज तरसै तमाक तें ।
भरकी बिरह-आग, करकी कठिन छाती,
दरकी सजल जलधर की धमाक ते ॥१८७॥

मोरन के मोर, सुनि पिक की पुकार, तैसी–
चातक-चिकार सुनि सूनी स्याम यामिनी ।
जुगुनू-जमक देखि, झिल्ली की झनक लेखि,
भय सो बिसेष 'सेष' डरै गज–गामिनी ।।
झरन झरत नीर, कपत सरीर एरी
बालम बिदेस धीर धरै कैसे कामिनी ।
मारे डारै मदन, मरोरै डारै दादुर ये,
दाबै आवै बादर, दबाए आवै दामिनी ।।१८८।।

*

छायौ नभ–मडल घुमडि घन 'श्री कवि जू',
आनँद अथोर चारो ओर उमँगत ।
पायौ मद मालती कौ, कुज-कुज गुंजत है,
भौंर दुख–पुज गेह–गेह ते भगत है ।।
धायौ देस-देस तें, बिदेसी सब कठ लायौ–
निज–निज ती को, भरौ मोदहि जगत है ।
आयौ सखी सावन, सोहावन सही, पै मोहि–
बिन मनभावन भयावन लगत है ।।१८९।।

*

तम की जमक, बक-पाँति की चमक, ज्योति–
झीगन झमक, चमकन चपलान की ।
बैहर झकोरै, मोरै रौरै चहुँ ओरै सोरै,
प्रेम के हलोर घोरै धुनि धुरवान की ।।
रतियाँ जमकि आईं, छतियाँ उमँगि आईं,
पतियाँ न आई प्यारे 'श्रीपति' सुजान की ।
नेह तरजन, बिरहा के सरजन सुनि,
मान मरदन गरजन बदरान की ।।१९०।।

*

पपिहा की पुकार परी है चहूँ, बन मे गन मोरन गावन के ।
कहि 'श्रीपति' सागर से उमँगे, तरु तोरत तीर सुहावन के ।।
बिरहानल ज्वाल दहै तन को, छिन होत सखी पग बावन के ।
दिन गे मनभावन आवन के, घहरान लगे घन सावन के ।।१९१।।

घन दरसावन है, बिज्जु तरपावन है,
चहुँ ओर धावन है, बैहर सगाढ की ।
मानिनी मनावन है, मोर हरपावन है,
दादुर बोलावन है, अति आढ-आढ की ॥
'श्रीपति' सुहावन है, झिल्ली झनकावन है,
बिरही सतावन है, चिंता चित बाढ की ।
लगन्न लगावन है, मदन जगावन है,
चातक को गावन है, आवन असाढ की ॥१६२॥

*

कौन परी चूक मोसो, एरी मेरी बीर ! जासो—
कीन्ही मनमोहन ने ऐसी हाय ! घतियाँ ।
छाग परदेस, पायौ कछु ना सदेस, ये ही—
जिय मे अंदेस, कबौ भेजत न पतियाँ ॥
काम की सताई, निसि रोय कै बिताई 'लाल',
कैसे कल पाऊँ, पीर होत छतियाँ ।
तापै कलपावन को, बिरह बढावन को,
आई दुखदाई फेरि, सावन की रतियाँ ॥१६३॥

*

ह्वैकै निरसक, अक लैकै उरजन लाइ,
निरखि-निरखि नैन, रूप-रस चाखती ।
दीन ह्वैकै बोलती तुरत अँसुवन ढारि,
दोऊ कर जोरिकै बिरह-विथा भाखती ॥
ल्यावती पकरि गुरुजन आगै आँगन लौ,
'संतन' कहत वेगि लाज-नदी नाँघती ।
जो मै सखी जानती, कै सावन बिदेस ह्वैहै,
पॉमन पकरि मनभावन

*

आयौ असाढ भई अति गाढ, गई सब रैनि पहार सी ह्वै ठा ।
कौन सुनै अरु कासो कहौं, चहुँ ओर ते दामिनी नाखत बाढ ॥
मोर ही ते करै कोकिल कूक, 'सिरोमनि' लेत करेजौई काढै ।
कामिनी के हनिबे को मनो, चमकी, झमकी जम की जम-दाढै ॥१६५॥

चचला चमाकै चहुँ ओरन ते चाह भरी,
चरजि गई ती फेरि, चरजन लागी री ।
कहै 'पद्माकर' लवंगन की लौनी लता,
लरजि गई ती, फेरि लरजन लागी री ॥
कैसै धरौं पीर बीर ! त्रिविध समीरैं तन,
तरजि गईं ती, फेरि तरजन लागी री ।
घुमडि घमंड घटा घन की घनेरी अबै,
गरजि गई ती, फेरि गरजन लागी री ॥१९६॥

*

सरद-ससी ते अध ससी ह्वै बची हौं, कवि-
'चिंतमनि' तिमि हिम-सिसिर-झमक ते ।
मारुत मझकै बची, बधिक बसंत हू ते,
पावक-प्रचार बची, ग्रीषम-तमक ते ॥
आयौ पापी पावस ये, प्रान अकुलान लागे,
भयौ री असान घोर घन के घमक ते ।
ताप ते तचौंगी, जो पै अमिय अचौंगी आली !,
अब ना बचौंगी, चपलान की चमक ते ॥१९७॥

*

बरसत मेह, नेह सरसत अंग-अंग,
झरसत देह, जैसै जरत जवासौ है ।
कहै 'पद्माकर' कलिंदी के कदंबन पै,
मधुपन कीनो आय, महत मवासौ है ॥
ऊधौ ! ये ऊधम जताय दीजो मोहन को,
ब्रज कौ सुबासौ, भयौ अगिनि-अवासौ है ।
पातकी पपीहा जल-पान कौ न प्यासौ, काहू-
बिथित बियोगिन के प्रानन कौ प्यासौ है ॥१९८॥

*

कर कागद लैके बियोगिन नारि, लिखै इमि प्रीतम को पतियाँ ।
इहि पावस मे परदेस छये, बलिहारी तिहारी सिला-छतियाँ ॥
सखियाँ पिय संग हिंडोरै चढीं, बतरावत राग भरी बतियाँ ।
अति कारी डरावनी साँपिनी सी, मोहि सालत सावन की रतियाँ ॥१९९॥

आई रितु पावस, न आए प्रानप्यारे, याते –
मेघन बरज आली ! गरजन लावै ना ।
दादुर हटकि बकि-बकि कै न फोरै कान,
पिकन पटकि, मोहिं सबद सुनावै ना ॥
विरह-विथा तें हौं तो व्याकुल भई हो 'देव',
चपला-चमकि चित चिनगी उडावै ना ।
चातक न गावै, मोर सोर ना मचावैं,
घन घुमडि न छावै, जौलौं लाल घर आवै ना ॥२००॥

★

जल भरे झूमैं, मनो भूमैं परसत आइ,
दस हू दिसान घूमैं, दामिनी लए-लए ।
धूम धारे धूसर से, धुरवा धुँधारे कारे,
धूरवान धारे धावैं छबि यो छए-छए ॥
'श्रीपति' सुजान कहै घरी-घरी घहरात
तापत अतन तन ताप सो तए-तए ।
लाल बिन कैसे लाज-चादर रहैगी बीर !,
कादर करत मोहिं बादर नए-नए ॥२०१॥

★

झमकि-झमकि झूलि, राग की सिखत रीति,
छहरि-छहरि बुंद गिरत अकास तें ।
भनत 'दिवाकर' करत मोर सोर बन,
बिहरै बहूटी बीर ! मेदनी हुलास तें ॥
चातक चवाई चाइ, सुरति बढावै चाव,
चूनरी सुरंग रंग बसी है सुवास तें ।
सावन सिरायौ, मनभावन न आयौ आली,
कादर करत कारे बादर प्रबास तें ॥२०२॥

★

उठ देख री बीर ! अटान-अटा चढि, बिज्जु-छटा छहरान लगी ।
अति सीरी बयार सुगंध सनी, द्रुम-बेलिन पै फहरान लगी ॥
सखि ! औध की आस धरी पै रही, लखिकै छतियाँ थहरान लगी ।
ये कैसी अचानक आन बनी री, घटा घन की घहरान लगी ॥२०३॥

सखियाँ कोउ झूँक ते झूलन के, डरि लागहिं प्रीतम को छतियाँ ।
कोउ डोर धरै कर एक त्यो एक, ते पी की बचावत है घतियाँ ॥
कोउ गाइ मलार रिझाइ रही, अरु कोऊ करैसकी बतियाँ ।
कब पीर निवारि है मो हिय की, पिय ! जात है सावन की रतियाँ ॥२०४॥

★

लाग्यौ अषाढ़ सबै सुख-साजन, मो जिय मे बिरहा दुख बोई ।
सावन मे सब केलि करे, मै अकेली परी, सग-साथ न कोई ॥
कैसै जियो अब ए सजनी ! रितु पावस मे घनस्याम बिगोई ।
कौन सी चूक परी बिधना, बरसात गई बर साथ न सोई ॥२०५॥

★

भावती जो पिय की बतियाँ, सखि ! सालत है उर, सूल सी बोई ।
घोर घटा बिजुरी चमकै, तिसरै पपिहा पिय-पीय रटोई ॥
'भौन' भनै भ्रम भामिनि को, लरजै छतियाँ तन काम बिगोई ।
स्वाँसन स्वाँस उसासत है, बरसात गई, बर साथ न सोई ॥२०६॥

★

सजि सूहे दुकूलन बिज्जु छटा सी, अटान चढ़ी घटा जोवती है ।
रगराती सुने धुनि मोरन की, मदमाती स्योग सँजोवती है ॥
कहि 'ठाकुर' वे पिय दूर बसै, हम आँसुन तें तन धोवती है ।
धनि वे धनि, पावस की रतियाँ, पति की छतियाँ लगि सोवती है ॥२०७॥

★

धनि वे, जिन प्रेम सने पिय के, उर मे रस-बीजन बोवती है ।
धनि वे, जिन पावस मे पिसिकै, मेहँदी कर-कज मलोवती है ॥
धनि वे, जिन 'सूरत' साजि सजै, हम लाजके बोझ को ढोवती है ।
धनि वे धनि, सावन की रतियाँ, पति की छतियाँ लगि सोवती है ॥२०८॥

★

धनि वे, जिन पावस की रितु मे, नित प्रीति मे प्रीति सँजोवती है ।
धनि, वे, जिन कारी घटा मे अटा बिच, बिज्जु-छटा छबि छोवती है ॥
धनि वे, जिन 'रामचरित्र' हिऐं, हिलि हौसन्न हरषित होवती है ।
धनि वे धनि, पावस की रतियाँ, पति की छतियाँ लगि सोवती है ॥२०९॥

छै है बक-मडली उमडि नभ मंडल मे,
जुगनू चमक ब्रजनारिन जरैहै री ।
दादुर-मयूर झीने झींगुर मचैहैं सोर,
दौरि-दौरि दामिनी दिसान दुख दैहै री ॥
'सुकवि गुलाब' ह्वैहै किरचै करेजन की,
चौकि-चौकि चौचन सो चातक चिचैहै री ।
हसिनि लै हस उडि जैहै रितु पावस मे,
ऐहै घन स्याम, घनस्याम जो न ऐहै री ॥२१०॥

*

कारी कूर कोकिल ! कहाँ कौ बैर काढत री,
कूकि-कूकि अब ही करेजौ किन कोरि ल ।
पैढ परे पापी ये कलापी निसि-द्यौस ज्यो ही,
चातक घातक त्यो ही तुहू कान फोरि लै ॥
'आनद के घन' प्रान जीवन सुजान बिना,
जानि कै अकेली सब घेरौ दल जोरि ल ।
जौलौ करे आवन, विनोद-बरसावन वे,
तौलौ रे डडारे-बजमारे घन ! घोरि लै ॥२११॥

*

घहरि-घहरि घन सघन चहूँघा घेरि,
छहरि-छहरि बिष बूँद बरसावै ना ।
'द्विजदेव' की सौ, अब चूकि मत दाब अरे,
पातकी पपीहा तू पिया की धुनि गावै ना ॥
फेरि ऐसौ औसर न ऐहै तेरे हाथ ए रे,
मटिक-मटिक मोर सोर तू मचावै ना ।
हौ तौ बिन प्रान, प्रान चहत तज्यौई अब,
कत नभ-चद तू अकास चढि धावै ना ॥२१२॥

*

उमडे नभ-मडल-मडित मेघ, अखडित धारन सो मचि है ।
चमकैगी चहूँ दिसि ते चपला, अबला करि कौन कला बचि है ॥
अकुलाइ मरेगी बलाइ 'ममारख', आज उपाइ इहै रचि है ।
पहिलै अँचवेगी हलाहल को, फिरि केकी-कुलाहल कै नचि है ॥२१३॥

कारी नई उनई घन की घटा, बिज्जु छटा करै आनँद जी कौ ।
सोर भौ ओर चहूँ 'परसाद', मनोहर मोरन की अवली कौ ॥
चारु सुहाव पतान को मोहै, लतान मे सोहै हरौ रग नीकौ ।
है यहि भाँति सुहावन री, पै बिना मनभावन सावन फीकौ ॥२१४॥

*

आयौ असाढ सुनो सजनी, रजनी दिन घेरि घटा घन छायौ ।
छायौ बिदेसहि 'रामचरित्र', अँदेस लग्यौ है, सँदेस न पायौ ॥
पायौ भलै अपने बस कैधौ, कहूँ कोउ सौतिन सेज लुभायौ ।
भायौ कहा उनके मन माँहि, कि पावस आयौ, पिया नहि आयौ ॥२१५॥

*

सावन की रितु आई सखी, पतियाँ न लिखी अजहूँ मनभावन ।
भावन राग-मलार मे 'भूपति', रग उमग सो लागे है गावन ॥
गाँमन मे हरपै सबही, बरषै वर बूँद, घटान की आवन ।
आवन आज भयौ नहि पीव कौ, जीव को मेन लग्यौ तरसावन ॥२१६॥

*

सावन सोक नसावन है, नहि 'रामचरित्र' मेरे मनभावन ।
भावन मोहि घटा घन की, बन की हरियाली लगी लुक लावन ॥
लावन कोऊ कहै उनको, उनको कर जोरि कही गुन गावन ।
गाँमन मे सबको सुख है, हमको दुख ही दुख है दरसावन ॥२१७॥

*

घेरि घटा घहराय रही, दरकावत है बिन प्रीतम छाती ।
कामिनियाँ हियरा तरसावत, दामिनियाँ चहुँ ते दरसाती ॥
'रामप्रताप' झकोरत पौन, भई दुखदाइन सावन-राती ।
तापै वियोग बढावत है, वह 'पी' कहि बोलि पपीहरा घाती ॥२१८॥

*

कोकिल की सुनिकै कल कूकन, केकी कुटेकी कुटेक न टरे ।
बीर बधू फिरकी सी फिरै, 'बिरहानल के मनो बीज बिखेरे ॥
'बान' कहै सखि ! भूमि हरी लखि, होय हरी न, हरी फिर हेरे ।
धावत धूम से बादर देखि, लगे जल मोचन लोचन मेरे ॥२१९॥

भूमि हरी भई, गैलै गई मिटि, नीर-प्रवाह बहा बबहा है ।
कारी घटान अँधेरौ कियौ, दिन-रैन म भेद कछू न रहा है ॥
'ठाकुर' भौन तें दूसरे भौन लौं, जात बनै न, बिचार महा है ।
कैसे कै आवे, कहा करे बीर, बिदेसी बिचारन दोस कहा है ॥२२०॥

*

भादौं की अँधेरी, धुरवा की लटकेरी, पाक-
सासन करै री, छिन-छिन छोड़ै बान री ।
बोलत भयान भोगी, बासना तजत योगी,
पति से बिहीन, ना सोहात खान-पान री ॥
भनत 'दिवाकर' करार दरियाब छोडी,
नाव कौ निवाह ना, न साह छोडै रान री ।
पावस प्रबल मेरे पिय को छोडाय दीन्हो,
दोप न बिदेसी, करै कैसे कै पयान री ॥२२१॥

*

उमड नभ तें छिति मंडल मेघ, घमडि चहूँ दिसि धाय रहे ।
'कवि चंदन' चाव सो चातक-मोर, हरे बन सोर मचाय रहे ॥
पिय पावस मे बिरही बनितान के, आवन हार ते आय रहे ।
केहि कारन हाय बिहाय हमै, हरि जाय बिदेस मे छाय रहे ॥२२२॥

*

डोलै पौन परसि-परसि जल बूदन सो,
बोलै मोर-चातक चकित उठि डरि मे ।
कहाँ लौ बराऊँ दईमारे मैन बानन सो,
थकि रही केतिकौ उपाय करि-करि मैं ॥
'दत्त कवि' प्यारे मनमोहन न पाऊँ, कहौ-
मन समझाऊँ री, कहाँ लौ धीर धरि मै ।
छाए मेघ मगन, सुहाए नभ मडल मे,
आए मनभावन, न सावन की झरि मे ॥२२३॥

*

जाइ कै द्वारिका बैठि रहे, जु लहै अबला ब्रज की दुख भारी ।
आवत मेघ नये उनए, जुगुनू दरसै, सरसै निसि कारी ॥
कोकिल-कूक करै हिय हूक, उलूक सो बोलत पीक पुकारी ।
आँसू भरै अँखियाँ सें तिया, छतियाँ करकै बकै 'हाय बिहारी' ॥२२४॥

कैधौ मोर सोर तजि गए री अनत भाजि,
फधौ उत दादुर न बोलत नये दई ।
कैधौ पिक-चातक-चकोर काहू मारि डारे,
कैधौ बक-पाँति कहूँ अंतरगत ह्वै गई ।।
झींगुर झिगारै नाँहि, कोकिल किलकारै नाँहि,
भनै 'जयसिंह' दसौ दिसि हूँ सो सो गई ।
जारि डारयौ मदन, मरोरि डारे मोर सब,
जूझि गए मेघ, कैधौ दामिनी सती भई ।।२२५।।

★

कैधौं वा बिदेस घन घुमडि न छावै चहूँ,
कैधौ वा बिदेस कहूँ दामिनी न दरसै ।
कैधौ वा बिदेस मोर सोर ना मचाव जोर,
कैधौ वा बिदेस बेग बोलिकै न हरसै ।।
कैधौ वा बिदेस मे न झींगुर झनक झुंड,
कैधौ वा बिदेस मे न जुगुनू-जोति सरसै ।
कैधौ वा बिदेस 'रामचरित' ना रसिक कोऊ,
कैधौ वा बिदेस घटा घेरिकै न बरसै ।।२२६।।

★

कैधौ वा देस जहाँ प्रीतम पियारे बसै,
घोरै घटा नहीं, घूमि-घूमि घहरावै है ।
कैधौ चमकत नाँहि चपला चहूँघा तहाँ,
कैधौ न सुरेस कबौ बुंद झर लावै है ।।
कैधौ काम कुटिल न व्यापत करेजै, कैधौ-
कोऊ नहिं मेघ औ मलार राग गावै है ।
कैधौ 'लाल' पावस की रात मे पपीहा पापी,
बार-बार पी-पी कर कूक ना सुनावै है ।।२२७।।

★

कैधो वा देस घन घुमडि न बरसत है,
कैधो 'मकरंद' नदी-नद पथ भरिगे ।
कैधो पिक-चातक चकित चक्रवाक बाक,
मत्त भए दादुर-मधुप-मोर मरिगे ।।

मेरे मन आवत, न आली प्यारे आवत है,
काम कुर निकर मही ते धौ निकरि गे ।
कैधौ पंचसर हर फेरिकै भसम कीन्हौ,
कैधौ पचसर जू के पाँचो सर सरिगे ॥१२८॥

★

कारे-कारे बदरा पवन लै प्रचंड करौ,
घन की धनाक नैक चित्त हू न धरि हौ ।
पापी ये पपीहा के सचान लै कै प्रान लेउँ,
कोकिला के कठ कारे काटि-काटि डरि हौ ॥
झीगुर झँगार को बोलाइ लेउँ नीलकंठ,
सेप को बोलाइ सबै दादुर सहरि हौ ।
आवन दै सावन रे, मेरे मनभावन को,
रहु रे अपाढ, तेरे हाड-हाड गरि हौ ॥२२६॥

★

लगी सो लगाई लक खेहनि खराब करौ,
मारि करौ मोरन अहार मारजारे कौ ।
'सुकवि निधान' कान आँगुरिन मूँदि-मूँदि,
सुनि हौ न घोर सोर झिल्ली झनकारे कौ ॥
भेकन की भीर सहसानन मिटाय डारौ,
मेटि डारौ गरब गरूर घन कारे कौ ।
पाऊँ जो पकरि काहू जाल सो जकरि तन,
फीहा-फीहा करौ या पपीहा दई मारे कौ ॥२३०॥

★

पीउ-पीउ कहति, मिलै जो मोहि आज पीउ,
सौने चौच चातक मढाऊँ अति आदरन ।
कठिन कलापिन के कठन कटाय डारौ,
देत दुख दारुन चिराय डारौ दादुरन ॥
'मोतीराम' झिल्ली गन मदिर मुँदाइ डारौ,
बधिक बुलाइ बधौ बन के बिरादरन ।
बिरहा की ज्वालन सो झरहि जराइ डारौ,
स्वाँसन उडाऊँ बैरी बे दरद बादरन ॥२३१॥

आई अषाढ की कारी घटा, घहरान लगे बदरा चहुँ ओर कै ।
दूजै जो कंत बिदेस गए, सुधि पाई न नैक, रही मग हेरि कै ।।
'उमराव' स्वभाव बिहग कौ है, मृदुबैन कहै जो सबी कहै टेरि कै ।
सौने की चोंच मढैहौं तेरी, बलि जैहौं पपीहा, पिया कहु फेरिकै ।।२३२।।

★

पीउ-पीउ रटत पपीहा रितु पावस मे,
दादुर पुकार सो न बची कुल-चादरन ।
कोकिल की बोलन, मयूर मेरु नृत्यन सो,
झिल्ली-झनकार सुनि भयौ जीव कादरन ।।
होतौ यहि काल आली आज जो 'दिवाकर जू'
हाव-भाव करतौ कलोल अति सादरन ।
जाय परदेस को बसत है हमारे साईं,
रोज-रोज बिरह बढावें बैरी बादरन ।।२३३।।

★

जौ लौं उतै जुगनू दरसै, तन-ताप इतै तब लौं दरसै लगी ।
जौ लौं समीर उतै सरसै, 'नंदराम' उसाँस इतै सरसै लगी ।।
जौ लौं जवास झुरी झरसै उत, तौ लौं इतै छतियाँ झुरसै लगी ।
जौ लौं घनेरी घटा बरसै उत, तौ लौ इतै अँखियाँ बरसै लगी ।।२३४।।

★

उमडि-उमडि घन घुमडि-घुमडि आए,
चचला उठत तामैं तरजि-तरजि कै ।
बरही-पपीहा-भेक-पिक खग रोरत है,
धुनि सुनि प्रान उठै लरजि-लरजि कै ।।
कहै 'कविराय' देखि चमक खद्योतन की,
प्रीतम को रही मैं तौ बरजि-बरजि कै ।
लागै तन तावन, विना री मनभावन के,
सावन दुवन आयौ गरजि-गरजि कै ।।२३५।।

★

नीर झलान को पोषत पीर, न वारन बुंद बिसारे है बान ये ।
धूम वियोगिनि के घट को घुटि, भूमि पै भूमि रहे धुरवान ये ।।
जो झरते न रहै ये नैन, नदी नद-सिंधु भरेंगे निदान ये ।
पी कहि, पी कहि, पापी पपीहरा, पी गए जान, कै पी गए प्रान ये।।२३६।।

गरजि लै, घुमँडि लै सकल महि-मंडल पै,
दड बिरहीन कौ अदड अब ऐठै गौ ।
पापी हू पपीहा पीउ दारुन देखाइ दुःख,
मोरन कौ सोर, तन तोरि अग पैठै गौ ॥
चपला कृपान, बुद बान सो 'प्रवीन बेनी',
सीतल समीर तन अधिक उमैठै गौ ।
जारी हौ बसत की, लथारी-मारी ग्रीषम की,
पावस कलकी सीस तेरे चढ़ि बैठे गौ ॥२३७।

★

सावन सुहावन विसेष, नभ धनु लेखि
याद होत झटपट पीत अभिराम की ।
तकि मृग-पाँती, बिलपाती, अकुलाती अति,
आवत सुरति वह मौलसिरी दाम की ॥
मोर चहुँ ओर देखि, मुकुट-सुरति होत,
चपला-चमक देखि, कुडल ललाम की ।
ऊधौ ! ब्रज-बाम कैसै धीर धरै सूने धाम,
लखि घन स्याम, सुधि आवै घनस्याम की ॥२३८॥

★

आयौ सखि सावन बिदेस मनभावन जू,
कैसै करि मेरौ चित्त हाय ! धीर धारि है ।
ऐहै कौन झूलन हिडोरे बैठि सग मेरे,
कौन मनुहारि करि, भुजाएँ कंठ पारि है ॥
'हरिचद' भीजत बचैहै कौन, भीजि आप,
कौन उर लाय काम-ताप निरवारि है ।
मान समय पग परि कौन समुझैहै हाय,
कौन 'मेरी प्रान प्यारी' कहिकै पुकारि है ॥२३९॥

★

रितु पावस स्याम घटा उनई, लखिकै मन धीर धिरातौ नहीं ।
धुनि दादुर मोर-पपीहन की, सुनि कै छिन चित्त थिरातौ नहीं ॥
जबते बिछुरे 'कवि बोधा' हितू, तबते उर दाह बुझातौ नहीं ।
हम कौन ते पीर कहै जिय की, दिलदार तौ कोऊ दिखातौ नहीं ॥२४०।

सीतल समीर उर तीर सौ लगत है री,
हरी-हरी बेलिन पै पावक पजार दै ।
दादुरन दूरि कर, पिकन पकरि दै री,
बागन के बाहर मधुप-मोर मार दै ।।
पावस मे पिय बिन बिपति बढावत ये,
सु जीवन जिवैवे के उपाय उपचार दै ।
दामिनी दबा कर तू बादर बिदा करे री,
बुदन बरजि कर बगन बिडार दै ।।२४१।।

*

लहलही लौनी-लौनी लता लखि-लखि आली,
प्यारे बनमाली बिन देखै हिए लरजै ।
व्याकुल वियोगिनी न गेह-गेह औ ये गाँव,
काहू को न जानै, कोऊ हरजै, न मरजै ।।
है री पुन्यवत कोऊ ऐसौ 'परसाद', जौन-
सुनत ही मेरी जानि लेय ये अरजै ।
पौन की झकोरन को, झिल्लिन के सोरन को,
घन-घटा घोरन को, मोरन को बरजै ।।२४२।।

*

अनल की लूकै फूकै देत बिरहानल को,
तन भहराय, घहराय घन गरजै ।
कोकिला की कूकै हूकै होत हिय 'हरीराम'
हाय-हाय एतौ ये पपीहा पापी नरजै ।।
हरी भूमि जल भरी, देखि सुधि-बुधि हरी,
हरी परदेस, अरी करी पच सर जै ।
बरही बिदारत है बिरही के उरन को,
दई निरदई कोऊ बरही न बरजै ।।२४३।।

*

प्रीतम-गौन, किधौ जिय भौन, कै मारक-भौन भयानक भारौ ।
पावस-फूल, कै पावक-सूल, पुरंदर-चाप, कै सुदर आरौ ।।
सीरी बयारि, किधौ तरवारि है, बारिद-वारि, कै बान बिसारौ ।
चातक-बोल, कै चोट चुभै चित, इंद्र-बधू, कै चकोर कौ चारौ ।।२४४।।

आई रितु पावस 'प्रताप घनघोर भारी,
सघन हरी री बन मडन बढाए री।
कोकिल-कपोत-सुक, चातक-चकोर-मोर,
ठौर-ठौर कुंजन मे पंछी सब छाए री॥
जमुना के कूल, औ कदंबन की डारन पै,
चारो ओर घोर सोर मोरन मचाए री।
एरी मेरी बीर ! अब कैसे कै मै धीर धरौ,
आए घन स्याम, घनस्याम नहि आए री॥२४५॥

*

स्वेत-स्वेत बकके निसान फहरान लागे,
ऐचि-ऐचि चपल कृपान चमकाए री।
घहर भुसुंडी की अवाज सी करन लागे,
बुंदन के झरनन झीने झरि लाए री॥
भनत 'प्रताप' रतिनायक नरेस जू ने,
धीर-गढ तोरिबे को पावस पठाए री।
ए री मेरी बीर ! अब कैसे कै मै धीर धरौ,
आए घन स्याम, घनस्याम नहि आए री॥२४६॥

*

घेरि-घेरि घहरि-घहरि घन आए घोर,
तापै महा मारुत झकोरत झरप सौ।
सुनि-सुनि कूकनि मयूरन की बीर ! मै तौ,
राख्यौ निज प्रान यमराजहिं अरप सौ॥
भीत भरी भौन ते कढौ न 'कमलापति' मै,
तऊ बेधै डारै हियौ तडित तरप सौ।
गावन मलार कौ, सुहावन लगै न, मन-
भावन बिना री मोहि सावन सरप सौ॥२४७॥

*

सावन के दुख-दावन ये, घनस्याम बिना घन आन सतावै।
तैसे मिलै तिन्है आनिय मोर, सु जोर कै सोर जरे पै जरावै॥
प्यारे कौ नाम सुनाय सखी, हिए पापी पपीहा ये सूल उठावै।
नेह नबेली मरी अब हौ, दिन दोइक पीय जो और न आवै॥२४८॥

कारे-कारे बादर डरावने लगत अब,
दादुर की धुनि सुनि भूलै दसा तन की ।
बुद की भकोर झकझोर पुरवाई करै,
हरै मन मोर, सोर चहूँ ओर बन की ॥
हरी हरी लतिका करावै घरी-घरी याद,
इद्र-वधू लखि लाल गुज-माल गन की ।
नद के कुमार बिन, लागै उर आर ऊधौ,
पपिहा-पुकार, झनकार झीगुरन की ॥२४६॥

★

प्रथमहि पावस कौ आगम बिलोकि 'नाथ',
तडपि-तडपि उठै दामिनी अचान की ।
ठौर-ठौर झीगुरन झनकि-झनकि बोलै,
द्रुमन की डोलै, डार पवन ढरान की ॥
मोरन कौ सोर सुनि उठै है भभकि काम,
कौन चतुराई सुधि करत पयान की ।
घहर घमडै घेरि-घेरि महि-मंडै, तैसी-
आवत प्रचडै, ये उमडै बदरान की ॥२५०॥

★

पौन हहराय बन-बेलि थहराय चारु,
लहराय सौरभ कदबन की सान त ।
झिल्ली झननाय, पिक-चातक पुकार उठै,
बिज्जु छहराय, छाय कठिन कृपान तें ॥
कहै 'करनेस' चमकत जुगनू नँघाय,
मेरे मन आई, ऐसी उक्ति अनुमान ते ।
बिरही दुखारे, तिन पर दई मारे, मानो-
मेघ बरसत है अगारे आसमान ते ॥२५१॥

★

खग जात उडे बिदिसौ-दिस मे, मग पावत ना जहँ कूक जगी ।
सब आक-जवास झुराय गए, जरि नारि पुकारत पीवपगी ॥
घर माँझ 'गुलाब' अँगार परे, भरि अंबर मे चिनगी उमँगी ।
अब धीर धरै उर का विधि री, जलधारन भीतर लाय लगी ॥२५२॥

सजल रहत आप, औरन को देत ताप,
बदलत रूप और बसन बरेजे मे ।
ता पर मयूरन के झुंड मतबारे मालै,
मदन मरोरै महा झरनि मजेजे मे ॥
'कवि लछिराम' रग साँवरौ सनेही पाय,
अरजि न मानै हिय हरषि हरेजे मे ।
गरजि-गरजि बिरहीन के बिदारै उर,
दरद न आवै, धरै दामिनी करेजे मे ॥२५३॥

★

आई रितु पावस, पपीहा बोलै दादुर ये,
छतियाँ दरत तापै बिरह मदी करै ।
'दौलत' कहत हाल सुदर सरस बाल,
लाल मनि भूषन बिसालन रदी करै ॥
चहुँ ओर चमकत चपलन चौक चारु
देखि-देखि मृगनैनी नैनन नदी करै ।
बिरहिन तियन के जीयन के गाहक ये,
नाह बिन नाहक बलाहक बदी करै ॥२५४॥

★

साँची कहै रावरे सो भाँवरे लगत माल,
आवै जिहि काल सुधि साँवरे सुजान की ।
फूल-भार भरी डार जैसे यम-जार ऊधौ,
कालिदी-कछार सजै धार ज्यो कृपान की ॥
चपला-चमक लगै लूक ह्वै अचूक हिए,
कोकिल-कुहूक बरजोर कोरवान की ।
कूक मोरवान की करेजा टूक-टूक करै,
लागत है हूक सुनि धुनि धुरवान की ॥२५५॥

★

आयौ असाढ़ हहा ! अबही ते, चढी चपला अति चापकै तूँदै ।
ह्वै है कहा सजनी ! रजनी-दिन, पापी कलापी मचाई है दूँदै ॥
स्याम बिना कल नाहि परै, असुँवान रहे भरि आँखनि मूँदै ।
ग्रीषम-भान सी सोहत सान सी, लागती बान सी बारिद-बूँदै ॥२५६॥

सीतल सुगंध मंद-मंद चहै डोलै पौन,
धुरवा धुरारे चहै धावै चहै धावै ना ।
प्यारे मनभावन के आवन की औधि गई,
बिरह सु कल चहै पावै, चहै पावै ना ॥
प्रानन की प्यासी सौत पावस प्रचंड भई,
अब कै कलापी चहै गावै, चहै गावै ना ।
जतन अनेकन सो, अब ना बचौगी बीर !
अब वो बिदेसी चहै आवै, चहै आवै ना ॥२५७॥

★

उमडि-घुमडि घन आवत अटान-ओट,
छन घन-ज्योति-छटा छटकि-छटकि जात ।
सोर करै चातक-चकोर-पिक चहुँ ओर,
मोर ग्रीव मोरि-मोरि मटकि-मटकि जात ॥
सावन लौ आवन सुनौ है घनस्याम जू कौ,
आँगन लौ आय, पाँय पटकि-पटकि जात ।
हिए बिरहानल की तपनि अपार, उर—
हार गज-मोतिन कौ, चटकि-चटकि जात ॥२५८॥

ग्रीषम तें तचि-बचि पावस मरूकै पाई,
तामै फूकै जुगुनू, भ्रूकै लागै पौन की ।
हूकै उठै हिय मे, कनूकै लखै बुंदन की,
भिल्ली हूँ न मूकै, ये बिसासी बैरी भौन की ॥
चपला चहूँकै, त्यो-त्यो तन मे भभूकै उठै,
ऊकैं मारै मुरवा, कहौ मै कौन-कौन की ।
दादुर की हूकै घाव करत अचूकै उर,
कोकिल की कूकै, तावै बूकै देती नौन की ॥२५९॥

★

दिन-रैन की संधिन बूझिवे की, मति कोक-तमीचुरवान लगी ।
नदियाँ नद लौ उमडी, लतिका तरु तैसेन पै गुरवान लगी ॥
कहु 'सेवक' ऐसे मे कैसे जिऐ, जिहि काम तिया उर बान लगी ।
मति मोरिनी की मुरवान लगी, गति बीजुरी की घुरवान लगी ॥२६०।

भूमि भई हरित, सरित-सर उमडत,
सूझौ ना परत मग, पग दीजियतु है ।
नेह सरसावन सधावन लगे है 'सिह',
आवन की बार मे विदेस भीजियतु है ॥
सखिन की सीख सुनि, सींचिए न दुख-बेलि,
केलि तज कब त बिरह कीजियतु है ।
ए हो मनभावन ! लगे है पिक गावन,
सु ऐसे भरे सावन पयान कीजियतु है ॥२६१॥

★

सावन की रैन, मन भावन गोविद बिन,
देत दुख झारन मे झिल्लिन के सोर है ।
'कालिदास' प्यारी अँधियारी मे चकित होत,
उमडि-उमडि घन घहरत घोर है ॥
सूने कुज-मदिर मे सुदरी विसूरै बैठि,
दादुर ये दहकि मी लेत.चहुँ ओर है ।
हिए मे बियोगिनि के बिरह की हूक उठी,
कूक उठी कोयल, कुहूँक उठे मोर है ॥२६२॥

★

एक तौ बिदेसी बिन ऐसै ही दुखी है हम,
दूसरै प्रचड लागैं पावस सताने री ।
'बच्चन जू', बादर कौ आदर न मेरे यहाँ,
अजब अनारी आप बिरह बढाने री ॥
बरसिबे की हौस है, तौ जाय मथुरा मे बरस,
साँवरे मिलेगे तोहि सौत के ठिकाने री ।
अरज न मानै नैक, हरज हमारौ करै,
गरज न जानै, मेघ गरजन जानै री ॥२६३॥

★

गरजी घनघोर घटा चहुँ ओर, भयौ बिरहा तब ही सरजी ।
सर जी जु भए पिक-दादुर मोर, लिऐ रतिनायक की मरजी ॥
मर जी जु उठी पिय की सुधि लै, चपला चमकै, न रहै बरजी ।
बरजी अब कौन रहै सजनी, भयौ पावस मो जिय कौ गरजी ॥२६४॥

जा दिन ते प्रान रखवारे न पधारे ऊधौ,
तब ते हमारे उर भारे खेद है सबै ।
कोकिल कुहूक हूक लगै बिज्जु कला लूक,
टूक-टूक करै हियौ मेघ गरजै जबै ॥
घेरै दुख मैन, मति धीरज सकै न धरि,
आवत न चैन, दिन-रैन मन मे अबै ।
पैहै सुख नैन मम, लखै सुखमा के ऐन,
'आए सुख-दैन' ये बैन सुनि हौ कबै ॥२६५।

★

पवन-झकोरै झकझोरै, झोरै बुंद बोरै,
घने घन-घोरै बोरै, दोरै चहुँ ओरे री ।
बिज्जु-छटा कोरै, बिन मोरैजी रसाल कोरै,
आवत असाढ भारी ठोरै-ठोरे खोरे री ॥
जोरै प्रेम भोरे, चित धीरज बिथोरै नाँहि,
मानत निहोरे कान दादुर ये फोरे री ।
तोरै लाज, छोरै कुल-कानि बरजोरै बीर,
मोरन की सोरें मोरे मनहि मरोरे री ॥२६६॥

★

सावन सुहावन ह्याँ लागत भयावन सौ,
आवन अवधि अब सोचै गज-गामिनी ।
ऐहै धौ कबहूँ बलबीर ह्याँ, कै नाँहि ऊधौ,
कैसे धीर धरै ये अधीर ब्रज-कामिनी ॥
जहाँ-तहाँ जोगन की जोति जगै ज्वाल जैसी,
जम की जमाति सी जनात जात जामिनी ।
जारै है पपीहरा, पुकारै पीउ-पीउ टेरि,
घेर मारै बादर, दरेर मारै दामिनी ॥२६७।

★

पारथ कौ धनु घूमि गयौ, बरस्यौ घन घोर चहूँ दिसि तें ज्यो ।
लंकपती हू उतारि धरयौ धनु, टारि धरयौ रघुबीर बली त्यो ॥
एक ही है रस-बात नई, ये जू सालत प्रान अचभ यही यो ।
बैरी मनोज के हाथ रही , बरषा रितु एरी कमान चढ़ी क्यो ॥२६८॥

वर्षा-रूपक

बाजत नगारे घन, ताल देत नदी-नारे,
भींगुरन भाँभ, भेरी भृंगन बजाई है ।
कोकिल अलाप चारी, नीलग्रीव नृत्यकारी,
पौन बीन धारी, चाटी चातक लगाई है ॥
मनिमाल जुगुनू, 'मुबारक' तिमिर थार,
चौमुख चिराग चारु चपला जराई है ।
बालम बिदेस, नए दुख कौ जनम भयौ,
पावस हमारै लायौ बिरह-बधाई है ॥२६९॥

*

साँझ हू सकारे, भनकारे होत नदी-नारे,
पावस के माँभ भाँभ भिल्लिन तजत ये ।
दामिनि मसाल को दिखावै, ताल दादुर दै,
मोर चहुँ ओर नाँचि, नाटकौ सजत ये ॥
धुरवा मृदंगन की धीर धुँधकार ठान,
राते नैन मातक लगान को भजत ये ।
सोक कौ जनम ब्रज-ओक मे भयौ है ऊधौ,
साँवरे-बिरह तें है बधावरे बजत ये ॥२७०॥

*

भूमि नाँचै नर्तक से मोर एरी चहुँ ओर,
चचला अकास देव-नारि सी नँचति है ।
गायक से गान करै, चातक बिपिन घन,
गधर्व गावैं गीत आनँद रचति है ॥
'गिरिधरदास' देव फूलि बरसावै जल,
सुमन लुटावै तरु, बुद्धि यो जचति है ।
पावस कौ जन्म भयौ री, यासो सुखमा सो-
अवनि-अकास मे बधाई सी मचति है ॥२७१॥

*

स्याम घटा उत है, अलकै इत, चाप इतै, भ्रुव बंक धरी ।
उत दामिनि, दंत-दमंकै इतै, बग-पाँति उतै, इत मोती-लरी ॥
उत चातक पिउ ही पीउ रटै, बिसरै न इतै पिउ एक घरी ।
उत बूँद अखंड, इतै अँसुआँ, बरसा बिरहीन सो होड़ परी ॥२७२॥

जुगुनू उतै है, इतै जोति है जवाहिर की,
झिल्ली झकार उतै, इतै घुघुरू-लरै ।
कहै 'कवि तोष' उतै चाप, इतै बक भौंह,
उतै बक-पाँति, इतै मोती-माल ही धरै ॥
धुनि सुनि उतै सिखि-नाँच, सखि नाँचै इतै,
पी करै पपीहा उतै, इतै प्यारी सी करै ।
होड़ सी परी है, मनो घन घनस्याम जू सो,
दामिनी को, कामिनी को, दोऊ अक मे भरै ॥२७३॥

*

उत घनस्याम, इत बाम पट सोहै स्याम,
वो अभिराम, ये सुकाम सरसा की है ।
कहै 'नवनीत' रसनीति की तरग इतै,
उतै मद मेघ, इतै चंचला चलाकी है ॥
झुकि-झुकि, झूमै-झूमै, गरज-अरज भरे,
धुरवा मचाकी, इतै लक लचका की है ।
घुमडि घटान ही ते, उमडि अनग आयौ,
दोऊ ओर दीसत बहार बरसा की है ॥२७४॥

*

'संकर' ये बिथुरी लट है, कै भई सजनी ! रजनी अँधियारी ।
माल मनोहर मोतिन की उरझी उर पै, कै बही सरिता री ॥
दो कुच है, कै दु कूलन पै चकई-चक भोग रहे दुख भारी ।
स्वेद चुचात, 'क पावस तोहि बनाय गयौ घनस्याम बिहारी ॥२७५॥

*

अबुद आनि दिसा-विदिसा, सगरै तमही कौ वितान सौ तान्यौ ।
मेचक रग बसै जग मे, अति मोद हिऐं निसिचारिन मान्यौ ॥
पावस के घन के अँधियार मैं, भेद कछू न परै पहिचान्यौ ।
द्यौस-निसा कौ विवेक सु तौ, चकई-चकवान के बोलत जान्यौ ॥२७६॥

*

पावस निसि अँधियार मे, रह्यौ भेद नहि आन ।
रात-द्यौस जाने परत, लखि चकई-चकवान ॥२७७॥

ओढ़ै नील सारी, घन घटा कारी 'चिंतामनि',
कंचुकी-किनारी चारु चपला सुहाई है ।
इंद्रबधू-जुगुनू जवाहिर की जगा-जोति,
बग मुकतान-माल, कैसो छबि छाई है ॥
लाल-पीत-सेत वर बादर बसन तन,
बोलत सु भृंगी, धुनि नूपुर बजाई है ।
देखिबे को मोहन नवल नट नागर कों,
बरषा नवेली अलबेली बनि आई है ॥२७८॥

*

कारे-कारे धुरवा चिकुर चारु चमकत,
चंचला बरंगना, सु अति अलबेली है ।
पचरँग अंबर अडबर पटबरनि,
मुदित बदन, चद सुखद सहेली है ॥
जुगुनू-जँमाति नैन, बगुला-कतार हार,
केकी धुनि नूपर अनूप रस रेली है ।
'कवि सिवदास' दिन दूलहै मदन भूप,
बानक बनक बनी बरषा नवेली है ॥२७९॥

*

प्यार सो पहरि पिसवाज पौन पुरवाई,
ओढनी सुरग सुर-चाप चमकाई है ।
जग-जोति जाहर, जवाहर सी दामिनी है,
अमित अलापन की गरज सुनाई है ॥
'ग्वाल कवि' कहै, धाम-ग्राम लखि नाँचै-
राचै, चित-वित लेत, मोद माचत सुहाई है ।
बचनी विराग हू की, अति परपचनी सी,
कंचनी सी आज मेघमाला बनि आई है ॥२८०॥

*

बूंदन-बीर-बधूटिन तें जनु, मोतिन-सेंदुर माँग सँवारी ।
छूटि रहीं अलकै, तिनमें झलकै जुगनू की अली जनु न्यारी ॥
या तन झीनि झलाझल धारिक, धारिनदार सितारन सारी ।
आवत भूमि मनो नभ ते झुकि-झूमत, लूमत पावस नारी ॥२८१॥

उतै तौ सघन घन घिरि कै गगन, इतै-
बन-उपबन बन बनक बनाए है ।
तैसेई उलहि आए अंकुर हरित-पीत,
'देव' कहै विविध बटोहिन सुहाए है ॥
बोलै इत मोर, उत गरजै मधुर धुनि,
मानौ मन भूप जग जीति घर आए है ।
अंबर बिराजै बर, अबरन छाए छिति,
पीरे, हरे, लाल ये जवाहिर बिछाए है ॥२८२॥

*

पावस की साँझ माँझ, ताकि ये तमासौ खासौ,
बरसौ कियौ भान, दबी किरन दिखात है ।
ए री मेरी प्यारी, तैं निहारी है कै नाँहि कभूँ,
कैसी नभ न्यारी-न्यारी छवि छहरात है ॥
'ग्वाल कवि' सूही सेत, चंपकई, नीली-पीली,
धूमरी, सिंदुरी बदरी ये मँडरात है ।
मानहु मुसब्बर मनोज कौ मुकब्बा मजु,
फैलि परयौ, ताकी तस्वीरे उड़ी जात है ॥२८३॥

*

धुरवा कलिंदी-कूल, इंद्र-चाप बटमूल,
राजत अतूल अति आनद की साला सी ।
गरज मृदंग भारी, चातक अलाप चारी,
केकी चटकारी, पिक देत हटताला सी ॥
बडी-बडी बुंदन बखेरि पुहुपांजलि को,
धीरी पौन उघटि सुघटि पाँति आला सी ।
व्यौम रास-मडल मे नृत्य करै स्याम घन,
आस-पास दामिनी बिराजै ब्रजबाला सी ॥२८४॥

*

स्यामल गात, मनोहर वेष, सुरेस-धनुष तन सुंदर सारी ।
दामिनि लामिन हू नभ मे, लहराय झलाझल पीत किनारी ॥
साजि सिंगार फुहारन के करि, धारन हारन की लर प्यारी ।
आवत भूमि मनो नभ तें झुकि-झूमत, लूमत पावस नारी ॥२८५॥

बादर उतंग-अंग डोलत अनग भरे
बगन-कतार दंत दीरघ सँवारे है ।
चरखी चमक, तरकत औ गरज-गूज,
बरषै मदन निसि नीर के पनारे है ॥
'सोमनाथ' प्यारे नँद-नंद के बिरह जानि,
ब्रज मे कुमगन करोर हनकारे है ।
आए घन भारे, मै बिचार उर धारे अरी !
कारे रग वारे, ए मतग मतवारे है ॥२८६॥

*

मद भरे झूमै, नभ-भूमै परसत आवै,
भारे कजरारे कारे अति उनए नए ।
'द्विजदेव' की सौ, बक-पाँतिन के व्याज बहु,
दंतन सँवारे न्यारे-न्यारे छवि सो छए ॥
धीर धुनि बोलै, डोलै दिगति-दिगंतनि लौं,
ओज भरे अमित, मनोज फरमार ए ।
पावस पठाए आए, धीर-तरु तोरिवे को,
नीरद न होहि, मन-मथन मतग ए ॥२८७॥

*

झूमत झुकत भूमि-भूमि घूमि-घूमि चले,
भूमि सो भिरत मनो बल के उमंग ये ।
बार-बार गरज सुनावै बरजे न जाँहि,
नहीं है उदार, धार मद के तरंग ये ॥
दंत बक-पाँति तें डरावै बिन कत भारे,
अंकुस समीर हू न मानै कारे रंग ये ॥
करिऐ सहाय आय, या छिन मे स्याम घन,
होहि न सघन घन, मदन मतग ये ॥२८८।

*

नाँचत मोर, नँचावत चातक, गावत दादुर आरभटी मे ।
कोकिल की किलकार सुनै, बिरही बपुरे विष-घूँटैं घटी मे ॥
अंबर नाल घनी घनमाल, सु भूमि बनी बनमाल तटी मे ।
साँवरे-पीत मिलै झलकै, घन-दामिनि से घन स्याम पटी मे ॥२८९॥

दमकि दसौ दिसा दुनाली दौड दामिनी की,
घन के नगारे भारे उर उलझन के ।
झनकै झनाक, झु ड झींगुर बिगुल बाजे,
सनकै समीर तीर, सुक्र सरासन के ।।
सनकै समर मद मेचक झिलम धारै,
ठनकै नकीब दरप दादुर दमन के ।
मनकै मदन, बिन कामिनि कदनकै, ये-
आए बीर ! बादर, बहादर मदन के ।।२९०।।

*

लागत अषाढ, दल साजि चढयौ मेरे पर,
घेरे लेत मोहि बोलि टेरै जल सरजे ।
झिल्लिन के झु ड, बक-झु ड ते सुभट संग,
बोलत नकीब केकी काकै रहै बरजे ।।
चचला निसान आसमान फहरान लागे,
'भूधर सुकवि' कहै, येही पचसर जे ।
आधे-आधे बैन कहि राधे मे रह्यौ न चैन,
मैन पादसाह के नगारे आनि गरजे ।।२९१।।

*

चचला सी चौंकति, चहुँधा आँसू बरषत,
फैल तम केस की न सुधि उर धारी है ।
इद्र कोप भारी है, अँगारी बिरहागि बारी,
भूषन जडाऊ जोति रगन बिसारी है ।।
'सफर' बखानै, ये पपीहा पीव-पीव रटै,
लाज हंस जामै, गति दूर की निहारी है ।
सोभा लखि न्यारी, मन आपने बिचारी,
बरषा है ये भारी, कै बियोग वारी नारी है ।।२९२।।

*

झर नाँहि, बराबर बान जुरे, बक नाँहि, लगी पर ऊपर है ।
जुगुनू गन बूढन एकन आगि, परै भिरि भालन कौ भर है ।।
मुरवा अरु चातक-दादुर सोरन, जतु कुलाहल कौ गर है ।
बिरही जन जीवन के बध कौ, बरषा न सखी ! सर-पजर है ।।२९३।।

स्याम छबि प्यारे फिरै, धुरवा धरनि छ्वै री,
इन्द्र-धनु पीत पट चटक दिखायौ है।
दामिनि-दमकि दुति देत बेर-बेर सोई,
कुंडल अमोल लोल गति चमकायौ है॥
बिसद बलाकन की पाँति बनमाल, अति-
मंद-मंद मेद बाँसुरी लौं स्वर गायौ है।
आवन अवधि रही, प्यारे मनभावन की,
सावन सुहावन सो साज सजि आयौ है॥२६४॥

*

धमकि नगारन सो मेघन गरजि कीन्हो,
चपला चमकि किरपान दरसायौ है।
भूपति मनोज की ध्वजान फहरान लागी,
बक मँडरान आसमान भरि छायौ है॥
दादुर नकीब चहुँ ओर सो पुकार करैं,
मोरन की हाँक सुनि सुरन जनायौ है।
ऐसे समै जानि कै गुमान मत ठान प्यारी,
गाढे दल साजिकै असाढ चढि आयौ है॥२६५॥

*

नील पट तन पर घन मे घुमाइ राखौ,
दतन की चमक छटा सी बिचरति हौ।
हीरन की कीरन लगाइ राखौ जुगनू सी,
कोकिल-पपीहा-पिक बानी से भरति हौ॥
कीच अँसुवान के मचाइ 'कवि देव' कहै,
बालम बिदेस कौं पधारिवौ हरति हौ।
इन्द्र कैसौ धनु साजि, बेसर पहरि आजु,
रहु रे बसंत! तोहि पावस करति हौ॥२६६॥

*

चपला चट, मोर किरीट लसै, मघवा धन छोभ बढावत है।
मृदु गावत आवत, बीन बजावत, मत्त मयूर नँचावत है॥
उठि देखि भटू! भरि लोचन, चातक चित्त की ताप बुझावत है।
घनस्याम घने घन वेष धरै, सो बने बन तें ब्रज आवत है॥२६७॥

कपू बन-बागन, कदंब कपतान खरे,
सूबेदार साहब समीर सरसायौ है ।
कहै 'पद्माकर' तिलगी भीर भृंगन की,
मेजर तमूरची मयूर गुन गायौ है ।।
का हट करै है, घरराहट अटानन की,
ये ही अरराहट अराबन कौं छायौ है ।
मान मुख भगी सफजगी ये निसगी लिऐ,
रगी रितु पावस, फिरगी बनि आयौ है ।।२९८।।

*

तरल तिलगन के तुग तेह तेजदार,
कानन कदंब कौ, कदंब सरसायौ है ।
सूबेदार मोर, बग-दादुर हवलदार,
जमादार औ तबूर पिक मनभायौ है ।।
'ग्वाल कवि' बाढै गरराट घन गहन की,
कंपनी कौ कंपू, झला होय छवि छायौ है ।
भूपत उमंगी, कामदेव जोर जंगी, ग्यान-
मुजरा को पावस, फिरगी बनि आयौ है ।।२९९।।

*

घटा घन छतरी पै बग-पाँति झाल रहे,
इद्र-धनु बाँस, रग विविध मढ्यौ फिरै ।
दामिनी दमक सोई झझा की झमक मानो,
बेलि हरी भूमि वृच्छ तकिया कढ्यौ फिरै ।।
'बीर' कहै सीतल समीर ही कहार किऐ,
धुरवा खवास रास बिध सो बढ्यौ फिरै ।
प्यारी पहिचान, पति-पतिनी की पौरि-पौरि,
पंचवान पावस की पालकी चढ्यौ फिरै ।।३००।।

*

घोर घटा घहरै नभ मडल, तैसिय दामिमि की दुति जागत ।
धावत धूर भरे धुरवा, मुरवा गिरि-सृंगन पै अनुरागत ।।
फैली नई हरियारी निहारि, सयोगिन के हियरा सुख पावत ।
रीति नई रितु पावस मे, ब्रजराज लखे रितुराज से आवत ।।३०१।।

सोहत सुभग बैल बाहन बिमल वायु,
बिसद बकाली सेष–हार लपटायौ है ।
आदर सो लाय बर बादर बिभूति अंग,
दादुर उमंग धुनि डमरू बजायौ है ॥
कारी घटा गज छाल, धारा जटा है बिसाल,
दामिनि-छटा त्रिसूल सुंदर सुहायौ है ।
काटि है कलेस, मोद दैहै री भट्टू विसेष,
धरिकै महेस–भेष सावन लखायौ है ॥३०२॥

★

घन की घनक घन–घटा घनकत आली,
दामिनि दमक देत दीपक प्रकास है ।
बूंदन के फूल जाल धनु लै बिसाल माल,
आए झुकि मेघ, सो प्रनाम कौ हुलास है ॥
मोरन के सोर चहुँ ओर विनय 'दीनदयाल',
पवन झकोर जोर करौ आस–पास है ।
पूजन करत प्रीति–रीति प्रकटाय, ये—
पावस न होय, परमेसुर कौ दास है ॥२०३॥

★

अंकुर कुसुम इंद्रबधू गन चहुँ ओर,
करिकै भगौहै राखे सूखिवे को पट है ।
रूप घनस्याम घटा छटा सिर सोहत है,
जल ही विभूति भूति पौन ताके तट है ॥
हहरि अवाज सुनी जात घर–घर जाकी,
भरिगौ तलाब बडौ खप्पर अघट है ।
जग के वियोगिन को काम निसि-दिन बाढयौ,
सावन ह्वै योगी यो दिखायौ मरघट है ॥३०४॥

★

कढी दिसि दक्खिन तें, घोर घन-घटा चढी,
बढी बिरही को दुख दैन ही को नम है ।
'ठाकुर' झरोखै ह्वै, तनक ताकी तीय कह्यो,
तू री ताकि आली या उतग रंगतम है ॥

कह्यौ वाहि मेघ सो न मानै कहै जानै तन,
गरजत आवै यासो जान्यौ योग हम है ।
है न बिज्जु, होत किरवारौ दृड चम-चम,
जीव आनै आवत जमात जोरे यम है ॥३०५॥

★

गरज पुकार सो बियोगी तन छार भए,
बुंदै विष बारि परै महा विषधारी के ।
धुरवा अनेक फन मडन को बिज्जु मनि,
चमकि-चमकि चित्त होत नर-नारी के ॥
बौर फैन झरै, वायु मत्र सो सँचार करै,
देसन मे रोरि परै 'सूरत' डरारी के ।
भामिनि भँडारे, विष बामी तें निकारे कान्ह,
फिरै घन कारे, नाग पावस खिलारी के ।३०६॥

★

घूमत घुमड मतवारे से महान घन,
धूमत नगारे ज्यो धुकार धुनि रो मढे ।
धुरवा धमक अद्भुत से तमक उठी,
दामिनी दमक चारो ओर अस्त्र से कढे ॥
ऐसी सुधि पावस प्रबल दल 'दयाराम',
आयौ बिरहीन पै अतक अति ही बढे ।
बरषा लगी री बाम बान बरखा सी होत,
करखा से पढत मयूर गिरि पै चढे ॥३०७॥

★

आए से अमल झलाझल हू के टोपै सबै,
विधि कारीगर ने विचित्र विसतरे है ।
रंगत गरूरे, लाल लहर ललाम लौनै,
छवि की उमगन सुहाए जल भरे है ॥
'ठाकुर' कहत पूरे पानिप के मेरी बीर !
सुखमा भरे है, ताते उपमा न करे है ।
पावस फकीर के, कै मदन अमीर के, ये-
बासन चिनी के, नीके ठौर-ठौर धरे है ॥३०८॥

स्याम सम बादर, तड़ित पीत चादर से,
आदर सी बात लगै मीठी घन घोर से ।
छाती बनमाल मे लसै है धुन 'देवराज'
मोतिन की पाँति बक बसी टेर मोर से ।
भनत 'दिवाकर' सु आनन निसाकर से,
हीरन से जुगुनू धमारन के सोर से ।
ए रे पापी पावस ! अमावस की राति अस,
कस अनुहारि पिय तोरे मन चोर से ॥३०६॥

*

उमडि–उमडि नदी–नद कूल बोरत है,
जोर जलधारन सो सूझत कहूँ ना है ।
परम प्रचड पौन धावनि त्यो धुरवा की
झिल्लिन कौ सोर सुनै होत कान सूना है ॥
'गिरिधरदास' महा बिज्जु कौ प्रकास सोई,
लागै दीह दुसह दवानल सौ दूना है ।
एरी बाल जोई, स्याम बिनु सुख खोई, ये–
पावस न होय, प्रलय–काल कौ नमूना है ॥३१०॥

*

स्याम घटा नाँहि, एतौ धूम की छटा है छाई,
बीजुरी कहाँ है, एतौ झाकै उठै धुर मे ।
गरज कहाँ है, घोर फाटै ऐसी थवन की,
जुगुनू कहाँ है, एतौ चिगै उठै सुर मे ॥
मेघ बुंद नाँही, ये बुझावत फिरत 'देव',
तिनही के छींटा देखि आवत अतुर मे ।
लाल बिन दावादल अबकै बचावै कौन,
ए री ! आग लागी है पुरंदर के पुर मे ॥३११॥

*

घन घोरन घोर निसान बजै, बगुलान धुजा–गन खेचर कौ ।
चपलान 'गुलाब' कृपान कटी, जलधारन ही झर है सर कौ ॥
धुनि दादुर-चातक–मोरन की न, कुलाहल है अरि के घर कौ ।
धरि धीर हिए, बरषा न भटू, गिरि ऊपर कोप पुरदर कौ ॥३१२॥

'सेनापति' उनए नए जलद सावन के,
चार हू दिसान घुमरत भरे तोय के ।
सोभा सरसाने, न बखाने जात काहू भॉति,
आने है पहार मानो काजर के ढोय कै !!
घन सो गगन छयौ, तिमिर सघन भयौ,
देखि न परत मानो रवि गयौ खोय कै ।
चार मास भरि, स्याम निसा के भरम करि,
मेरे जान याही ते रहत हरि सोय कै ॥३१३॥

★

दैहौ दृग अंजन तिहारे हठ मंजन कै,
पावक सो जावक, हौ पाँयन दिवाय हौ ।
सूहौ सिर सारी,डारि झूलि हौ हिडोरे माँझ,
धीरे से सुरन कछु गुन-गन गाय हौ ॥
हठ नाँही कीजै, हाहा रच्छाकर बाँधिवे की,
सुनउ सयानी ! याकौ भेद हौं बताय हौ ।
मेरे तन-ग्राम बैठौ बिरह 'नरेस' नाम,
ह्वैहै चिरजीव, यातें भूलि ना बँधाय हौ ॥३१४॥

★

आयौ रितु पावस लौ यौवन चढाई करि,
सैसव कौ फद बंद छोरन चहत है ।
ग्रीषम समान मिटयौ, जात गुरु-जन भीत,
पवन सुछंदता झकीरन चहत है ॥
काम कौ घनेरौ घन, बरसि सनेह बुद,
तन-मन-प्रान सबै बोरन चहत है ।
बयस नदी मे 'लाल' प्रेम कौ प्रवाह बाढयौ,
लोक-लाज-सीमा हाय तोरन चहत है ॥३१५॥

शरद

★

राशि—

कन्या+तुला

★

मास—

आश्विन—कार्तिक

★

अमल अकास, प्रकास ससि, मुदित कमल—कुल, कास ।
पथी पितर पायन नृप, सरद सु 'केसवदास' ।।

ऋ० २१

शरद–परिचय

शरद भी एक मनोरम ऋतु होती है। यद्यपि इसका महत्व बसत और वर्षा के समान नही है, तथापि इसमे कुछ ऐसी विशेषताएँ है, जिनके कारण वह अन्य चार ऋतुओ की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण मानी गयी है।

वर्षा ऋतु निस्सदेह अत्यत सुहावनी ऋतु होती है, किंतु दिन–रात की झडी, बाढ़, कीचड, मच्छड और बीमारी के कारण उससे भी मन ऊबने लगता है। उस समय शरद की शात, शीतल और सुखद ऋतु लोगो को हर्ष और सतोष प्रदान करती है।

घनघोर वर्षा के कारण स्थान–स्थान पर एकत्रित कीचड और पानी शरद के आगमन होते ही सूखने लगता है। नदी–नालो मे भयकर बाढ आ जाने के कारण आवागमन मे जो बाधा उपस्थित हो गयी थी, वह अब दूर होने लगी है। राहगीर और पथिक जन अब स्वच्छदता पूर्वक यत्र–तत्र आने–जाने लगे है। सर–सरिताओ का गदला जल निर्मल होने लगा है। तालाबो मे कमल के खिले हुए फूल और उन पर भ्रमर गण गुजार करते हुए दिखलायी देते है।

वर्षा ऋतु मे आकाश मडल प्राय मेघाच्छादित रहता था, इसलिए रात्रि में चद्रमा के दर्शन कठिनता से होते थे। अब शरद के आते ही आकाश निर्मल हो गया है। कृष्ण पक्ष को रात्रि मे तारागण चमचमाते हुए दिखलायी देते है, और शुक्ल पक्ष की रात्रि में चद्रमा का पूर्ण प्रकाश फैल जाता है।

शरद ऋतु के चद्रमा का प्रकाश और उसकी चाँदनी–विशेष रूप से दर्शनीय है। कवियों ने बडे उल्लास पूर्वक इनका मनोहर वर्णन किया है। उनकी दृष्टि में चंद्र और चद्रिका के कारण ही इस ऋतु का अत्यधिक महत्व है। वास्तव में शरद की चाँदनी रात इतनी अधिक प्रभावोत्पादक है कि इसे देख कर मुरझाए हुए मन भी खिल उठते है। इसके कारण उदासीन और विरक्त व्यक्तियों के मनों मे भी गुदगुदी पैदा होती है और वे केलि–क्रीडा और आनद–विहार की ओर आकर्षित होते है।

शरद ऋतु की इसी मनोरम चाँदनी रात में भगवान् कृष्ण की भुवन-मोहनी बशी बजी थी, जिसे सुन कर ब्रज की सहस्रों गोपियाँ अपनी सुध–बुध भूल कर और अपने आत्मीय जनों को त्याग कर अकेली दौड पडी थी।

भगवान् श्री कृष्ण ने गोपियो की इच्छानुसार उसी सुखद वातावरण मे उनके साथ गायन–वादन और नृत्य संयुक्त रास–क्रीडा की थी। शरद् ऋतु की निस्तब्ध एव नीरव रात्रि मे सु दरी ब्रज-बालाओ के ककन–किंकिनि और नूपुरों की झनकार, उनके अग–सचालन और पदाघात के कोमल मधुर रव तथा गायन–वादन की ताल–स्वर युक्त सगीत–ध्वनि से दसों दिशाएँ गूँज उठी थीं।

ब्रजभाषा कवियो ने शरद् ऋतु के मोहक प्रभाव के अतिरिक्त उसके प्रकाशमान चद्र और उसकी उज्ज्वल चद्रिका का विशेष रूप मे वर्णन किया है। इसके साथ ही उन्होने कृष्ण की बशी और उनकी रास–लीला का भी ऐसा प्रभावशाली एव विस्तृत कथन किया है, जिसे पढ कर और सुनकर सहृदय एव रसिक जनो के मुख से अनायास वाह–वाह की ध्वनि निकल पडती है।

आश्विन

प्रथम पिंड हित प्रगट, पितर पावत घर आवै ।
नव दुरगन नर पूजि, स्वर्ग अपवर्गहि पावै ॥
छत्रन दै छितिपतिहि, लेत भुव लै सँग पंडित ।
'केसवदास' अकास अमल, जल-थल जन मंडित ॥
रमनीय रजति-रजनी सरुचि, रमा-रमन हू रास-रति ।
कल केलि कलपतरु कार महि, कत न करहु बिदेस गति ॥१॥

**

केतकी–कुमुद–कंज, केबरा–कदंब–कुंद,
कुसुम कलित भए कानन कतार में ।
कूज–कुंज केकी–कीर–कोकिला कलोल करें,
कोकी-कोक किलकें, त्यों कालिंदी-कछार में ॥
कीरति-कुमारी कंज–नैनी कल कमला सी,
काम की सी कलना कलित करतार में ।
'गिरिधरदास' करैं केलि कोक कलाधर,
कोटि-कोटि भाँति कान्ह कुँवर कुवार में ॥२॥

**

कार्तिक

कलित कलाधर में कुंद कलिका कतार,
कंज पै कमान कीर पावस बिफल है ।
कानन में करनफूल । 'गिरिधरदास', कांति–
कुंदन सी, केहरि सी कमर कुसल है ॥
कुंतल कुटिल कंठ कंबु सी कपोत मोहै,
देख कलिताई काम–कामिनी कतल है ।
ऐसी कमनीय कंजमुखी कंत कान्हर सों,
करै केलि कातिक में करन कमल है ॥३॥

**

बन–उपबन, जल–थल–अकासु, दीसंत दीप गन ।
सुख ही सुख दिन-राति, जुवा खेलत दंपति जन
देव चरित्र बिचित्र, चित्र चित्रित आँगन–घर ।
जगत-जगत जगदीस, जोति जगमगति नारि-नर ॥
दिन दान–न्हान गुन–गान हरि, जनम सफल करि लीजिऐ ।
कहि 'केसवदास' बिदेस मत, कंत न कातिक कीजिऐ ॥४॥

शरद

शरद-विहार

(राग बिहागडो)

जमुना-पुलिन मल्लिका फूली, सरद-चद उजियारी ।
मंडल बीच स्याम घन सुदर, राजत गोप कुमारी ।।
प्रगटित कला अनूप रूप तिहिं, औसर लाल बिहारी ।
सीस मुकुटकु डल की झलकनि, अलक बनी घुँघरारी ।।
कंबु कठ ग्रीवा की डोलनि, छीनि लई लहकारी ।
धाय-धाय झपटत, उर लपटत, उडपति-रविगति न्यारी ।।
निरतत-हँसत मयूर मडली, लागत सोभा भारी ।
वेनुनाद-धुनि सुनि सुर-नर-मुनि, तन की दसा विसारी ।।
'श्री विट्ठल गिरधरन' लाल की, बानिक पर बलिहारी ।।५।।

(राग केदारौ)

सरद-उजियारी कैसी नीकी लागै, निकस कुज त ठाडे ।
बरन-बरन के फूल, फूलन के आभूपन, सोधे भीजे बागे ।।
गावत राग-रागिनी यों मिल, मन मिल्यौ राग, केदारौ रागे ।
'हरिदास' के स्वामी स्यामा-कुंजबिहारी, कछुक रजनी जागे ।।६।।

(राग केदारौ)

श्री राधिका सग सरद-रजनी उदित पून्यौ चद ।।
विविध चित्र विचित्र चित्रित, कोटि-कोटिक बद ।
निरखि-निरखि विलास विलसत, दपती सुख-कद ।।
मलय चदन अंग लेपन, परस्पर आनद ।
कुसुम-बीजना ब्यार ढोरत, सजनी 'परमानद' ।। ७ ।।

(राग केदारौ)

नव निकुज नव भूमि रगमगी ।
नवल बिहारीलाल लाडिलौ, नवल सरद की जोन्ह जगमगी ।।
नव सत साजि सकल अँग सुदरि, नवल बदन पर अलक सगबगी ।
'श्रीविट्ठलविपुल' बिहारी के अँग सँग, लाडनि लाडलि सहज उर लगी।।८।।

शरद–रास
(राग–बंगाल)

नृत्यत रास कमल-दल–नैन ।
सरद सुरैन अति सुख–दैन ॥
श्रीबृंदावन बंसीवट तट, जमुना–पुलिन पवित्र ।
पूरन चंद अमंद किरनि करि, रंजित रुचिर विचित्र ॥
नवल फूल फूले अनुकले, नाना रंग सुरंग ।
मधुकर–पुंज लुब्ध मधु गुंजत, लिऐ संग अरधंग ॥
त्रिविध-पवन मन-रवन सहायक, सुखदायक सब काल ।
परसत अंग–अंग सचुपावत, उपजावत रस–जाल ॥
द्वेह बीच साच एक–एक तन, विहरत स्याम सुदेस ।
कनक–कनी बिच मनहुँ नीलमनि, सोहत सुघर सुबेस ॥
मध्य जुगल मनहरन बिराजत, छाजत छवि जु अपार ।
राग–रंग बहु भाँति भेद भर, तरत रंग बिस्तार ॥
नूपुर कंकन–किंकिनी की धुनि सुनि लज्जित कल हंस ।
भुज फरकनि, तरकनि कंचुकि, कच छुरि जु रहे छुरि अंस ॥
कुंडल-झलकि ढलकि सीसनि की, भलक भाल छवि देत ।
पलक ललक नग चलक कलक मुख, वलक संगीत सहेत ॥
पग-पटकनि, पट-झटकनि, खटकनि, भूपन-नख चटकानि ।
लटकनि हार, मुखन की मटकनि, अंग अंग लटकानि ॥
मंद हँसन, भौंहन की लसन सु खुलनि कसनि तन कूल ।
रसन बसन तन सिथिल सुस्रम-कन किरनि सिरन तें फूल ॥
पावन धावन धरनि सुहावन, चावनि नृत्य करते ।
गावन सुरहि मिलावन पियहि रिझावन वच उचरते ॥
बंसी बजावे, ग्राम जमावे, कल सुर अधिक चढाय ।
निकट आय परसावे उर वर, अद्भुत तान बढाय ॥
डोलन मुकुट, सुकुंडल लोलनि, थेइ–थेइ बोलनि बोल ।
पट झट-झोलनि, ओप अतोलनि, ढरि-ढरि दैन तँबोल ॥
परसत, भरसत, सरसत तन, मन मधुर सुधा-रस पाय ।
स्रमित जानि, स्रम-कन पिय पोछत, कहि रस-बैन सुहाय ॥
क्रीडत बहुगत रास-विलासहि, थकित भए दोउ चंद ।
'रूपरसिक' ये सोभा निरखत, बाढत अति आनंद ॥ ६ ॥

(राग टोड़ी)

विमद कदंब सघन वृंदाबन,
रच्यौ रास तरनि–तनया–तट ।
सरद–निसा, उडुपति–उजियारी,
पूरयौ नाद मुरली नागर नट ॥
स्रवन सुनति चलीं ब्रज–सुंदरि,
साजि सिंगार पहिर भूपन–पट ।
अति हुलास कुमुदिनी प्रफुलित,
निरखि लाल ठाडे बंसी–वट ।'
मंडल मधि नाँचत पिय–प्यारी
गावत स्वर टोडी तान बिकट ।
'दास सखी' देखत नैनन भरि,
' वारि–फेरि डारौ कोटि मदन भट ॥१०॥

*

फूली कुमुदिनि सरद सुहाई ।
जमुना तीर धीर दोउ बिहरत, कमल नील पीत कर माई ॥
नील–बरन स्यामा रुचि कीनी, अरुन बरनता हरि मनभाई ।
'श्रीभट' लपटि रहे अमनि कर, मानो मरकत-कनक जराई ॥११॥

(राग खट)

रास–विलास रच्यौ नागर नट ।
जुरि मंडल नितंत ब्रज–बनिता
नवल निकुंज सुभग यमुना–तट ॥
उपजत तान बधान सप्त स्वर,
बाजत ताल मृदंग, बीन–रट ।
सन्मुख ह्वै नाँचत पिय–प्यारी,
लेत सुगध चाल गति अटपट ॥
रसिक बिहार निरखि ससि हारयौ,
सरद–निसा भूल्यौ अपनी अट ।
'कृष्णदास' गिरिधर श्री राधा–
राजत, मेघ मानो दामिनि–घट ॥१२॥

(राग मारग)

करत हरि नृत्य नव रग राधा सग,
लेत नव गति भेद चच्चरी ताल के ।
परसपर दरस, रसमत्त भग, ततथेई-
थेई गति लेत सगीत सु रसाल के ॥
फरहरत बरही वर, थरहरत उर-हार,
भरहरत भ्रमर वर, बिमल बन-माल के ।
खसित सित कुसुम सिर, हँसत कुंतल मनो,
लसत कल झलमलत, स्वेद-कन-माल के ॥
अग-अगन लटक, मटक भृंगन भौह,
पटक पट, ताल कोमल चरन-चाल के ।
चमक चल कुडलन, दमक दसनावली,
विविध विद्युत भाव लोचन विसाल के ॥
बजत अनुसार द्रिम-द्रिम मृदग-निनाद,
झमक झकार कटि-किंकिनी भाल के ।
तरल ताटक तडित, नील नव जलद मे,
यो विराजत प्रिया पास गोपाल के ॥
जुबति जन जूथ, अगनित बदन चद्रमा,
चद भयौ मद उद्योत तिहिं काल के ।
मुदित अनुराग ,बस, राग-रागिनी तान,
गान गति गर्व रंभादि सुर--बाल के ॥
गगन-चर सघन रस मगन बरषत फूल,
वारि डारत रत्न जटित भर थाल के ।
एक रसना 'गदाधर' न बरनत बनै,
चरित्र अद्भुत कुँवर गिरिधरनलाल के ॥१३॥

(राग विहागडौ)

निरतत रास मे पीय-प्यारी ।
जमुना-पुलिन सुभग वृदाबन, सरद चद उजियारी ॥
बाजत ताल मृदग-झाँझ-ढप, सप्त सुरन गति न्यारी ।
उरप-तिरप गति लेत सुलप अति, लाडिली-लाल बिहारी ॥
जै-जै कहि बरसत कुसुमावलि, सुरन सहित सुरनारी ।
'श्री विट्ठल गिरिधरन' लाल पर, सरवस डारत वारी ॥१४॥

(राग भैरव)

वृंदावन उज्जल वर जमुना-तट नंदलाल,
गोपिन सँग रहस रच्यौ सरद-जामिनी ।
निरतत गोपाललाल,सँग मे ब्रज-बाल बनी,
अद्भुत गति लेत कोक कलित कामिनी ॥
लाग डाँट सुर-बँधान, गावत अचूक तान,
ततथेइ-ततथेइ थेई गति अभिरामिनी ।
गोपिन सँग स्यामसुंदर मंडल मधि सोभित अति,
विहरत बहु रूप माना मेघ-दामिनी ॥
थाक्यौ नभ चंद,देखि रैनि-गति,सिथिल भई-
लखि हरि गजपति संग गज-गामिनी ।
'हरीचंद' सोभा लखि, देव-मुनि नभ विथकित,
मानी हरि माथ' सबै ब्रज-भामिनी ॥१५॥

(राग नट)

आजु बन नीकौ रास रचायौ ।
पुलिन पवित्र सुभग जमुना-तट, मोहन वेनु बजायौ ।
कर-कंकन किंकिनि-धुनि नूपुर, सुनि खग-मृग मचुपायौ ।
युवती मंडल मध्य स्याम घन, नट-नारायन गायौ ॥
ताल मृदंग, उपंग, मुरज, ढप, मिलि रससिंधु बढायौ ।
विविध विसद वृषभानु-नंदिनी, अंग सुघंग दिखायौ ॥
अभिनय निपुन लटक-लट लोचन, भ्रकुटि अनंग लजायौ ।
ततथेइ-ततथेइ लेत नौतन गति, पति ब्रजराज रिझायौ ॥
परम उदार रसिक चूडामनि, सुख-वारिद बरसायौ ।
परिरंभन, चुंबन, आलिंगन, उचित जुवति जन पायौ ॥
बरषत कुसुम मुदित नभ-नायक, इंद्र निसान बजायौ ।
'हित हरिवंस' रसिक राधापति, जस-वितान जग छायौ ॥१६॥

(राग टोडी)

निरतत राधा-नंदकिसोर ।
ताल मृदंग सहचरी बजावत, बिच-बिच मोहन मुरली कल घोर ॥
उरप-तिरप पग धरत धरनि पर, मंडल फिरत भुजन-भुज जोर ।
सोभा अमित विलोकि 'गदाधर', रीझि-रीझि डारत तृन तोर ॥१७॥

शरद-छवि

आओ लखै छवि सरद की, करि दृगि ससय भूरि ।
मिलि लेहि स्वागत तास, जास उजास चहुँधा पूरि ॥
नहि प्रात बात समात अग, उमग हिय अधिकाय ।
जलजात-पातन कोर हिम, जलकीय चचल आय ॥
मालती सौरभ, चमेली छिटकि, कलिकनि पास ।
नदि-कूल फूले लखि परत, बहु स्वेत-स्वेत जु कास ॥
जहँ कज बिकसित, कुमुद बहु, अरु केतकी कल कज ।
गुज कर रस लेत, डीमत रसिक पटपद पुज ॥
पिय-पीय पपिहा करि रह्यौ, अब कहँ मिलै जल-स्वाँति ।
उन्नत मुखहि करि व्योम निसि नहि लखत मोरन-पाँति ॥
सरद बिन छिन, सालि सोहत जरद बहु लहराय ।
पकहु नसानी, सक का की ? चलहि सब इतराय ॥
नील निरमल नभ लसै, निसिनाथ मजु प्रकास ।
सुदर सरोवर सलिल मे, ता सुघर छाया-भास ॥
चारु चमकनि चाँदनी, चूनर धरै छवि-जाल ।
माधुर्य मय ससि जासु मुख, उडुगन सुमौक्तिक माल ॥
नील उत्पल चारु चख, औ चपल लहरी सैन ।
मानहुँ चलावति मोहिवे युव जन उरहि सुख दैन ॥
सारस सरस नव गान, मनु कटि किंकिनी सरसाय ।
रव मत्त बाल मराल नूपुर कलित ध्वनि जनु छाय ॥
कुसुम कुसुमित काँस के मधु हास सोभा पाय ।
रितु-सारदी, किधौं कामिनी कमनीय ये दरसाय ॥
'सतदेव' प्रेमिन प्रेम बस टरकाय पावस वाय ।
सज्जन दरद-दारक प्रिये ! आयौ सरद सुखदाय ॥१८॥

*

बोरत प्रेम-पयोनिधि मे, रितु सारदी आई दया निज जोरत ।
टोरत-फोरत ग्रीषम कौ बल, वारिद कौ बल तोरत-मोरत ॥
लोरत खजन पै 'सतदेव जू', छोरत काँस मे साँस बहोरत ।
चोरत मजु चितै चित चायनि, चाँदनी चारु पियूष निचोरत ॥१९॥

★

अरुन सरोरुह कर-चरन, दृग खजन, मुख चद ।
समय आइ सुदरि सरद, काहि न करति अनद ॥२०॥

शरद-वर्णन

हस-उर मोद छए, खजन प्रगट भए,
पथिन ने पथन की ताप बिसराई है ।
पल्लव नवीन भए, सुमन रँगीन भए,
मीन भए मुदित, अमल जल पाई है ॥
'लाल बलबीर' मनमोहन मगन भए,
जाय बनराज जू मे बाँसुरी बजाई है ।
बिमल अकास भए, चद के प्रकास भए,
तिमिर के नास भए, सरद रितु आई है ॥२१॥

*

पावस बिकास, ताते पायौ अवकास, भयौ-
जोन्ह कौ प्रकास, सोभा ससि रमनीय को ।
विमल अकास, होत वारिज विकास,
'सेनापति' फूले कास, हित हसन के हीय को ॥
छिति न गरद, मानो रँग है हरद, सालि-
सोहत जरद, को मिलावै हरि पीय को ।
मत्त है दुरद, मिटयौ खजन-दरद,
रितु आई है सरद, सुखदाई सब जीय को ॥२२॥

*

कातिक की रात, थोरी-थोरी सियरात, 'सेना-
पति' है सुहात, सुखी जीवन के गन है ।
फूले है कुमुद, फूली मालती सघन बन,
फूल रहे तारे, मानो मोती अनगन है ॥
उदित बिमल चद, चाँदनी छिटकि रही,
राम कैसौ जस, अध ऊरध गगन है ।
तिमिर हरन भयौ, सेत है बरन सब,
मानहु जगत छीर-सागर मगन है ॥२३॥

*

चद्रमा-प्रकासन मे, चदमुखी-हासन मे,
अवनि-अकासन मे, कासन मे छाई है ।
'नदराम' तालन मे, इदीवर-मालन मे,
चचरीक-जालन मे अधिक अमाई है ॥

मल्लिका की डारिन मे, मालती कियारिन मे,
फूली फुलवारिन मे, मौगुनी सोहाई है ।
काम कैसी खेतिन मे, बालुका समेतिन मे,
सूरसुता-रेतिन मे सरद समाई है ॥२४॥

*

मोरन के सोरन की नैकौ न मरोर रही,
घोर हू रही न, घन घने या फरद की ।
अबर अमल, सर-सरिता विमल, मल-
पक कौ न अक, औ न उडनि गरद की ॥
ग्वाल कवि' चहूँघा चकोरन कैं चैन भयौ,
पथिन की दूर भई दूखन-दरद की ।
जल पर, थल पर, महल अचल पर,
चाँदी सी चमकि रही, चाँदनी सरद की ॥२५॥

*

बन-उपबन, निरझर-सर सोभा सने,
अबर-अवनि कल बल बरसावनी ।
हस जल रचिन, खचित थल-बनन,
निसापति की सरित जुन्हाई सुखदावनी ॥
'ऋषिनाथ' मालती-मुकुद-कुद कुसुमित,
बास-पारिजात पारिजात बलि पावनी ।
मन अरुझावनी, रसिक चित भावनी,
रास-रग उपजाय रैनि सरद सुहावनी ॥२६॥

*

मोरन कौ सोर गयौ, घनन कौ घोर गयौ,
झींगुर कौ जोर गयौ, भौरन अनंद है ।
पपीहा की कूक गई, चकोरन की हूक गई,
दादुर की दूक गई, जुगनू गन मद है ॥
'लाल बलबीर' अबै पावस कौ जोर गयौ,
सरद कौ सोर छयौ, बहुत सुगध है ।
तम कौ निवास गयौ, बिज्जु कौ प्रकास गयौ,
कैसौ ये अमद आज दमदमात चंद है ॥२७॥

विविध बरन सुर–चाप के न देखियत,
मानो मनि–भूषन उतार धरे भेस है ।
उन्नत पयोधर बरसि रस गिरि रहे,
नीके न, लगत फीके, सोभा के न लेस है
'सेनापति' आए ते सरद रितु फूलि रहे,
आस–पास कास–खेत स्वेत चहुँ देस है ।
जोवन हरन कुंभ जोनि के उदै ते भई,
बरषा विरध ताके स्वेत मानो केस है ॥२८॥

*

छिति पर देखो महा सौरभ सरस सुभ,
सौरभ सरस पर, सुरम्य सरद की ।
रस पर कहै 'स्यामसुंदर' झलक छवि,
छवि पर मारुत, जो जलद गरद की ॥
मारुत पै राजत गगन, सु गगन पर,
चाँदनी विराजत, त्यो सारद सरद की ।
चाँदनी पै चद की मुसाहिबी दुचद फबी,
चद की मुसाहिबी पै, साहिबी सरद की ॥२९॥

कासन के कुसुम विकासन लगे है अग,
कज–कंज आसन पै चारुता चढै लगी ।
'सेवक' भनत छवि तारन कतारन त्यो,
तारन पिया की पुरहारन मढै लगी ॥
अवनि मे, अबु मे, अकासनि मे आछी-भाँति,
ठौर–ठौर दीपन की दीपत कढै लगी ।
सेली को सकेलि कै, चमेली के चलत चाह,
बेली सम बनिता नवेली की बढै लगी ॥३०॥

*

आई रितु सरद, गगन विमलाई छाई,
खजन की राजी कुंज–कुजन बसै लगी ।
हरित–हरित पथ पथिक सिधारे पथ,
अकथ 'मुरारि' ओज जग बिलसै लगी ॥

सुमन-सरासन के सुमन-सरासन ते,
छूटिकै सुमन-सर अलिहिं गसै लगी।
तालन कमल फूले, कमल बिनूले अलि,
अलि पर पीतिमा पराग की लसै लगी ॥३१॥

*

सुंदर सुखद पद, भजु मन तजि मद,
सद जानि मेरौ कह्यौ सरद-अनद कौ।
'द्विज बलदेव' कहै दर-दर सदन मे,
मदन के दूत भज दीन्हौ पूत नद कौ॥
दलित दुकूल द्रुम कदम कलिंदी के है,
इंदीबर बदन दुराव नापसद कौ।
दीपति दुगुन देस, दिसि दस ह्वै मे देत,
दीरघ दराज दिल देखियत चद कौ ॥३२॥

*

बिकसन लागे कल कुमुद-कलाप मंजु,
मधुर अलाप अलि-अवलि उचारै है।
कहै 'रतनाकर' दिगगना-समाज स्वच्छ,
कास मिसि हास के बिलासन पसारै है॥
क्वार-चाँदनी मे रौन-रेती की बहार हेरि,
याही निरधार ही हुलास भरि धारै है।
जीत दल बादल के परब पुनीत पाइ,
कूल कालिंदी के चद रजत बगारै है ॥३३॥

*

पौन अति सीतल न तपत सुगंध सने,
मद-मद बहत अनद-दैन हारे है।
कहै 'रतनाकर' सुकुसुमित कुंजन मे,
बैठि उठे भ्रमत मलिंद मतवारे है॥
छिटकति सरद-निसा की चाँदनी सो चारु,
दीपति के पुंज परै उचटि उछारे है।
स्वच्छ सुखमा के परिपूरित प्रभा के मनो,
सुंदर सुधा के फूटि फबत फुहारे है ॥३४॥

बरन्यौ कविन कलाधर कौ कलंक, तैसौ-
को सकै बरनि, तिन हू की मति छीनी है ।
'सेनापति' बरनी अपूरब जुगति ताहि,
कोविद विचारौ कौन भाँति बुधि दीनी है ।।
मेरे जान जेतिक सो सोभा होत जान परी,
तेतिकै कलानि रजनी की छवि कीनी है ।
बढती के राखे, रैन हू ते दिन ह्वै है, यातै -
आगरी मयंक ते कला निकासि लीनी है ।।२४।।

*

अति ही अमंद, बंधु चंद्रिका सुधाकर की
पुंडरीक पथिक पिया को प्रतिकूल है ।
कहत 'किसोर' निसि नारि के हिए की मनि,
दरसावै कुँवर किसोरी दिन दूल है ।।
दरद हरन, वर परव को इंदु स्वच्छ,
सरद सुंदरिरा को, मुख सुख-मूल है ।
तारकन कलित मँझार चारु दुति, फूल्यौ-
अंतरिक्ष कलप-तरोवर सौ फूल है ।।२६।।

*

पथिक सुखद बिकसित कमल, अमल काम आकास ।
कुमुद बंधु युत कौमुदी, बरनिय सरद विलास ।।
चंद्र छत्र धरि सीस पै, लहि अनंग उपदेस ।
कमल सस्त्र गहि जीति जग, लीन्हौ सरद नरेस ।।
घन-घेरौ छुटिगौ, हरषि चली चहुँ दिसि राह ।
कियौ सुचैनौ आय जग, सरद सूर नर-नाह ।।
दिन सोहत जल अमल है, निरमल कमल अनूप ।
निसि जोहत ही बाद बदि, हिय मोहत ससि रूप ।।
ज्यौं सरद राका-ससी, क्यो न करत चित चेत ।
मनहुँ मदन छितिपाल को, छाँहगीर छवि देत ।।
चंद बदन दरसाय, अरु खंजन चखनि चलाइ ।
सकल धरा को छलत मन, सरद अपछरा आइ ।।२७।।

नीर भए अचल सकल नद-नदिन के,
थकि रहे पछी तन सुधि बिसराई है ।
सुरभी समूह सुनि मौनी नो मगन भए,
छए उर मोद नये बैन सुखदाई है ॥
'लाल बलबीर' थकि रहे चद तारागन,
सीतल समीर आय अंग लिपटाई है।
सरद रितु आई, सुखदाई मनभाई माई,
आज ब्रजचंद मिल बाँसुरी बजाई है ॥३८॥

*

फूले अरविंद-बृद विमल तडागन मे,
बागन चमेली खिली, सुखमा अमद है ।
सीतल सुगध मद चलत समीर बीर,
प्यारे 'बलबीर' सग राधा सुखकंद है ॥
बहरै छबीले लखै लहरै कलिदजा की,
देख छवि ताकी होत उरन अनद है ।
जैसी ये दमकै आली ! रेनु बनराज जू की,
तैसौ ही चमकै चारु सरद कौ चद है ॥३९॥

*

मोदिनी के देखिए कुमोदिनी के ही के दीह,
दीपति दिपति दीप दुति उपटान की ।
लोक-लोक लोकन के थोकन बिनोद बाढौ,
सोभा सरसाई स्वच्छ सरित-तटान की ॥
रग भरी राजत नवीन रस राका रम्य,
सीतल सुगध गंध रजनी जटान की ।
नदित चकोरै छवि छाकि सुख लूटै लेत,
छूटै चद्र-मडल तें छहर छटान की ॥४०॥

*

सिगरे दिन वारि पहार समैत, तची अति दुस्सह पूवन सो ।
भई भली महा 'रघुनाथ' कहै, वहु छारि बयार के रूखन सो ॥
पल डीठि लगाइ न जाइ लखी, इमि भूरि रही भरि दूखन सो ।
सोई लीपर सौ ससि आवत है, दिसि भीजी पियूष-मयूखन सो ॥४१॥

कमल सरद रितु सोहई, नरमल नील अकास ।
निसानाथ पूरन उदित, सोलहै कला प्रकास ॥
चारु चमेली बन रही, मह–मह महँकि सुवास ।
नदी–तीर फूले लखौ, सेत–सेत बहु कास ॥
बसन चाँदनी, चंद मुख, उडुगन मोती–माल ।
कास फूलि मधु–हास, ये सरद, किधौं नव बाल ॥४२॥

*

सरसी निरमल नीर पुनि, चंद–चाँदनी पीन ।
घन बरसे आकास अरु, अवनी रज है लीन ॥
अवनी रज है लीन, विमल तारागन सोभा ।
राजहंस पुनि कीन, सकल हिमकर की जोभा ॥
इत सरवर, उत गगन दुहूँ, ममता है परसी ।
'सेनापति' रितु सरद, अंग–अगन छबि सरसी ॥४३॥

*

शरद–चंद्रोदय

दृगन 'किसोर' जो चकोरन को ताप कर,
कुमुद–कलाप मुकुली कर सुछंद भौ ।
मानिनीन हू के मन–दरप दलित कर,
कंदरप कदलित कर जग बंद भौ ॥
मुद्रत कमल–अवली कर, तिमिर धवली–
कर, दिसान कबली कर, अनद भौ ।
अबुध अमित कर, लोकन मुदित कर,
कोक अमुदित कर, समुदित चंद भौ ॥४४॥

*

पिय देखत मानो रमा उझकी, मुख कुंकुम रंजित भाजत है ।
रजनी उर कौ अनुराग इहै, किधौं मूरतिवत बिराजत है ॥
किधौं पूरन चंद सुछंद उदोत, 'मुकुंद' सबै सुख साजत है ।
किधौं प्राची दिसा नव बाल के भाल, गुलाल कौ बिंदु बिराजत है ॥४५॥

शरद् की चाँदनी

अमल अकास देख, ससि कौ प्रकास देख,
मिटी है चकोर-पीर बिरहा दरद की ।
प्रफुलित कजन पै गुजत मधुप-पुज,
झरत पराग मानो बरषा जरद की ।।
'लाल बलबीर' संग बिहरै बिहारी-प्यारी,
रही न निसानी, दिसि दसन गरद की ।
वृंदाबन-चद जू की देखौ रेनु दमदमात,
चमचमात चारो ओर चॉदनी सरद की ।।४६।।

*

चम-चम चॉदनी की चमक चमकि रही,
राखी है उतारि कर चद्रमा चरख ते ।
अबर, अवनि, अंबु, आलऐ, विटप, गिरि,
एक ही से पेखे परे, बनै न परख ते ।।
'ग्वाल कवि' कहै, दसौ दिस ह्वै गई सफेद,
खेद कौ रह्यौ न भेद, फूली है हरप ते ।
लीपी अबरख तें, कै टीपी पुज पारद ते,
कैधौ दुति दीपी, चारु चॉदी के बरख ते ।।४७।।

*

तालन पै, ताल पै, तमालन पै, मालन पै,
वृंदाबन-बीथिन बिहार बसीबट पै ।
कहै 'पद्माकर' अखड रास-मडल पै,
मडित उमड महा कालिदी के तट पै ।।
छिति पर, छान पर, छज्जत छटान पर,
ललित लतान पर, लाडिली के लट पै ।
आई, भलै छाई, ये सरद-जुन्हाई,
जिहि पाई छबि आजही कन्हाई के मुकुट पै ।।४८।।

*

छाई छपा दिन ज्यो दरसी, मिलिकै चकवान बियोग बिसार्यौ ।
सौगुनौ बाढ्यौ प्रकास दिसान मे, चौगुनौ चाव न जात उचार्यौ ।।
कैसी खिली है अलौकिक चॉदनी, 'नागर' ताकौ विचार विचार्यौ ।
राधे जू ऊँचे अटा चढिकै, कहूँ आज नीलांबर घूँघट टार्यौ ।।४९।।

पूरि रह्यौ छिति ते अकास लौं प्रकास-पुंज,
जामैं लखि रजत-पहार गुमडी परै।
पारद अपार 'रतनाकर' तरंग की सी,
सुखमा अभंग चहुँ घेर घुमडी परै॥
चमकत रेती चारु जमुना-कछार-वार,
बिपिन अगार झलमल झुमडी परै।
राखी सचि चंद्रिका मनो जो बरषा भर की,
सोई चंद तें ह्वै सतचंद उमडी परै॥५०॥

★

नगर-निकेत, रेत-खेत सब सेत-सेत,
ससि के उदेत, कछु देत न दिखाई है।
तारिका मुकुत-माल, झिलिमिलि झालरनि,
बिमल बितान नभ-आभा अधिकाई है॥
सामोद प्रमोद ब्रज-बीथिन बिनोद 'देव',
चहूँ कोद चाँदनी की चादरि बिछाई है।
राधा मधुमालतिहिं माधव मधुप मिलि,
पालिक पुलिन झीनी परिमल झाई है।५१॥

★

फटिक-सिलानि सो सुधार्यौ सुधा-मंदिर,
उदधि-दधि की सी अधिकाई उमँगै अमंद।
बाहर ते भीतर लौं भीतिन देखैए 'देव',
दूध कौ सौ फैन फैलौ आँगन फरसबंद॥
तारा सी तरुनि,तामैं ठाढ़ी झिलमिलि होत,
मोतिन की जोति, मिली मल्लिका कौ मकरंद।
आरसी से अंबर मे आभा सी उज्यारी लगै,
प्यारी राधिका कौ प्रतिबिंब सौ लगत चंद॥५२॥

★

कातिक पून्यौ कि राति समी, दिसि पूरब अंबर मे जिय जान्यौ।
चित्त भ्रम्यौ पुमनिदु मनिदु फनिदु उठ्यौ भ्रम ही सो भुलान्यौ॥
'देव' कछू बिसवास नहीं, सोई पुंज प्रकास अकास मे तान्यौ।
रूप-सुधा अँखियान अँचै, निहिचै मुख राधिका कौ पहिचान्यौ॥५३॥

दरन पै, द्वारन पै, कलित किवारन पै,
द्रुमन पै, डारिन पै, लोनी लतिकान पै ।
हाटन पै, बाटन पै, नीके नव घाटन पै,
गेहन पै, सेजन पै, अमल अटान पै ॥
बागन पै, बन पै, निकुजन पै, पत्रन पै,
फूलन पै, कूलन पै, सर-सरितान पै ।
'रसिक बिहारी' सुखदाई चहुँघाई भाई,
छाई वह सरद-जुन्हाइ बनितान पै ॥५४॥

*

सारी जर-तारी लगी, मनिन किनारी, त्योंही-
दामिनी दबाइ लेत दमक रदन की ।
हीरन के हार 'हठी' गजरा गुलाबदार,
अग-अग फैल रही दीपति मदन की ॥
हेम की छरी सी, मानो सुखन जराव जरी,
सब गुन भरी, परी छबि के कदन की ।
चाँदनी बिछौना, भाल चदन लगावै बाल,
चाँदनी मे बैठी लाल ! चद से बदन की ॥५५॥

*

बादला के बीजना, बनाय वर बादला के,
बानिक सहेली ज्यो सुरेस के सदन की ।
मोतिन के हार, औ हमेल-गुलूबद-बेदी,
पहरि खराऊ खरी कुजर-रदन की ॥
हीरा ही कौ चूरा, बाजूबंद औ तरौना-बैना,
महा सुखदानी रानी मोहन मदन की ।
चाँदनी मे, चाँदनी पै, चाँदनी-बिछौना पर,
चाँदनी सी फैली चारु चाँदनी बदन की ॥५६॥

*

देखिए पियारे कान्ह ! सरद सुधारे सुधा,
धाय उजियारे चौकी चामीकर दरसै ।
चोबा चाँदी चमके, चँदोवा गुहे मोतिन के,
झलकत झालरै जुन्हाई-ज्योति परसै ॥

हीरा सी हँसन, हीरा-हार की लसन, सौंधे-
सारी रही सन, 'कवि सोभ' छबि सरसै ।
कोटि-कोटि कला मुख चद ते सरस प्यारी,
बादला फरस, रूप झलाझल बरसै ॥५७॥

*

हीरन के सदन सजाए हित ही के जी के,
चाँदनी जरी की नीकी झालर झला की है ।
कचन-सिहासन है, खासे सेत आसन है,
राजत तहाँ ही अलिगन गान ताकी है ॥
'दास' कहै दासी खासी लै-लै री अतर आसी,
अगन लगाय, चाय नेह-रग छाकी है ।
देखु-देखु आली ! नैन करिऐ निहाली, कैसी-
सरद-निसा की झाँकी कृष्ण-राधिका की है ॥५८॥

*

साजे अंग-अंग चीर जगत जरी के नीके,
तैसी हीर-हारन की झलक झलाकी है ।
जैसे ही रँगीले छैल नेह-रग राचे, तैसी-
चाँदनी चटकदार चद की कला की है ॥
'दास' कहै तैसी कोटि किंकिनी कनक राजै,
तैसी ही चटक कर करत छला की है ।
देखु-देखु आली ! नैन करिऐ निहाली, कैसी-
सरद-निसा की झाँकी लाडिली-लला की है ॥५९॥

*

लाडिली-लला की छबि देख री निराली आली,
सेत अंग-वस्त्र, हीर-आभूषन धारै है ।
बाँसुरी बजावे, हरषावे, मुसिक्यावे, गावें,
सखी सुख पावे, हेरि सीस चौर ढारै है ॥
'लाल बलबीर' कर-कर सो मिलावे, उर-
मोद को बढ़ावें, छैल गल भुज डारै है ।
सुखमा अमद, सुख-कंद राधिका-गोविद,
दोऊ ब्रजचंद चद चाँदनी निहारै है ॥६०॥

चाँदनी महल बैठी, चाँदनी के कौतुक को,
चाँदनी सी फूली राधे, चाँदनी महा लरै ।
चद की कला सी, देवता सी देव-दासी,
अग फूल से दुकूल, गरै फूलन की मालरै ॥
छूटत फुहारे, तारे झलकै अमल जल,
चमकै चँदोवा मनि-मानिक बिसालरै ।
बीच जर-तारन की, हीरन के हारन की,
जगमगी ज्योतिन की, मोतिन की झालरै ॥६१॥

★

चद निसि ललना, बदन लखि आई, कैधौ-
पारद की खानि फैलि आई आसमान है ।
कैधौ सुख के प्रबोध, सुखित सकल सुर,
लोकन के कल हास, भासै भासमान है ॥
मेरे जान मदन महीप सब जीत छिति,
ऊरध चढाइ कै, तयारी को समान है ।
कैधौ तारागन मुकताहल के झूमकन,
चाँदनी न होय, चारुताई कौ बितान है ॥६२।

★

बह रही बिसद छीर नद तें सरद सुभ्र,
सोभित सुखद फैली फैन के फरद की ।
उनमद मद मे सुगध की बिहद सैना,
धाई चहुँ हद तें, छपद रु जरद की ॥
तैसौ ही बिरह बद, मार दै गद बद,
चूमत करेजौ कोर काम के करद की ।
चीर कीने रद री, दरद दै करी हौ बे-
परद, बे दरद, दैया चाँदनी सरद की ॥६३॥

★

चाँदनी के आँगन, बिछौना नीके चाँदनी के,
चाँदनी सी देखि अँखियान सुख लह्यौ है ।
चाँदनी सौ चीर चारु, चाँदनी के आभूषन,
चंपक के गात, न बखानौ जाति कह्यौ है ॥

'हठी' आस-पास बैठी सुघर सुजान सखी,
जिन्हे देखि रति कौ गुमान जात बह्यौ है ।
राधे मुखचद की निकाई ब्रजचद आज,
अवनी-अकास लौं प्रकास फैल रह्यौ है ॥६४॥

*

कढत निसाकर दिवाकर सौ दीठि पर्यौ,
अधकार सो तौ एक पल मे पलायौ है ।
भोर भयौ जानि कै बिहंगन मे सोर मच्यौ,
अवनी-अकास मे प्रकास सरसायौ है ॥
परी चल-चाल बाल चमू-चतुरगिनी मे,
'नागर' तपत तेज ब्रज पर आयौ है ।
चाँदनी न होय ये, मानिनी के जीतिबे को,
मैन महारथी ब्रह्म-अस्त्रहि चलायौ है ॥६५॥

*

आस-पास पुहुमी प्रकास के अँगार सोहै,
बनन अगार दीठि ह्वै रहो निवर ते ।
पारावार पारद अपार दसो दिसि बूडी,
चड ब्रह्मंड उतरात विधि वर ते ॥
सरद-जुन्हाई जनु धाई धार सहस,
सुधाई सोभा-सिधु नभ सुभ्र गिरिवर ते ।
उमड्यौ परत ज्योति मडल अखड सुधा,
मंडल मही मे, बिधु-मडल बिवर त ॥६६॥

*

पूरन सरद-ससि उदित प्रकासमान,
कैसी छबि छाई देखो बिमल जुन्हाई है ।
अवनि-अकास, गिरि-कानन औ जल-थल,
व्यापक भई, सो जिय लागत सुहाई है ॥
मुकता-कपूर-चूर, पारद-रजत आदि,
उपमाएँ उज्जल, पै 'नागर' न भाई है ।
बृदाबन-चंद चारु सगुन बिलोकिबे को,
निरगुन-ज्योति मानो कुजन मे आई है । ६७॥

पूरब हसित बनिता कौ मुख पत्र, तामे-
रचना रुचिर वर मृग-मद-रग की ।
कैधौ नभ-सरवर फूल्यौ है कमल, तामे-
मेचक प्रभा है आली ! अवली उमग की ॥
औरौ कवि-कोविदन उपमा अनेक कही,
'बदन' बखानै एक इहि बिधि अग की ।
विरही निरखि याहि नाखत निसाँस, यातें-
दागिल दिखात, मानो आरसी अनग की ॥६८॥

★

मोती मजु महल बितान तने मोती मई,
मोतिन की झालरै मनोजहि गनै नही ।
'सेवक' भनत वैसे फरस फनूस आज,
सेज-सुखमा की छवि उर सो छनै नही ॥
चाँदनी चटक, इत चमक चुनीन तैसी,
अग चारु तासो दोऊ मोरत मनै नही ।
सरद कौ साज, ब्रजराज-राधिका कौ आज-
चाहत बनै, पै त्यो सराहत बनै नही ॥६९॥

★

राजी जिय करत, रसीलिन की राजी तैसी,
राजी मुकुलित मालती की दुरसातियाँ ।
कुज-कुज-मदिरन, अलि-पुज गुजरत,
मजु मकरद मद गति सी विभातियाँ ॥
कहत 'किसोर' कोष बद्ध कमनीय महा,
रमनीय रमन बिनाह बन-जातियाँ ।
सरद समस्त सोभा ससि मय व्यौम, काम-
वसमय विस्व, रंग रसमय रातियाँ ॥७०॥

★

अकल अरील माते मंजुल मलिंद, जल-
अमल, अनद चद, पूरन कदन है ।
अधर अनोखे अरुनारे बधु जावक से,
चाँदनी से हास, त्यो सितारे से रदन है ॥

खजन से माते, मनरजन चकोर से है,
अजत बनै न, नैन सुखमा-सदन है ।
सरद-मराली सी,मृनाली सी मिली सी आली,
कैसौ 'जगमोहन' सोहावन वदन है ।।७१।।

*

शरद-विलास

आज रंग-रसभीने रसिक बिहारी वर,
बिरचि विचित्र व्यौम चारु चित्त चोरी के ।
बैठे धीर ध्यासन कलिंद-तनया के तीर,
सुखमा न चाहै आपु रस मान थोरी के ।।
कहत 'किसोर' दीन मजु कर कज बीन-
परम प्रवीन, गावै गुन-गन गोरी के ।
छकत प्रभा मे लखि अति अभिरामै स्यामै,
सरद-निसा मे स्यामै कुँवरि किसोरी के ।।७२।।

*

प्यारे पास बैठी आनि, रूप-रासि प्रान प्यारी,
चाँदनी के देखिवे को चाव चित्त भरिगौ
हीरन के, मोतिन के आभूषन सग सखी,
अग ते प्रकास दूनी छवि कौ पसरिगौ ।।
उपना न ह्वैवे की चली है कहा 'रघुनाथ',
तारन समेत उभय ताप ताते ठरिगौ ।
प्राची ते लै गगन प्रतीची तक सब रात,
छवि-छपाकर छपाकर छपा करिगौ ।।७३।।

*

सुदर सुधारयौ सौध-सुधा सो सुधार सन्यौ,
सौरभ सरस सुरभित आस-पास सो ।
बिमल बिछौने बिछे रजत-जरी के चारु,
जग-मग होत 'भोलानाथ' के निवास सो ।।
राकापति छायौ तैसौ मध्य मे,सुमध्य बाल-
बैठी परयक पै, बिराजत सुहास सो ।
अंबर मे चद, कै अवनि पर चद, चहूँ-
चाहत चकोर, सोर पारयौ है प्रकास सो ।।७४।।

आनँद कौ कंद, मुख इंदु अरबिंदु कौ,
पानिप अमंद तन-कीरति सी काम की।
नासा तिल-कुसुम,प्रकास हास कास मानि,
सकै को बखानि, खानि सोहै बिसराम की॥
खंजन 'दिनेस' दृग, त्रिवली सरित, कुच-
कलस उतंग, हरि-छबि कटि छाम की।
कीजिऐ कन्हाई, मन भाई आई कुंज-बन,
सरद सुहाई, कै निकाई वहि बाम की॥७५॥

*

मालिन ज्यो कर मे कमल लिऐ आगै खरी,
चौसरे चमेली के रुचिर राखि लाई है।
जौहरी की जुवती ज्यो तेज भरे तारागन,
हीरन के हार बलि विविध दिखाई है॥
पच्छिम के ओर की प्रवीन मृगनैनी, अंग-
ओढै चारु चादर, ये चाँदनी सुहाई है।
लाल लखि लीजै, आजु रावरे रिझावन,
खवास ज्यो सरद चंद-आरसी लै आई है॥७६॥

*

तारागन भूषन सघन अंग अंगन मे,
बसन मयूषन सो रही लोनी लसिकै।
दंत-कुमुदावली चमक चारु चोरै चित्त,
जोरै मुख चंद को सु मंद-मंद हँसिकै॥
मालती सुगंध सनी, सालती हिए मे साल,
रहे नंदलाल कहूँ याके ख्याल फँसिकै।
सरद-विभावरी न होय सुनि बावरी तू,
दाव री लियौ है ये, सौति स्याम बसिकै॥७७॥

*

गच गिरि-रावटी के अजिर उजेरे चारु,
चाँदनी के औसर मे चंदमुखी पीजिऐ।
'कालिदास' वाके तन-रूप की मिठाई लाल!
बासर मे सुधा ते सर समान लीजिऐ॥

दूनो दुख, सूनौ भौन खोजिए परोसी कौन,
रोज-रोज केलि के कलापन मे भीजिऐ ।
चेरी राखौ द्वार मे चितैवै कौ चहूँघा कान्ह !
मेरी सौ, कुवार मे करेरी केलि कीजिऐ ॥७८॥

★

सरस सुबासे, सुख-रासे मासे पुष्पन की,
पकज बिकासे प्रभा परम प्रमोद कर ।
कुमुद-चकोर बहु ठौर है अनद भरे,
उत्तम असल नीर राजै है सरित-सर ॥
बिमल रवि देखौ, रच नीरद न लेखौ कहूँ,
'रसिक बिहारी' चहूँ पूरन प्रकास भर ।
सरद-निसा मे, उन्मत्त की दसा मे माते-
मैन के नसा मे, रमे सेजन पै नारि-नर ॥७९॥

★

आयौ रितु सरद, बिरोधी चंद मान करु,
मदन कमान करु, कीन्हौ दुख दैन कौ ।
ना न करु प्यारी, अपमान करु सौतिन,
गुमान करु प्रेम, अनुमान करु रैन कौ ॥
कहत 'दिनेस' फूले पंकज प्रमान करु,
कान करु सूधे, सनमान करु चैन कौ ।
हठ मन मान करु, दूरि किन मान करु,
मान करु प्यारे कौ, समान करु मैन कौ ॥८०॥

★

कोऊ लीन्हे छत्र, कोऊ चौर कर लीन्हे, कोऊ-
छाह गिरि लीन्हे, कोऊ, दाँवन सकेलती ।
कोऊ पानदान-पीकदान, कर आरसी लै-
अतर-गुलाबन की सीसी सीस मेलती ॥
'बोधा कवि' कोऊ बीन-बाँसुरी सितार लीन्हे,
लाडिली लडावै फूल-गेदन की झेलती ।
छोटे ब्रजराज, छोटी रावटी रंगीन, तामै-
छोटी-छोटी छोहरी अहीरन की खेलती ॥८१॥

शरद-रास-क्रीडा

सरद-निसा मे कान्ह बाँसुरी बजाई बेस,
जल-थल-व्यौमचारी जीव प्रेम भरिगे ।
कहै 'ब्रजचद' तजे ध्यान हू मुनीसन नें,
त्योंही मानिनीन के गुमान-मद झरिगे ।।
चकति सचीस, रजनीस हू थकित भए,
तुरत स्वयंभू मोह-जाल बीच परिगे ।
संभु हू को भूली आधी अंग की बिराजी-
गौरि,गौरि हू की गोद के गजानन बिसरिगे ।।८२।।

*

सरद-रयन अरु निर्मल प्रकास जानि,
कान्ह जमुना के तट बाँसुरी बजाई है ।
राग-रागिनी छतीसो ताहि मे प्रवेस करि,
ताल कौ बधान सुर तीन लोक छाई है ।।
मोहे सेष औ गनेस, बिधि-लोकपाल सब,
पोडस सहस गोपी सुनि उठि धाई है ।
पाय कै कन्हाई जी ने रहस मचाय नित,
यामिनी बढाई षट मास को बिताई है ।।८३।।

*

ह्वै रही तयारी महा राजी रास मडल की,
मल्लिका व मालती सो अमित अगार है ।
कहै 'नदराम' गई जरी सेत सारी साजि,
गोप की कुमारी हिए हीरन के हार है ।।
षोडस कला सो आजु उदित कलाधर है,
चाँदनी के भारन सो छोडे अभिसार है ।
सेत चाँदनी मे, सेत चाँदनी चँदोवा तने,
मानो छीर-सिधु परे पारा के पहार है ।।८४।।

*

जमुना के पुलिन उजेरी निसि सरद की,
राका कौ छपाकर किरन नभ-चाल की ।
नंद कौ लडैतौ तहाँ गोपिका समूह लैकै,
रची रास-क्रीडा बजै बीना डफ-ताल की ।।

लहा छेह गातन की, कही न परत मोपै,
द्वै-द्वै गोपिका के मध्य छबि नदलाल की ।
सोभा अवलोकि 'अभिमन्यु कवि' बोलि उठ्यौ,
एक बार बोलो, जय मदन गोपाल की ॥८५॥

*

षोडस हजार बाल पोडस सृंगार साजि,
षोडस बरस बैस मुदित बिहार है ।
बाहुन सो बाहु जोरि, मोरि-मोरि अगन को,
कीन्हौमहा मडल, ;अखडल अपार है ॥
कहै 'नदराम' तैसै तार औ सितार मिलि,
चूरी-खनकार स्वर पचम उचार है ।
भूतल, दिसान-बिदिसान, आसमान हू लौं,
छम-छम छाई घुघुरू की झनकार है ॥८६॥

*

बिसद बहार कार-राका की निहारि कूल,
भूलि गति जमुना-प्रबाह जकि ज्वै रह्यौ ।
कहै 'रतनाकर' त्यों प्रकृति समाजनि की,
सुखमा अमद सो अनद-रस च्वै रह्यौ ॥
चद-बदनीनि-सग रास ब्रज-चद रच्यौ,
छबि के प्रकास सो, अकास लगि छ्वै रह्यौ ।
चेत चलिवे की षट माम लौं न आई इमि,
एते चद चाहि चद चकपक ह्वै रह्यौ ॥८७॥

*

पद थरकाइ, फरकाइ भुजमूल, भरी-
मद मुसुकानि, भौंह तानि तमकति है ।
लक लचकाइ, चल अचल उचाइ, लोल-
कुडल कपोलनि झुमाइ झमकति है ॥
स्वेद-सनी-बदन, मदन-सुख दैनी, बर-
बैनी बाँधि किंकिनी सहौरा हमकति है ।
करहि अलाप स्याम-सग ब्रज-बाम मंजु,
मेघ-मेखला मे चचला सी चमकति है ॥८८॥

नॅचत लचाइ लंक, लोचन चलाइ बक,
करत प्रकास रासि व्रज-जुवतीनि की ।
आनँद-अमद-चद उमँग बढावै, मनो-
रस 'रतनाकर'-तरग अवलीनि की ॥
काकौ मन मोहत न, जोहत जुन्हाई माहि,
छहर कन्हाई की मुकुट-पॅखुरीनि की ।
छबि की छटक, पीत-पट की चटक चारु,
लटक त्रिभग की, मटक भृकुटीनि की ॥८९॥

*

खनक चुरीन की, त्यो ठनक मृदंगन की,
रुनुक-झुनुक सुर नूपुर के जाल कौ ।
कहै 'पदमाकर' त्यो बाँसुरी की धुनि मिलि,
रह्यौ बँधि सरस सनाकौ एक ताल कौ ॥
देखत बनत, पै न कहत बनै री कछू,
विविध बिलास, यो हुलास ये खयाल कौ ।
चद्र-छबि रास, चाँदनी कौ परगास,
राधिका कौ मद हास, रास-मडल गोपाल कौ ॥९०॥

*

पायल बजाय चाय लै-लै गति नाँचै कोई,
करुन हू किंकिनि की त्योंही झनकारी है ।
गाय सुभ राग, सानुराग दरसावै भाय,
छाय कै मधुर सुर मुनि-मनहारी है ॥
प्यारी बीच प्यारौ, अरु प्यारे बीच प्यारी लसै,
'लखनेस' ताकी यह उपमा बिचारी है ।
पुष्पराग-माल मानो बीच-बीच नील मनि,
रचिकै सुभग वृंदा-बिपिन सिगारी है ॥९१॥

*

भूल्यौ गति-मति चंद, चलत न एक पैड़े,
प्रान प्यारे मुरली मधुर कल गान की ।
फूली कुसुमावलि विविध नव कुजन मे, -
सौरभ सुगंधताई, जात न दखान की ॥

बाजत मृदंग--ताल--झाँझ-मुहचग-बीन,
उठत सँगीत जहाँ, अति गति तान की ।
आज रस--रास मे अनूप रूप दोऊ नॅचै,
नंदलाल, लाडिली किसोरी वृषभान की ॥६२॥

*

गुजत मधुप पुज-पुंज नव कुजन मे,
छाके मत्त डोलै मकरंद-पान करिकै ।
सीतल सुधाकर हू मुदित मयूपन पै,
स्रवत पियूष, सो चकोर हेत वरिकै ॥
'रसिक बिहारी' सुखकारी चंद्रिका अनूप,
हृदै हुलसात अनुराग-राग भरिकै ।
निर्मल सुटग, रस-रग स्याम-स्यामा संग,
अग-अग मोरत अनग-मान हरिकै ॥६३॥

*

रास के बिलास को बिलोकन हुलास भरे,
बाजे सुनि बिबिध बिमान व्यौम आए है ।
देविन समेत देव बाजने बजावै, त्यौही-
लखि व्रज-बामै घनस्यामै मोद पाए है ॥
पति की, न मति की, न गति की सँभार सोही,
मोही सुरदार जोही, मन को लोभाए है ।
हरि कौ सुजस गावे, बरषि प्रसून छावे,
भावे रास आवे 'लखनेस' बेस गाए है ॥६४॥

*

घूँघुर कौ सोर कोऊ भेद बहुतेरौ लेहि,
फेरी दै उडावै पट भावन मे भामिनी ।
मंजु मुसक्याय कै, लजाय कोऊ नावै नैन,
भृकुटी नॅचावै, कोऊ तान अभिरामिनी ॥
लौटत अलख कटि अचल ओढावै कान्है,
कुंडल कपोल लोल अलकालि गामिनी ।
चंचल स्रमित लसै, स्याम अरु स्यामा पास,
मानो घने घन, औ दमकै घनी दामिनी ॥६५॥

शरद–विरह

फूले आस-पास कास, विमल विकास बास,
रही न निसानी कहूँ महि मे गरद की ।
राजत कमल–दल ऊपर मधुप, मैन–
छाप सी दिखाई, छबि विरह–फरद की ।।
'श्रीपति' रसिकलाल आली ! बनमाली बिन,
कछू न जुगति मेरे जीय के दरद की ।
हरद समान तन भयौ है जरद अब,
करद सी लागत है, चाँदनी सरद की ।।६६।।

★

ग्रीषम की घाम हैं न धाम घनस्याम या ते-
ह्वै गई सुवाम सेत ह्वै गई जरद की ।
वीचन दरीचन के आभा है मरीचन की,
काम ने निकारी कोर तीछन करद की ।।
फैलि–फैलि गैलन 'नवीन' विष फैल भरी,
दोषत दुखी न दुति पारद बरद की ।
गरद करी हौ, दिन दरद मरी हौं सखी !
सरद परी हौ, लखि चाँदनी सरद की ।।६७।।

★

मद मुसक्यानि चद–जोति मे उदोत होत,
कद मे दिखावै दुति दसन रसाल की ।
खजन लखावै 'कान्ह' नैन–मनरजन से,
पानि लौ सुहावै कला कंजन बिसाल की ।।
भौरन की गुज, पुज मंजुल मँजीरन सी,
हँसनि चलावै गति स्याम के सुचाल की ।
आयौ री सरद काल, दरद बढावन को,
जरद करै है, हमै सोभा धरि लाल की ।।६८।।

★

फैलि रही घर अंबर पूर, मरीचिन बीचिन सग हिलोरत ।
भौर भरी, उफनात खरी, सु उपाय की नाव तरेरन तोरत ।।
क्यो बचिए भाजि हू 'घनआनँद, बैठि रहे घर पैठि ढिढोरत ।
जोन्ह प्रलै कै पयोनिधि लौ, बढ़ि बैरिनि आज बियोगिनि बोरत ।।६९।।

नवा खड मंडित अखडन उद्दोत भयौ,
राका चद्र मडल दिसान दस दरसात ।
बिमल बिसाल भए सीतल सरित-सर,
सकल कलित ये बिलोकियत अवदात ॥
'मोतीराम' मजुल मृदुल मालतीन मिलि,
मलयज मलय-समीर सीरे सरसात ।
दरद करत ये भँवर-भीर कुज-कुज,
बेदरद आली री ! सतावत सरद-रात ॥१००॥

*

अबर अमल होत, चद की बढत जोत,
खजन की गोत, मानो परी आइ नाक ते ।
भनत 'दिवाकर' तरग गग स्वच्छ भई,
ऊग्यौ है अगस्त जल सूखे जनु साक ते ॥
जहँ-तहँ पथिक चलन लागे चारो ओर,
सरद नरेस कियौ तिय तन चाक ते ।
दिन तौ वितत सग सखिन हितत सत,
रात ना कटत बिनु स्याम चद-राक ते ॥१०१॥

*

कास कौ बिकासन, सो कासन करैगौ नाँहि,
याते हियौ त्रासन सो मेरौ अति भ्वै रह्यौ ।
धान पान पावै, हेरि-हेरि धीर छाँ को धरै,
बाढे बिरहा के हाय ! नैन नीर च्वै रह्यौ ॥
कहै 'हनुमान' फूले कजन पै भौरन कौ-
वृद सौ बिलोकि, बैसि मानो जम ज्वै रह्यौ ।
जा करि कहै न यो कृपा करिकै लालन सो,
सरद-निसाकर दिवाकर सौ ह्वै रह्यौ ॥१०२॥

*

शरदऊ की रजनी मे प्रिया, रजनीपति पास जनीन को पारै ।
सारी मरीचिन बीचिन तें, नवला के नगीचिन कौ दुख हारै ॥
भाषत है 'रघुराज' हमै, सरदै सुख दै तऊ दोष-अगारै ।
जो बिरहीनन दीनन क, उर-वारिधि मे बडवानल बारै ॥१०३॥

डोलै नभ-बीथिन, न बोलै धरि, मौन-व्रत,
भए सित भूति लाए रहै तित छजिकै ।
जीवन द्विजन को दै, जीवन-मुकुत होय,
बने है बिमल, बाम चपला को तजिकै ॥
दीजै नहि दोष एक ऐसे अलि ऊधव को,
स्याम भए बाम, अब करो योग रजिकै ।
नीरद सरद के दरद दलि, देस-देस-
करै उपदेस, येऊ यती वेष सजिकै ॥१०४॥

★

आतप सी चाँदनी तपन तन दूनी देत,
लागत हिए मे चद-किरनै करद सी ।
आवत उसास ऊँची, सुखद सुबास लहि,
त्रिविध समीर धीर सालत दरद सी ॥
'रसिक बिहारी' है सयोगिनी अनद सबै,
बिफल बियोगिनी न लागत सरद सी ।
तै निरास ह्वै, निरास हू ते आस पाइ-पाइ,
मर-मर जीवत है, चौपर नरद सी ॥१०५॥

★

दमकि गई री देह दौरि कै दुरावै कहि,
जारती जुराती ज्वाल जालिम जुन्हैया की ।
सीतल सरोजन की पाँखुरी बिछाई सेज,
लागती अँगार सी अनोखी अग नैया की ॥
तीर कैसी तीछन समीर सरिता के बीर,
बीति है न यो ही निसा सरद समैया की ।
फाँसु री गरे की, बाजी बाँसुरी बिसासी, कैसी-
विष की भरी सी 'जगमोहन' कन्हैया की ॥१०६॥

★

घाम सम चाँदनी लै घेरयौ ब्रजमडल है,
ताती चडकर सी मयूषन मचाय लै ।
आज अबलनि मारि और हू कलंक लै कै,
मन के मनोरथन नीके कै रचाय लै ॥

'धीर' बलबीर के वियोगी नैन नीर भरे,
प्रेम रस प्यासे प्रेम तिनको जचाय लै ।
ए रे मंद चंद सुनि, आवै ब्रजचंद जौ लौं,
तौ लौं तन गोपिन को विरह तचाय लै ॥१०७॥

★

याही ते निपट निरधारि तोहि नीरस कै,
छाड्यौ सब सुरन,सुधा रसको चाखि-चाखि ।
'देवमनि' वे ही काज बैर विरही जन सो,
बॉध्यौ ऐसी बात न कलंकी भयौ साखि-साखि ॥
सरद की रितु मे उचाट चित्त ब्रजराज,
राधे को बिरह व्याप्यौ उठत यो भाखि-भाखि ।
कियौ कहा चाहत है, रैन-चारी चित्त-चोर,
एरे चंद ! चॉदनी की चटकहि राखि-राखि ॥१०८॥

★

सिंधु के सपूत सुत, सिंधु–तनया के बंधु,
मंदिर अमंद सुभ सुंदर सुधाई के ।
कहै 'पद्माकर' गिरीस के बसै हौ सीस,
तारन के ईस, कुलकारन कन्हाई के ॥
हाल ही के बिरह बिचारी ब्रजबाल ही पै,
ज्वाल से जगावत, जुआल सी जुन्हाई के ।
ए रे मतिमंद चंद ! आवत न तोहि लाज,
ह्वै कै द्विजराज, काज करत कसाई के ॥१०९॥

★

सॉझ ही ते आवत हलावत कटारी कर,
पाइकै कुसंगति कृसानु दुखदाई कौ ।
निपट निसंक ह्वै तजी तै कुल–कानि, खानि–
औगुन की, नैकऊ तुलै न बाप–भाई कौ ॥
ए रे मतिमंद चंद ! आवत न लाज तोहि,
देत दुख बापुरे वियोगी–समुदाई कौ ।
ह्वै कै सुधा–धाम, काम-विष कौ बगारै मूढ,
ह्वै कै द्विजराज, काज करत कसाई कौ ॥११०॥

सरद्-निसा मे व्यौम लखि कै मयक बिन,
'पूरन' हिए मे इमि कारन बिचारे है ।
बिरह जराई अबलान को दहत चद,
ताते आज तापै विधि कोपे दयाबारे हे ॥
निसिपति पातकी को, तम की चटान बीच,
पटकि पछारि, अग निपट बिदारे है ।
तातें भयौ चूर-चूर, उछटे अनंत कन,
छिटिके सघन, सो गगन मध्य तारे है ॥१११॥

साहिब मनोज कौ मुसाहिब बसत अत,
मर ना गयौ री नाम सुनत नकारे कौ ।
ग्रीषम गरूर पूर छायौ लै कृसानु भयौ,
भेद तें अजान, अग तकत उजारे कौ ॥
बिन 'सरदार' ना उपाय, अब एक कटे
तरक तलास लायौ अधम अँध्यारे कौ ।
देखि जग-जीवननि जीवन को नाह हाथ-
जीवन न देत, लेत जीवन हमारे कौ ॥११२॥

*

कोका सर, मैन मर, मैन के निहारियत,
हारियत ती कौ ताप जात पै न नेरे ते ।
लागै असुधाकर सुधाकर प्रकास-कास,
अमल अमल जोर सरद करेरे तें ।
कहत 'दिनेस' ब्रजबाल की जवाल को जु,
बिरच्यौ रच्यौ न आन, चल किन येरे तें ।
वारिजात-मुखी, बैन नीके, नैन वारिजात,
वारिजात वारिजात वारि जात हेरे तें ॥११३॥

*

महि मल्लिका मालती जाती जुही सुचि सेवती प्रान-पियासी भई ।
छिनदा कर की करकाती भई, बरषन की तौ बरषाती भई ॥
'नँदराम जू' चाँदनी चौकन मे, चहुँ ओर ते भानु-प्रभाती भई ।
अँखियाँन मे तौ बरषा सी भई, बरषा न कितौ बरषाती भई ॥११४॥

हारे बल बादर, घटन लागे नीर आली!
अमल अकास आयौ, सरद सुहाए है
सूखे थल जहाँ-तहाँ मारग विलोकि परे,
गौन क बटोही भौन आपने ही आए है ॥
अगर-कपूर-धूर, फूल-फल अच्छत लै,
दसमी की पूजा करि हवन मनाए है ।
रहकि कै नारिन ते करत बधाई 'नाथ,
जिन घर प्रानप्यारे आस्विन मे आए है ॥११५।

*

हिलि-मिलि जोखनि मे, झाँकत झरोखनि मे,
हियरा मे हिलकी, हगन अँसुवार मे ।
'कालिदास' कहै आप कामिनी कुरग नैनी,
दामिनी ज्यो देखी जात दमक दुआर म ॥
जोन्ह मे दहैगी, दुख ऐसै क्यो सहेगी, जैसै-
सीता पार सागर के रघुवर के वार मे ।
नद के कुँवर कान्ह, कैसै कहो पै हौ जान,
छाँडि वृषभान जू की कुँवरि कुवार मे ॥११६॥

*

परै कोऊ पछाह पिछौना करतेई रह्यौ,
प्यारी कहूँ पुहुमी पै पाला परि जावै ना ।
सीरन कपार सी परेखौ इन नैनन सो,
सारी दुनियाँ की सियराई सरकावै ना ॥
देखो 'जगमोहन जू' बावरी वियोगिनि कौ,
काहू अब कलित करेजौ कँपि आवै ना ।
हाय नव बाला बिन निपटि निराला,
परदेस मे पराला सीत काला कहूँ आवै ना ॥११७॥

*

दीपदान देवन दिवारी कौ चढाती सब,
जुवा खेलि दंपति हिए मे हरषाती है ।
वेस्यागन रसिक रिझावै कै सिगार देह,
मुख मुसक्याति हरै राग बरसाती है ॥

भनत 'दिवाकर' अटा पै घाट-बाट-गेह,
रोसनी तमाम चहुँ कोन दरसाती है।
प्यारे ब्रजराज बिन, पापी द्विजराज सखी,
रात ये दिवारी की, अराति सम जाती है ॥११८॥

*

निर्मल अकास ऐसौ, जल जमुना कौ जैसौ,
कठिन प्रकास ससि सूरज सरद कौ।
उडुगन गनत, गने न जात रैन-दुख,
द्यौस देखि 'देवी' कहै मारग गरद कौ ॥
प्रेम की दरद ब्यापी, भयौ है जरद गात,
चपे कैसौ पात, रग रात्यौ है हरद कौ।
कातिक दिवारी बारि, खेलै सब नाह-नारि,
हौ तौ युग फूटी सारिजो कै ज्यो नरद कौ ॥११६॥

*

मजन कै मदिर को सबनि सँवारे, सेत-
राते-पीरे रगन विचित्र चित्र भरिऐ।
घर-घर-आँगन, अटान-बाट-बाटन मे,
दीपक सवारि वार-वारि पाँति धरिऐ ॥
जोति जगै अवनि पै, अधिक अधेरौ नभ,
दरस की रैनि, जामै कला ससि हरिऐ।
सोभा समूह 'नाथ' सबै ब्रज देखियत,
कातिक मे आय लाल ! दीप-माल करिऐ ॥१२०॥

*

चारु निहार तरैयन की दुति, लाग्यौ महा बिरहा तन तावन।
हे 'ससिनाथ' कहा कहिऐ, जिन सौ लगि नैन ही कज से पावन ॥
बीच दुकूल के फूलन लै, अलबेली के प्रेम कौ सिधु बढ़ावन।
कान्ह दिवारी की रैन चले, बरसाने मनोज कौ मत्र जगावन ॥१२१॥

हेमंत

★

राशि—

वृश्चिक+धन

★

मास—

मार्गशीर्ष+पौष

★

तेल-तूल-तांबूल-तिय, ताप-तपन रतिवत ।
दीर्घ रैनि, लघु दिवस पुनि, सीत सहित हेंमत ॥

हेमंत-परिचय

हेमंत शीत प्रधान ऋतु है। यद्यपि शीत का आरंभ शरद ऋतु में हो जाता है, तथापि उसका उन्नत रूप हेमंत में ही दिखलायी देता है। यदि शरद में शीत का बाल्य काल है, तो हेमंत में उसका पूर्ण यौवन काल होता है।

शरद में निर्मल आकाश और उज्ज्वल चंद्र-चंद्रिका का महत्व है, जिनके कारण शरद-यामिनी सब के लिए अत्यंत सुखद और आनंददायक ज्ञात होती है, किंतु हेमंत में तुषार के आधिक्य के कारण न तो आकाश ही अधिक स्वच्छ रहता है, और न चंद्रमा ही विशेष प्रकाशवान दिखलायी देता है। इसके साथ ही कड़ाके का जाड़ा और सनसनाती हुई बर्फीली वायु के कारण हेमंत की लंबी रातें जन-साधारण के लिए कष्टकर बन जाती है।

हेमंत की लंबी रातों से ऊब कर सब लोग सूर्योदय की बड़ी उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा करते है। जैसे-तैसे सूर्य निकलता है, किंतु उसकी किरणों में स्वाभाविक ऊष्मा नहीं होती है। राजा-रंक, अमीर-गरीब सब शीत के कष्ट से मुक्ति पाने के लिए सूर्य की शरण में जाते है, किंतु वहाँ पर भी उनकी मनोभिलाषा की कठिनता से पूर्ति होती है। दो पहर दिन चढ़ने पर सूर्य की किरणों मे कुछ तेजी आती है, तब कहीं धूप में बैठना सार्थक होता है। इस प्रकार सूर्य-सेवन का सुखानुभव कुछ ही समय के लिए होता है कि दिनकर भगवान् अस्ताचल की ओर जाने की तैयारी करने लगते है। बात की बात में दिन समाप्त हो जाता है और फिर वही भयावनी लंबी रात आरंभ हो जाती है।

इस प्रकार हेमंत ऋतु अपनी कठोरता के कारण सब के लिए कष्टदायक है, किंतु जिन सम्पन्न व्यक्तियों को शीत निवारक सर्व साधन सुलभ है, वे इस ऋतु में भी सुख का अनुभव करते है। ब्रजभाषा कवियों ने इस प्रकार की साधन-सामग्री और उसके उपभोग का बड़े ठाट-बाट से वर्णन किया है।

ब्रजभाषा काव्य में हेमंत जनित कष्ट से छुटकारा पाने वाले साधनों में पंच तकार का विशेष वर्णन मिलता है। पंच तकार तरुणी, तांबूल, तैल, तूल और तरणि बतलाये गये हैं। तरुणी स्त्री का सहवास, बढ़िया मसालों से बने हुए तांबूल का चर्वण, तैल-मर्दन, तूल अर्थात् रुई के वस्त्रों का धारण और तरणि अर्थात् सूर्य की धूप का सेवन-ये वे साधन हैं, जिनका विलासी जन

प्रचुरता से उपभोग करते हैं। इनके अतिरिक्त अग्नि की अंगीठी, अगर-तगर और कस्तूरी आदि सुगंधित पदार्थों की धूप, पशमीना के दुसाले और परदे पड़े हुए रंग-भवनों का भी कथन किया गया है। इन साधनों के कारण कष्टदायक हेमंत ऋतु भी विलासी जनों के लिए सुखदायक ज्ञात होती है।

जिन व्यक्तियों को उपर्युक्त साधन सुलभ नहीं हैं, वे सूर्य की धूप और अग्नि द्वारा ही हेमंत के कष्टों से मुक्ति पाने की चेष्टा करते है। किंतु अधिकांश ब्रजभाषा कवियों की दृष्टि इस प्रकार के जन-साधारण पर न जाकर साधन सम्पन्न विलासी जनों पर ही गयी है और उनको ही ब्रजभाषा कवियों ने अपने काव्य का विषय बनाया है।

मार्गशीर्ष

मासन मे हरि-अंस कहत, यासो सब कोऊ ।
स्वारथ-परमारथन देत, भारत मे दोऊ ॥
'केसव' सरिता-सरित, फूल फूले सुगध गुर ।
कूजत कुल कल हस, कलित कल हसनि के सुर ॥
दिन परम नरम सीतल, मरम करम-करम ये पाइयतु ।
करि प्राननाथ परदेस को, मारगसिर मारग न चितु ॥१॥

**

अतिहि अराम देत, ऐन को अराम, अभि-
राम आठो ओर, ओरयौ गेस अबलन मे ।
आसन अनूप, आप ईस है असीन जापै,
अच्छ अवलोकि, है उदासी अबु-जन मे ॥
'गिरिधरदास' एकौ उपमा न आवत है,
ईगुर सी आछी अरुनाई अधरन मे ।
अंग वर इदुमुखी ओज सो अमल ऐसै,
लसै अजनन सै, अजब अगहन मे ॥ २ ॥

पौष

पन्नन के पायन की पलग पुरट बनी,
पलग पुरदर की पावती न परतल ।
पाटी पद्मराग-परबाल औ पिरोजन की,
जापै परयौ पद्म सौ परम पट परिमल ॥
'गिरिधरदास' पौन पुहुप पराग लै,
प्रगट पहुँचावै परमा सो पूरौ पल-पल ।
प्रेम पगे पूस मे, प्रिया को पिया प्यार करें,
प्यारे को लखति पद्मिनी के ना परहि कल ॥ ३ ॥

**

सीतल जल-थल-बसन, असन सीतल अनरोचक ।
'केसवदास' अकास-अवनि सीतल असुमोचक ॥
तेल-तूल-तामोल, तपन-तापन, नव नारी ।
राज-रक सब छोडि, करत इनही अधिकारी ॥
लघु द्यौस, दीह रजनी रवनन, होत दुसह दुख रूस मे ।
ये मन-क्रम-बचन विचारि पिय, पथ न बूझिए पूस मे ॥४॥

हेमंत

★

हेमत–वर्णन

सुंदर सोभित सुखद सरद, हेमतहि भेटी आय ।
जैसै बालक देखि माय को, गिरै गोद मे धाय ॥
जानि परै, जमुना–जल पैठत पैर गए कटि दूर ।
'सी-सी' करत किनारे आवै, जाडौ है भरपूर ॥
पहले सं नहि कमल खिलै अब, निसि मे परै तुषार ।
स्वच्छ सेत हिमयुक्त हिमाचल, दर्सन योग बहार ॥
सूरज भयौ छपाकर, मानो धूप गई पतराय ।
मनहुँ सीत भयभीत याहि लखि, वारिद लेय छिपाय ॥
हरित खेतमय गाँमन भीतर, हिम–कन भीगी दूब ।
मटर फली अरु कोमल मूली, मीठी लागै खूब ॥
ज्वार, बाजरौ, मूँग, मसीनौ, मोठ, रमास, गुवार ।
सन–तिल आदिक, अरहर तजि, सब कटि आए घर द्वार ॥
रबी जहाँ सींची जावै, तहँ गेहूँ–जौ लहराँय ।
सरसो–सुमन प्रफुल्लित सोहै, अलि–माला मँडराँय ॥
प्रकृति दुकूल हरौ धारन कर, आनन अपनौ खोल ।
हाव–भाव मानहुँ बतरावै, ठाडी करै कलोल ॥
सीर समीर तीर सम लागत, करत करेजे पीर ।
दिन छीजत, रजनी बाढत, जिमि द्रुपद सुता कौ चीर ॥
धुँआ न चैन लेन छिन देवै, अस्रु बहावैं नैन ।
छाती तले अँगीठी सुलगै, ताहि उठावैं पै न ॥
ज्वाला तापि, दुलाई ओढे, रहै धूप मे जाय ।
चाय भरौ सविसाला प्याला, पीवैं हिय हरषाय ॥
साल–दुसाला धारै निसि दिन, गरम मसाला खात ।
सीत–कसाला भाजा उर मे, लगै न पाला जात ॥
मृगमदादि–सौरभ सुखकारक, सेवन कर सुहाय ।
भोजन समय कप तऊ होवै, हाथ जाहि ठिठुराय ॥
पान खाँय डिबिया भर-भरकै, तबहुँ न कष्ट नसाय ।
तरनि ताप तें तापे बिन कब, सीत–कसाला जाय ॥ ५ ॥

कंज ना सुखाए, ये सुखाए रंज मन ही के,
सीत ना बढाई, नीति प्रकटी समत है ।
रात ना अधिक, करी रति अधिकाई भाई,
दिन ना घटायौ, कर्म-वासना तुरत है ॥
'गिरिधरदास' पौन सीतल असह है ना,
प्रेम के प्रवाह जग चलन टरत है ।
राधिका के कत कौ भगत मति मद है,
कै व्रज सीतवत रितु प्रकट हिमत है ॥६ ।

*

आयौ है हिमंत जोर जोडि कै प्रसगन सो,
रेसम के झगन मे अगन दुराए देत ।
कहै 'नदराम' त्यो हमाम हू न काम सरै,
धाम-धाम आला पौन पाला को उसाए देत ॥
तूल-पेट-पीठिन-अँगीठिन मे डीठि लगी,
तरुनी बिहीन तन कप सरसाए देत ।
दो गुनौ कहो तौ चित चौगुनो चुरात हेरि,
नौ गुनौ न सौगुनौ समीर-सीत नाए देत ॥७॥

*

छाई है धरा पै सियराई चहुँ ओरन ते,
पलटि गई है पूरी प्रकृति अनत की ।
पानी-पौन-पुहुमी पराग अगरागन की,
अगन अँगार दिसि-विदिसि दिगंत की ॥
कँपि-कँपि आवत करेजौ 'जगमोहन जू',
कामिनी छोडाऐ हिए छोड़त न कत की ।
हरषि हजा के, कल काढत कजा के छाके,
बाढ़त निसा के, अंग ढाकत हेमंत की ॥८॥

*

अवनि तें, अकास ते, अवासन ते, उदक तें,
इदु के उदै तें, आसुरे तें उमडौ परै ।
'स्याम कवि' मालन ते, मन ते, मनी ते, मन-
मोहन के मोह ते, मनोज ते मडौ परै ॥

झाँकनी झरोखन ते, झंझा के झोकन ते,
झाडन ते, झारन ते भूमि झुमडौ परै ।
पान ते, प्रसून ते, पराग ते, पहारन ते
हारन ते, हेम ते, हिमंत हुमडौ परै ॥९॥

कातिकादि चारो मास, तखत बिछाय बैठ्यौ,
बद्दल सजल जल छत्र छवि छाई है ।
जब-तब मेह-धार चौर चारु ढोरियत,
सुरहर पौन की वजीरी सरसाई है ॥
'ग्वाल कवि' बरफ बिछायत कुहर दल,
ठिरनि प्रबल नीकी नौबत बजाई है ।
सीत बादसाह सौ ना दूजौ कोऊ दरसाय,
पाय बादसाही बाँटै सबको रजाई है ॥१०॥

*

चारो ओर चरचा चली है चपरालिन की,
दीरघ दरेरौ द्वार-द्वार दुलहिन के ।
लागे लोग लाले-पीले बसन रँगीले लैन,
दैन त्यो किंवार कपि कोठे पै रहन के ॥
त्यो ही 'जगमोहन' तलास अबला को होन,
तरुनी-तमूल-तूल तीषन दहन के ।
आछे मृगमद के, अमोद उद्गारे, त्यो-
बहारदार मंजुल महीना अगहन के ॥११॥

*

नारी बिन होत नर, नारी बिन होत बर,
रात सियरात उर लाऐ पयोधर मे ।
'बेनी कवि' सीतल समीर कौ सनाका सुनि,
सोवै सब साँझ ते, कपाट दै सहर मे ॥
पछी पख जोरे रहै, फूल-फल थोरे रहै,
पाला के प्रकास आस-पास धराधर मे ।
बसन लपेटे रहै, तऊ जानु फंटे रहै,
सीत के समेटे लोग लेटे रहै घर मे ॥१२॥

आयौ सखि पूसौ, भूलि कत सो न रूसौ, केलि-
ही सो मन मूसौ, जीउ ज्यों सुख लहत है ।
दिन की घटाई, रजनी की अघटाई, सीत-
ताई हू कौ 'सेनापति' बरनि कहत है ॥
याही ते निदान प्रात बेगि उदै होत नाँहि,
द्रौपदी के चीर कैसौ राति कौ महत है ।
मेरे जान सूरज पताल तप ताल माँझ,
सीत कौ सतायौ कहलाय कै रहत है ॥१३॥

*

सूर ऐसे सूर कौ गरूर करौ दूर कियौ,
पावक खिलौना कर दियौ है सबन को ।
बातन की मार ही ते गात की भुलात सुधि,
काँपत जगत जाकी भय आन मान को ॥
'गिरिवर दास' रात लागै काल-रात कीसी,
नाँहि सो लगत भूमि राखत चरन को ।
आयौ है हिमंत, भूमि कत तेजवत दीह,
दतन पिसात ये दिगत के नरन को ॥१४॥

*

कोक सोकप्रद, सीत युत, काम केलि अत्यंत ।
रजनी दीह, अदीह दिन, संयुत रितु हेमंत ॥१५॥

*

कियौ सबै जग काम बस, जीते जिते अजेय ।
कुसुम-सरहि सर-धनुष कर, अगहन गहन न देय ॥१६॥

*

आवत-जात न जानियत, तेजहि तजि सियरान ।
घरहि जवाँई लौं घटौ, खरौ पूष दिन मान ॥१७॥

*

दिन निसि रवि ससि, लहत है हेम सीत के योग ।
भरम चकोरन भोग है, कोकन भरम वियोग ॥१८॥

*

मिलि बिहरत, बिछुरत मरत, दंपति अति रति-लीन ।
नूतन विधि हेमंत रितु, जगत जुराफौ कीन ॥१९॥

पौन-पान-पानो भए सीतल सुहाए स्वच्छ,
असन सवाद भयौ सबही मिठाई सौं ।
कहै 'रतनाकर' बिचित्र चित्रसारी माँहि,
उठत सुगंध-धूम मौज मन-भाई सौं ।
विविध बिलासनि के हरष-हुलासनि सों,
सुखद बसत होत सुकृत-कमाई सौं ।
बाम अभिराम सी सुहाई घाम देह लगै,
लागत सनेह नए नेह की निकाई सौं ॥२०॥

*

धारि कै हिमंत के सजीले स्वच्छ अंबर को,
आपने प्रभाव कौ अडंबर बढ़ाए लेति ।
कहै 'रतनाकर' दिवाकर-उपासी जानि,
पाला कंज-पुंजनि पै पारि मुरझाए लेति ॥
दिन के प्रताप औ प्रभा की प्रखराई पर,
निज सियराई-सँवराई छबि छाए लेति ।
तेज-हत-पति-मरजाद-सम ताकौ मान,
चाव चढ़ी कामिनी लौं जामिनी दबाए लेति ॥२१॥

*

अंत पुर पैठि भानु आतुर कढ़ै न बेगि,
चिर निसि-अंक मे निसापति डरे रहै ।
कहै 'रतनाकर' हिमंत कौ प्रभाव ही सो,
संत-मन हू मे भाव और ही भरे रहै ॥
नर-पसु-पच्छी, सुर-असुर समाज आज,
काम-अरचा मे निसि-बासर परे रहै ।
ह्वै कै कुसुमायुध के आयुध उबारू अब,
सब वरिनी ही मे धरोहर धरे रहै ॥२२॥

*

सूरै तजि भाजी, बात कातिक मे जब सुनी,
हिम की हिमाचल तें, चमू उतरति है ।
आए अगहन, कीने गहन दहन हू कों,
तन हू तें चली, कहूँ धीर न धरति है ॥

हिय मे परी है हूल, दौरि गहि तजी तूल,
अब निज भूल 'सेनापति' सुमिरति ह ।
प्रस मे त्रिया के ऊँचे कुच-कनकाचल मे,
गढवै गरम भई, सीत सो लरति है ॥२३॥

*

हेरत हिमत के अनत प्रभुता कौ दाप,
भानु के प्रताप की प्रभा हू गरिबे लगी ।
कहै 'रतनाकर' सुधाकर किरन फोरें,
काम के जिवावन कौ जोग करिबे लगी ॥
बदलन बाने सब निज मनमाने लगे,
चारो ओर और ही बयार भरिबे लगी ।
जोगिन के होस पै, भरोस पै बियोगिन के,
रोस पै सँजोगिन के, ओस परिबे लगी ॥२४॥

*

बिचलत मान जानि हँसत-अवाई माँहि,
ढीली परी सकल हठीली सकुचाई है ।
कहै 'रतनाकर' सुलाज राखिबे के काज,
ताके रोकिबे की वृथा, बिधि बहु ठाई है ॥
डारि राखे परदा चहुँघाँ मजु मदिर मे,
अगर-सुगध ते, दसौ दिसि रुँधाई है ।
चोली कसमीरी कसी, कंपित करेजन पै,
सेजनि पै साजि धरी दुहरी दुलाई है ॥२५॥

*

नर कहा, नारी कहा, पसु कहा पछी, मन-
काहू के न होत घर छोडि निकरन की ।
अंगन अँगोछ, करै जप-तप-होम-दान,
जात न कही है कछु करनी करन की ॥
कहै 'मनिदेव' जुगुनू लौं, कढि जात आसु,
चरचा न होत कहूँ भानु के करन की ।
घरी-घरी बोलै जन, घरी जौन होती कहूँ,
घरी तौन होती सध्या-बंदन करन की ॥२६॥

तुलसी लसी सु अंग अतिसै उमंग देति,
जासु मन बास योगी जन बिलसत है ।
सीतल सँवारि उर कला दरसाय करि,
जात न बिलोकि सोक कोक विलपत है ॥
जातु की विभावरी, बिसाल लखो 'दीनद्याल',
मित्र रूप सब ही के सुखद बसत है ।
कैधौ है हिमंत, कै सुतंत सित संत सभा,
कैधौ सुखमा लसत कमला के कंत है ॥२७॥

*

बिकसन लागे मुचुकुंद लवली औ लोध,
कछु परसौं ते सरसौं हूँ दलिनी भई ।
कहै 'रतनाकर' मनोज-ओज पोषन को,
बन-उपबन मे, प्रफुल्ल फलिनी भई ॥
औरै और कलिनि खिलावत समीर हेरि,
माष मन मानि कै मलीन नलिनी भई ।
हेमंत मे काम की अपूरब कला सों चकि,
कोकिल भुलाने कूक, मूक अलिनी भई ॥२८॥

*

भावन लगी है असु पावन प्रभाकर की,
छावन लगी है गति सीत की दिगंत मे ।
राग अधिकानी, दिन हानी त्यो प्रतच्छ भई,
सृष्टि सियरानी है, गरम सलसंत मे ॥
कहै 'तोष' हरषि जे मूढ़े रंग अंग पट,
चाहत उमंग कंत कामिनी इकंत में ।
सेवै भागवंत, मद-मादक छकंत, सुख-
स्यामा कौ अनंत, छबिवंत या हिमंत मे ॥२९॥

*

कामिनि काढ दई कर कंकन, अगद ना कर संगत है ।
जोसन जोरिन बाजु बहोरि, धरी तब हू कर रंगत है ॥
पीन नितंबन, नूतन अंबर, कंबर माँहि असंगत है ।
भीन दुकूलन, पीन पयोधर, हेतु हिमंत प्रसंगत है ॥३०॥

हेमंत का शीत

सिसकत रहत तमीपति रजनि माँहिं,
तमरिपु हू को होत कढत कसाला है ।
सी-सी करि घरी-घरी घूमत चहूँघा रहै,
सीरी पौन हू को गरमी कौ परयौ लाला है ॥
'हरिऔध' आकुल ह्वै अरौ खरौ रूख हू है,
ठरौ सीत भरौ वाकौ ठौर हू कौ ठाला है ।
बूझि परै बाला हिम-गाला सी दुसाला माँहिं,
पाएं सीत-काल ज्वाल-माला भई पाला है ॥३१॥

★

सीत की सवाई सी दिखाई परै दिन-रात,
खेतन मे पात-पात जमे जात सोरा से ।
सरर-सरर बरफान की पवन आवै,
करर-करर दंत बाजै झकझोरा से ॥
'ग्वाल कवि' कहै ऊन अबर निचोरै जहाँ,
सूती बसनन ते तौ बहे जात घोरा से ।
जोरि-जोरि जघन उदर पर धरि-धरि
सिकुरि-सिकुरि नर होत है ककोरा से ॥३२॥

★

पोर-पोर अँगुरी की वारि ते गरन लागी,
सीकर मलीन या दिगंतन करै लगौ ।
कोमल मरीचै ह्वै गई है मारतंड हू की,
आतप मे प्रानिन कौ प्रेम हू अरै लगौ ॥
'हरिऔध' भू पर लखात है हेमत छायौ,
दिन-दिन बासर कौ गात हू गरै लगौ ।
या तन को सीरी पौन परसै कसाला होत,
पादप के पातन पै पाला हू परै लगौ ॥३३॥

★

सीत कौ प्रबल 'सेनापति' कोपि चढ़यौ दल,
निबल अनल, गयौ सूर सियराय कै ।
हिम के समीर, तेई बरसै विषम तीर,
रही है गरम भौन कोनन मे जाय कै ॥

धूम नैन बहै, लोग आग पै गिरे से रहैं,
हिय सो लगाय रहै, नैक सुलगाय कै ।
मानो भीत जानि, महासीत ते पसारि पानि,
छतियाँ की छाँह राख्यौ पावक छिपाय कै ॥३४॥

*

धाई चली आवत है कैधौ ध्रुव-धाम ही ते,
कैधौं गिरी भू पै चद्र-मडल के फोरे ते ।
कैधौ याहि काढ्यौ कोऊ उदक-सरीर गारि,
कैधौ बनी सीतलता जग की निचोरे ते ॥
'हरिऔध' कहै ऐसी दुसह हिमत-बात,
कैधौ भई सीरी बार-बार हिम बोरे त ।
कैधौ चली चदन परसि मलयाचल को,
कैधों कढ़ि आवत हिमाचल के कोरे ते ॥३५॥

*

छोटे दिन है गौ, दुख ओट छुटिवे कौ भयौ,
मोट सुख-लूटि मे, निसा को बडी जोरै ना ।
तैसे तेल-तूलन-तमोलिन के रग भरे,
पामरी दुकूलन ओढ़ाय मुख मोरै ना ॥
'सेवक' रसालन मसालन के माचे मोद,
आग हू की सालन विसालन को दौरै ना ।
खाय काम तंत कै अनत सरसंत मोको,
पाय-पाय हरषि हिमंत कत छोरै ना ॥३६॥

*

भान हू की लागी प्रीति दिगगना अगिनि सो,
सीत-भीति जागी इमि सकल समत को ।
कहै 'रतनाकर' रहत न अकेले बनै,
मेले बनै रूसि हू तिया सो दोषवत को ॥
हिम की हवा सो हलि, अचल समाधि त्यागि,
लपटनि-लालसा-लसित लखि कंत को ।
पाट की पिछौरी बाहु दाहिने पखौरी किए,
गौरी लगी हुलसि असीसन हिमत को ॥३७॥

हेमंत-विलास

पाय निसि दीरघ अघाय चितै मुख चंद,
दुनऊ चकोरिन चकोर लौं जियौ करै ।
दूर करि सीत चूर रितु कौ प्रताप पूरि,
बसन चहूँवा भूरि आनँद लियौ करै ॥
दूनऊ दुहून के अभा परसपर ह्वै कै,
कइर परसपर सीतल हियौ करै ।
सरस परसपर दंपति 'दिनेस' ह्वै,
परस्पर केलि कल कौतुक कियौ करै ॥३८॥

*

चारो ओर मोडि, बैठे दाब चारो ओरन लौं,
ज्योंही मनमथ राखौ हिमन दुहाई मे ।
जावक अरगजा के तिलक बिराजि रहे,
भाग भरे भागन की जगमगताई मे ॥
अलक चमर 'घनस्याम' बाजै नूपुरादि,
बटत हँसन-अवलोकन बधाई मे ।
थिरि चिर ऐसौ राज, देखो-देखो सखी आज,
दुहुँन रजाई पाई, एक ही रजाई मे ॥३९॥

*

दाबै चारो कोर राजै, नूपुर निसान बाजै,
छाजै छबि कर कुच भट भिरिबौ करै ।
सिहासन सेज सोहै, सीस सीसफूल छत्र,
अलख अनौखे चारु चौर ढरिबौ करै ॥
मैन मत्री मत्र देत, भायन बढत भूर,
बदी जन भूषन बिरद ररिबौ करै ।
हिम की हिमाई, सुखदाई सी 'गोविंद' दोऊ,
एक ही रजाई मे, रजाई करिबौ करै ॥४०॥

*

पूस-निसा मे सु बारुनी लै, बनि बैठे दुहूँ के दुहूँ मतवाले ।
त्यो 'पदमाकर' झूमै-झुकै, घन घूमि रचै रस-रंग रसाले ॥
सीत को जीत अभीत भए, सु गनै न सखी कछु साल-दुसाले ।
छाक छका छबि ही की पिऐ मद, नैनन के किऐ प्रेम के प्याले ॥४१॥

तरुनि-तमोल रचि अग-रंग राजत है,
उभय अनग सग साजै निज कत कौ।
'द्विज बलदेव' कहै हरपि हिए अपार,
प्रमुदित वाद्य करि सुर-ताल तत कौ॥
सीत सरसात, तूल सेवत त्यो जात नेह,
उदित है वात, सुख मोभित सिमत कौ।
मोद अनुराग, मन रंग छवि बाग
लखात बल भाग, भयौ आगम हिमत कौ॥४२॥

*

प्यारी-पिया पौढि परयक पर सोहत है,
'मोहन' परसपर रस-बतियान करि।
आपस मे बेधे मन नेह सरासन चढे,
तीच्छन कटाछन सो, भौहै धनु तान करि॥
राधा-मनमोहन जू अगन के सगनि सो,
पुलकित होय रहे, लपटि भुजान करि।
सुख कौ न अत, लह्यौ रजनी हिमत रितु,
कियौ गुनवत कत काम की कलान करि॥४३।

★

कामरी की खोही मोही गोपन की जाई बाल,
आई लाल पामरी रजाई परहरिकै।
कहै 'कालिदास' पास भई है एकंत, कत-
लीजिए लपेट, लपटाय अक भरिकै॥
रैन मे नगर द्यौस जन कै बगर कीजै,
जगर-मगर ब्रज भूमि केलि करिकै।
पूस मे कलाधर ये धन कौ न छोडै संग,
तातै रंग कीजै, हिए प्रेम-ध्यान धरिकै॥४४॥

★

संदर मदिर अंदर मे, बहु बदनवार-वितान अडोलै।
है परदा मखतूलन के, तिहि मूल बिछी गिलमे गुलगोलै॥
'बल्लभ' दीपत दीपति है, मनि त्यो सुक-सारिका के गन बोलै।
ए री! हिमत मे राधिका स्याम, करै बहु रग उमग कलोलै॥४५॥

नील निकुज बनौ रस-पुंज, चहूँ दिसि हेम बितान है तानौ।
आछे परे परदा मखतूल के, तूल कौ चारु बिछायौ बिछानौ॥
केलि करै 'गिरिधारन जू' संग लै तिय को मध आतसखानौ।
पावक ही की सिखान के संग, अनंगहि पावक पूजत मानौ॥४६॥

★

मंजु मनोहर सीत सुगंध, सुँघे प्रिय रैन सचैन रमै।
सो घन नील सरोरुह से, निरमाल दुरावत भोर समै॥
पीन उतंग उरोज के भारन, गौन समय मृदु गात नमै।
नूतन गंध रची कच मे, कितनी तरुनी तनु मैन जमै॥४७॥

★

छाई है हिमंत-बात तंत की बताय देत,
अंत को बराय जिय अंत को न जाइऐ।
'द्विज बलदेव' कहै कस कहि दूर करि,
काम की कलोल कान्ह कामद मचाइऐ॥
अतर-तमोल-तेल-तूलन के तुंग साजि,
ताती सी सोहाति सेज तापै इत आइऐ।
करन है आन तजि, मान कौ समान नैक,
मानिऐ प्रमान निसि भान उर लाइऐ॥४८॥

★

मेरे मिलाऐं मिली दिन द्वैक, दुरै-दुरै आनँद ओघ अघाती।
त्यों चसकौ चित चित्तए चाहिऐ, सोच-सँकोचन सो लचि जाती॥
'देव' कहाँ ते बनै बिधि दोऊ. इतै मुख देखि लला को लजाती।
है इत सीत मे संग लहै, उत सोइबे को अतिसै ललचाती॥४९॥

★

बैरी बयार लगै बरछी सी, अँगार लगै 'हिम मैन मसूस मे।
पान सुगंध सनेह सुरंग, सुमेर हरी सजी सेज अदूस मे॥
जाय नही रवि हू के तपे बिन कंत हिमंत के जोर जलूस मे।
कीरति-लाडिली प्रेम की माडिली, बावरी 'रूसत है कोऊ पूस मे॥५०॥

★

सुनि कै सखियान पै साईं सवार, चले इत पूस कौ मास जु लाग्यौ।
'रसिकेस' रहे सुख होय महा, अब कीजै कहा सु मनोभव जाग्यौ॥
कछु ठानी उपाय, दई को मनाय, पसारिकै अंचल सो वर माँग्यौ।
गहिकै वर बीन प्रवीन तिया, तब ही तहाँ राग मलार सुराग्यौ॥५१॥

हेमंत-विलास के साधन

सौने की अँगीठिन मे अगिन अधूम होय,
होय धूम-धार हू तौ मृगमद आला की।
पौन कौ ना गौन होय, भरक्यौ सुभौन होय,
मेवन कौ खौन होय, डब्बियाँ मसाला की॥
'ग्वाल कवि' कहै हूर-परी सी सुरंग वारी,
नाँचती उमग सो तरग तान ताला की।
बाला की बहार औ दुसाला की बहार आई,
पाला की मे बहार, बहार बडी प्याला की॥ ५२॥

*

अमल अनोखे, अति चोखे भरे प्यालन मे,
अमित मसालन की गिनती गिनावै क्यो।
गिलमै गलीचन की, परदा दरीचन की,
सेजन की सुखमा अनूप कवि गावै क्यो॥
साल औ दुसालन मे, रेसमी रुमालन मे,
लौने दीप जालन मे, सो हिमत पावै क्यो।
'रसिक बिहारी' नव बाला अंग माला किए,
मदन बिहाला तिन्है सीत-भीत पावै क्यो॥५३॥

*

गाले अति अमल, भरा ले तोसको मे, फेर-
ऊपर गलीचे बिछवाले जाल वाले अब।
सेजन पै सेजबंद खूब कसवाले बनि,
खाले रस वाले जे गजक बनवाले सब॥
'ग्वाल कवि' प्यारी को लगाले लिपटाले अंक,
सौइकै दुसाले मे,मजा ले अति आले जब।
मजुल मसाले मिले, सुरा के रसाले पिऐ,
प्याले पर प्याले, मिटै पाले के कासले तब॥ ५४॥

*

सीत अनीत करै अति भीत, जिन्है निज मीत मिले कपटी है।
तीर सी लागै समीर हिए, रहती जो दुसालन मे लपटी है॥
है 'रसिकेस' सुखी तिय सो, बिरची सर मे जुनहीं रपटी है।
काह हिमत करै तिनकौ, रहै कत की जो छतियाँ छपटी है॥५५॥

प्रात उठि आइबे को, तेलहि लगाइबे को,
मलि-मलि न्हाइबे को, गरम हमाम है ।
ओढिबे को साल, जे बिसाल है अनेक रंग,
बैठिबे को सभा, जहाँ सूरज की घाम है ॥
धूप को अगर, 'सेनापति' सोधौ सौरभ कौ,
सुख करिबे को छिति अंतर कौ धाम है ।
आए अगहन, हिम-पवन चलन लागी,
ऐसै प्रभु लोगन को होत बिसराम है ॥५६॥

*

अगर की धूप, मृग-मद की सुगंध वर,
बसन बिसाल-जाल, अंग ढाकियतु है ।
कहै 'पद्माकर' सुपौन कौ न गौन जहाँ,
ऐसे भौन उमँगि उमंग छाकियतु है ॥
भोग औ संयोग हित सु रितु हिमंत ही मे,
एते सब सुखद सुहाए वाकियतु है ।
तान की तरंग, तरुनापन-तरनि-तेज,
तेल-तूल-तरुनि-तमूल ताकियतु है ॥५७॥

*

गावें गीत अंगना प्रबीन कर बीन लिऐं,
आनँद-उमंग भरी रंग के भवन मे ।
कहै 'रतनाकर' जवानी की उमंग होय,
तंग होय बसन सजीले तने तन मे ॥
सुखद पलंग होय, दुहरी दुलाई लगी,
आनँद अभंग तब होय अगहन मे ।
नूपुर के संग-संग बाजत मृदंग होय,
रंग होय नैनन, तरंग होय मन मे ॥५८॥

*

मारग-सीरष, पूस मे सीत हरन उपचार ।
नीर समीरन तीर सम, जनमत सरस तुसार ॥
जनमत सरस तुसार, यहै रमनी सँग रहिऐ ।
कीजै जोबन-भोग, जनम जीवन-फल लहिऐ ॥
तपन-तूल-तंबूल, अनल अनुकूल होत जग ।
'सेनापति' धन सदन बास, न बिदेस, न मारग ॥५६॥

मीनन के चौके चुने, चमकै नगीनन के,
झीने पल माने कैसे गहब गहीले हैं ।
तूलन के तागे, धागे मजु मखतूलन के,
रेसम दुकूलन के परदे रँगीले हैं ॥
नीचे नए खासे 'जगमोहन' गलीचे यो,
मो सेज के नगीच ही चिराग चटकीले हैं ।
लपटे सु आसन मे, छपटे दुसालन मे,
मोए सीत-कालन मे, छिपकें छबीले हैं ॥६०॥

*

खासी कोठरीन मे सँवारी सेज सौंधे सनी,
आस--पास अगर-कपूर बगरे रहैं ।
दरन सु परदा गलीचन सो झपि भूमि,
बरैं दीप कंचन के, अतर धरे रहैं ॥
ऐसै समै कत सग जुवती हिमंत रितु,
पौढि पलिका पै, दोऊ आनँद भरे रहैं ।
सीत-त्रास दपटे से, कपटे दुकूल-दुख,
लपटे दुसालन सो, छपटे परे रहैं ॥६१॥

*

आडे ना रहत, रोम ठाढे ही सदा रहत,
पच्छिम को पवन फेरि पाला सो कटत है ।
कंपत करेज, सेज सोइऐ सुखत अरु,
गब्बर गरीबन की गरुता घटत हैं ॥
'ठाकुर' कहत फेरि पानी ते परस होत,
होत तन पीर, नैम नाँही निपटत है ।
ओढ़िऐ दुसाला, तरे तोसक बिसाला, बिना-
लागै अग बाला, सीत-काला ना कटत है ॥६२॥

*

अभिराम हमाम के धामन मे, चहै केतौ अराम लपेटि पटै ।
बिरचे बिधि केते दुसाले बिसाले, धरे तन मे नहिं पाले कटै ॥
'रघुराज' कहै सखी सूरज हू न, निवारि सकै हिय हारि हटै ।
छिति मे छिनदा मे छबीली बिना, छतियाँ छपटै हिम की दपटै ॥६३॥

दर-दर ढाँपे, जऊ थर-थर काँपे अंग,
अग नवलान के अनंग रस राचै है।
विविध विलास के अबास सुख-रास जहाँ,
मृगमद-धूम औ अँगीठिन मे आचै है॥
बार-बधू निरतत मुढंग तें उमग भरी,
अमिल अलापन मे सप्त सुर साचै है।
'रसिकबिहारी' हितकारी प्रानप्यारी-मुख,
देखिकै हिमंत मे, अनत मोद माचै है॥६४॥

*

तेल औ तमोल पुन तरुनि-तुराई-तूल,
जेते सुख-साज तेते सब ही पुरे रहै।
असन-बसन उष्न कोटिन बिधानन के,
ठौर-ठौर द्वारन किवार हू मुरे रहै॥
रसना-अधर-नैन-कंठ-उर-बाहु सबै,
नव रस अग तिय-अंग सो जुरे रहै।
'रसिकबिहारी' तऊ व्यापत हिमत-सीत,
जदपि घनेरे भले, भौन मे दुरे रहै॥६५॥

*

ब्रह्म यंत्र वारे भारे लपकै सुगव, तैसै—
आलि दीपमाल लाल जालन जरे रहै।
परम प्रबीन बीन लै-लै सुखकार,
'सरदार' चीन-चीन रग-रागन भरे रहै॥
चूमि चदबदन, चपाय पाँय-पाँय मेलि,
उरज उतग अंग-अगन अरे रहै।
करदे करन हारे, सरदे समीरन के,
जरदे दुसालन के, परदे परे रहै॥६६॥

*

ओक-ओक लोक सब करत कलोल निसि,
कोकन को सोक भौ, कलानिधि को काफा सौ।
भनत 'दिवाकर' लगावत अतर अंग,
बारत हुतासन डरपि कै बराफा सौ॥

राजा औ अमीर पसमीना के बहार लेत,
मुजरा बरंगना करावत इजाफा सौ ।
आयौ ये हेमत, कंत लहत अनंत सुख,
सत जड सैन लेत, जगत जुराफा सौ ॥६७॥

*

हेमंत–विरह

पल–पल, दिन–दिन जामिनी घटन लागी,
भामिनी जगन लागी, जामिनी इकंत मे ।
भनत 'दि्वाकर' संयोगिनी सुखी न कीनी,
दुखिनी वियोगिनी लगीना हँसि हत मे ॥
घर–घर, धर–धर बाजत कपाट–पाट,
सटपट सेज पै मजेज छबिवंत मे ।
सखी इहि पाख मे, जो आयौ न हमारौ कंत,
होगे प्रान अंत, नहि पाइकै हेमंत में ॥६८॥

*

छाई सीतलाई, मुरझाई कला कुंजन की,
मानो मनरंजन की पाइकै जुदाई है ।
कापै कहि जाई, दिन हू की लघुताई, जनु—
रही छलताई, लखि प्रीति सकुचाई है ॥
रैन अधिकाई, भयौ बिरह सहाई, तासु–
सीत चहुँघाई, विन मीत भीत धाई है ।
पीर सरसाई, फूली सरसो सरस भाई,
हेम रितु आई, न कन्हाई–सुधि पाई है ॥६९॥

*

बरसै तुपार, बहै सीतल समीर नीर,
कपमान उर क्यो हू धीर न धरत है ।
रातन सिरात, सरसात व्यथा बिरह की,
मदन–अराति जोर जोबन करत है ॥
'सेनापति' स्याम ! हम धन है तिहारी, हमै–
मिलौ, बिन मिलै, सीत पार न सरत है ।
और की कहा है, सबिता हू सीत रितु जानि,
सीत कौ सतायौ धन रासि मे परत है ॥७०॥

बास पिय पास जाकौ, अति ही हुलास ताकौ,
भोगन रसाल रास-रस सरसायौ है ।
चकचौंधि देखि-देखि चकित चकोर चाहैं,
ससि के समान सर सीतल सोहायौ है ।।
बहत समीर सीरी, दहत हमारौ अंग,
रहत न धीर, यों अनंग उँमगायौ है ।
छल सो धर्यौ है नाम अगहन, गहन सम,
बिरही गहन प्रान, अगहन आयौ है ।।७१।।

*

पूस के महीना काम-बेदन सही ना जाय,
भोग ही के औसन ही बिरह अधीन के ।
भोर ही को सीत सो न पावक छुटन,त्योंही-
रात आई जान, है दुखित गन दीन के ।।
दिन की नन्हाई 'सेनापति' बरनी न जाय,
रंचक जनाई, मन आवै परबीन के ।
दामिनी ज्यों भानु ऐसै जात है चमकि,ज्यों न-
फूलन हू पावत, सरोज मरमीन के ।।७२।।

*

पीय-पीय रटत रहत आठ हू पहर,
रसना भई रहत, ज्यों पपीहा पावसी ।
घरी-घरी दहै मैन, चित को न कहूँ चैन,
रह्यौ न परत ऐन बूड़े बेन नाव सी ।।
'तुलसी' कहत पिय प्यारे के समीप बिना,
भूषन की कहा, भौन-भोजन न भावसी ।
पीउ बिन पूस मास, पैयत न चैन आली,
बुंद ऐसौ दिन होत, रैनि दरियाव सी ।।७३।।

*

चंद्रक-चंदन चारु चितै, चख नीची करै, न बयारि सोहाई ।
आनन पानिप रूखे भए, दिन ते अति होत निसा अधिकाई ।।
फूलन सेज विभूषन जाल, चहै छितिपाल नहीं नियराई ।
बाहर भावत है न भटू, बनि बाल बियोगिनि सी हिम आई ।।७४।।

परत तुषार, झार उठत अपार भार,
द्वार भौ पहार, पूस आँगन सुहात है ।
बीछी के से छौना, भरे मानहुँ बिछौना माँझ,
दिसि हू बिदिसि लगि घेरे घर घात है ॥
'विट्ठल' सुहित अति गति-मति भूलि जात,
चातिका करान, जब बोलै अधरात है ।
बिरह ते हिरात पिया बिन रहौ, रात-
आवै नियरात, तिय जात पियरात है ॥ ७५ ॥

*

परत तुषार भार, काँपै हिय हरि-हरि,
रजनी पहार, दिन आग जैसे फूस की ।
द्वार-द्वार परदे परे हैं भरे तूलन के,
भीतर गँवारि धरे पलँग जलूस की ॥
'राम कवि' कहत हनत मीत अब-तब,
आव रे सुजान, तेरी छाती आबनूस की ।
जैसै-तैसै कान्ह पट मास तौ व्यतीत कर्यौ,
निपट जुवाल भई, काल-रैन पूस की ॥ ७६ ॥

*

अग सुकराय, औ उसाँसन थकाय नैक,
हिय को हिमत बात बेधै चहुँघाय जूटि ।
तासु दरसाय दसा तो बिन मलीन अब,
सब सुख चायन को लीन्हौ कामदेव लूटि ॥
खान-पान को नसाय, डोलै तो बिरह पाय,
मूँदि पलकन को, रहै लोगन ते दूरि छूटि ।
भूलि भूलिकै कुपथ, जाय सुनि प्यारी ताकै-
काँटौ गड़ि जाय, पै न जाय तेरौ ध्यान टूटि ॥ ७७ ॥

*

सेज सजाई रजाई समेत, जहाँ तहँ आई पिया जो सु अत की ।
गाढ सुरा है तुरत अँची, तब कीनी अरभ कछु बात इकंत की ॥
ज्यो हरि 'तोप जू' सो हँसि कै रसि कै चसकै सिसक छबिवत की ।
हूलै हिए झुकि झूल सु मूरति, भूलै नहीं हमै केलि हिमन की ॥ ७८ ॥

अमल कमल-दल लोचन ललित, गात-
जरत, समीर सीत-भीत देह दुख की ।
चद्र को न लख्यौ जाय, चंदन न लायौ जाय,
चदन चितायौ जाय, प्रकृति बपुरन की ॥
घाट की घटत जात, घटना घरी हू घटी,
छिन-छिन छीन छबि रवि-मुख सुख की ।
सीकर तुषार स्वेद सोहत हेमत रितु,
कैधौं 'केसवदास' तिय प्रीतम बिमुख की ॥७६॥

★

बैठत उठत जात आवत सकारे-सांझ,
काम के करारे बान हिए डोलियतु है ।
देखै बन-बाग भले लागत भयावन से,
खान-पान माँहि मानो विष घोरियत है ॥
धाय कै हिमंत-वाय, बेधत दुखद काय,
छाय कै करेजौ छिन माँहि छोलियत है ।
लखै क्यो न जाय, ताहि बिरह सतायौ-तायौ,
तो बिन सहाय हाय-हाय बोलियत है ॥८०॥

★

एक ओर बान पचबान को गहाइ दीन्हों,
एक ओर रन अति कठिन लखावतौ ।
दोषाकर बीच दोष आकर बसाई सीत,
भीत करै जेत प्रीति बाहिर निबाहतौ ॥
'बंसीधर' कहै घर-डगर-नगर बीर !
लै करि समीर रोम-रोमनि बसावतौ ।
छूटतौ न मान, मत्र-तत्र अरु यत्र कीन्हे,
जो नहिं हिमत दूती कंत बिन आवतौ ॥८१॥

★

आलि हिमंत समय हिम संगत, बात बहै, जग सीत करै ।
पाकत-कंपत कोमल कामिनि, सीत समाकुल कोर भरै ॥
मानहुँ कामिनि प्रीतम के बिन, वारि समय नहि धीर धरै ।
सोच करै पियरी तन मे, दुबरी नित नैनन नीर ढरै ॥८२॥

शिशिर

★

राशि—

मकर+कुंभ

★

मास—

माघ+फाल्गुन

★

सिसिर सरस मन बरनिऐ, 'केसव' राजा-रंक।
नाँचत-गावत रैन-दिन, खेलत-हँसत निसंक॥

शिशिर-परिचय

★

शिशिर शीत के उत्थान और पतन की ऋतु है। इस ऋतु में भयकर सरदी, बर्फीली वायु, मेघ की गरज और बिजली की चमक के साथ माघ मास की वर्षा, आँधी-तूफान एव ओला-पाला की अधिकता रहती है, जिनके कारण शीत की कठोरता अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है। इसके फल स्वरूप बन-उपवन और बाग-बगीचों के खिले हुए पुष्प ही नही, वरन् उनके पत्ते तक झडने लगते हैं। देखते-देखते प्रकृति देवी की मनोरम क्रीडा-भूमि उजडने लगती है और पल्लवविहीन वृक्षो के कारण सर्वत्र भयावना सा दृश्य दिखलायी देता है। इस प्रकार उजाड और बरबादी के वातावरण मे शीत भी अपने जीवन की अतिम घडियाँ गिनने लगता है और हतप्रभ एवं बलविहीन होकर ऋतुराज बसत के लिए स्थान खाली कर देता है।

वैसे तो शिशिर के मध्य काल मे ही बसतागमन के आसार दिखलायी देने लगते हैं, और माघ शुक्ला पचमी बसत-पंचमी के नाम से प्रसिद्ध भी है, तथापि शिशिर के अतिम पखवाडे मे तो होली के रूप में बसत की धूमधाम आरभ हो ही जाती है। इस प्रकार बरबादी के वातावरण में उत्पन्न और पोषित होकर भी शिशिर का सुखमय अत होता है।

फाग और होली शिशिर ऋतु की विशेषताएँ हैं, जिनके कारण यह नीरस ऋतु भी सरस बन गयी है। ब्रजभाषा काव्य के अवलोकन से ज्ञात होता है कि इस ऋतु के वर्णन मे कवियों का मन रमा नही है, किंतु उन्होंने होली का कथन बडे विस्तार एव मनोयोग पूर्वक किया है। ब्रजभाषा के भक्त कवियों ने शिशिर विषयक पदों की रचनाएँ प्राय नही की है। रीति कालीन कवियों ने इस ऋतु का भी थोडा-बहुत कथन किया है, किंतु वह प्राय. हेमत ऋतु के वर्णन जैसा ही है और उसमें कोई विशेष चमत्कार भी नही है। किंतु फाग और होली के सबध मे ब्रजभाषा का विशाल साहित्य उपलब्ध है, जो भक्ति कालीन पद और रीति कालीन छद-दोनो प्रकार की शैलियों मे रचा गया है।

शिशिर और बसत के सधि-काल में पड़ने के कारण होली का उत्सव कई प्रकार की विचित्रताओं को लेकर आता है। वैसे तो होली की गणना देश भर के मुख्य उत्सवो में की जाती है, तथापि ब्रजभूमि के उत्सवों में इसका

सर्वोपरि महत्व है। यही कारण है कि ब्रजभाषा के कवियों ने इसका बडी उमग और उत्साह के साथ कथन किया है।

फाग और होली में गायन-वादन-नृत्य आदि विविध कलाओं के सर्वत्र प्रदर्शन होते रहते हैं। इसके अतिरिक्त रग-बिरगी गुलाल और पिचकारियो की धूमधाम के कारण समस्त ब्रजभूमि मे आनद और उल्लास का समुद्र सा उमड पडता है। नर-नारी आनद विभोर होकर इस उत्सव में ऐसे तल्लीन हो जाते है कि कुछ समय के लिए उनको विधि-निषेध का भी ज्ञान नही रहता है। ब्रजभाषा-कवियो की तत्सबधी रचनाओं मे इस प्रकार के वातावरण का वास्तविक चित्रण किया गया है, जो सहृदय काव्य-रसिकों को अपूर्व आनद प्रदान करता है।

माघ

बन-उपबन केकी-कपोत, कोकिल कल बोलत ।
'केसव' लै भूभरे भ्रमर, बहु भाँतिन डोलत ॥
मृगमद्-मलय-कपूर, धूर धूमरित दसौ दिसि ।
ताल-मृदग-उपग सुनत, सगीत-गीत निसि ॥
खेलत बसत सतत सुघर, सत असत अनंत
घर नाह न छोडिय माह मे, जो मन माँहि सनेह-मति ॥१॥

**

मनि मय महि मुद्दानी औ मनोहर मजु,
मानिक के मदिर महान मूमें मन है ।
मालती की महँक मलिद मदमाते फिर,
मिले मकरदन सो मौलसिरी पन है ॥
'गिरिधरदास' मुकुताहल की माला धरै,
मदन महीपति के मद मरदन है ।
माघ के महीना मैन मोहन मगकमुखी,
मजेदार मौज करे, मन मे मगन है ॥ २ ॥

फाल्गुन

'गिरिधरदास' फूलवारे फूले फूलन सो,
फलवारे फलन सो फलित फबत है ।
फटिक से फरस पै, फरस फरास रच्यौ,
फबनि सो फलक निवासी ही फबत है ॥
फाटक फराक फनधर फन फबीन को,
फरक मे फरकी फिरोजा की फकत है ।
फरहत भरे फूलें, फागुन मे फनी बधु,
फील की फिरनि, ऐसी फिरनि फिरत है ॥ ३ ॥

**

लोक-लाज तजि राज-रंक, निरसक बिराजत ।
जोइ भावत सोइ कहत, करत पुनि हँसत न लाजत ॥
घर-घर जुवती-ज्वान जोर गहि, गाँठनि जोरहि ।
बसन छीनि मुख मीडि, आँजि लोचन तृन तोरहि ॥
पट बास सुबास अकास उडि, भूमडल सम मडिऐ ।
कहि 'केसवदास' बिलास निधि, फागुन फाग न छडिऐ ॥ ४ ॥

शिशिर

★

शिशिर-वर्णन

सिसिर मे ससि कौ सरूप पावै सविता हू,
घाम हू मे चाँदनी की दुति दमकत है ।
'सेनापति' सीतलता होत है सहस गुनी,
रजनी की भाँई दिन हू मे झमकत है ॥
चाहत चकोर, सूर ओर दृग-छोर करि,
चकवा की छाती तजि धीर धमकत है ।
चंद के भरम मोह होत है कुमोदिनी को,
ससि सक पंकजिनी फूलि ना सकत है ॥५॥

★

फूली अवली है लोध लवली लवगन की,
धवली भई है स्वच्छ सोभा गिरि-सानु की ।
कहै 'रतनाकर' त्यो मरुवक फूलन पै,
झूलन सुहाई लगै हिम-परमानु की ॥
साँझ-तरनी औ भोर-तारा सी दिखाई देत,
सिसिर कुही मे दबी दीपति कृसानु की ।
सीत-भीत हिए मे न भेद यह भान होत,
भानु की प्रभा है, कै प्रभा है सीतभानु की ॥६॥

★

सिसिर तुषार के बुखार से उखारत है,
पूस बीते होत सुन हाथ-पाँय ठिरि कै ।
द्यौस की छुटाई की बड़ाई बरनी न जाइ,
'सेनापति' पाई कछु सोचि कै, सुमिरि कै ॥
सीत ते सहस-कर सहस-चरन ह्वै कै,
ऐसे जात भाजि तम आवत है घिरि कै ।
जौ लौ कोक कोकी को मिलत, तौ लौ होत रात,
कोक अधबीच ही तें आवत है फिरि कै ॥७॥

★

उर मे हिम सर सौ लगत, सिहरत सकल सरीर ।
सी-सी कहि सिसकत न को, परसत सिसिर-समीर ॥८॥

धाय-धाय सिंधुर मदंध फूले लोधन सों,
गंध-लुब्ध ह्वै कै कंध रगरत गात है।
कहै 'रतनाकर' प्रभात अरुनाई माँहि,
बावन के लेरुवा लरत लुरियात है॥
उठि-उठि धूम बनबासिन के बासन तें,
त्रासन ते सीत के तहाँई मँडरात है।
पच्छीगन सीस काढि बिटप-बसेरन ते,
उमहि कछूक, मौन गहि रहि जात हैं॥९॥

*

धायौ हिम-दल, हिम-भूधर ते 'सेनापति'
अंग-अंग जग थिर-जंगम ठिरत है।
पैऐ न बताई, भाजि गई है तताई, सीत-
आयौ आततोई, छिति अंबर घिरत है।
करत है ज्यारी, भेप धरिकैं उज्यारी ही कौ,
घाम बार-बार बैरी बैर सुमिरत है।
उत्तर ते भाजि सूर, ससि को सरूप करि,
दच्छिन के छोर छिन आधक फिरत है॥१०॥

*

सिसिर खिलारी भयौ मिसिर मदारी महा,
करतब आपनौ अनूपम उघारै है।
कहै 'रतनाकर' अखिल हरियारी पर,
कलित कपूर-धूर बिसद बगारै है॥
पावक पै फूँकि के प्रभाव निज पानी करै,
पानी को परसि पल उपल सुधारै है।
प्रबल प्रचार सीतकार की करामत सों,
भानु को पलटि सीत-भानु करि डारै है॥११॥

*

छायौ इमि सिसिर-अतंक महि-मंडल में,
अंक माँहि संकित न बाल ठुनकत है।
कहै 'रतनाकर' न बिकसत बोल नैंक,
कोकिल न कूजत, न भौंर गुनकत है॥

इमि हिम-गाला बरसत चहुँ ओरन तें,
ताकौ कहि आवत कसाला-गुनकत है ।
सीत-भीत अतुल तुलाई करिबे को मनो
धुनक बिधाता तूल-धाप धुनकत है ॥१२॥

*

ह्वै कै भयभीत सीत प्रबल प्रभावन सों,
पाला माँहि मेदिनी सुगात निज ग्वै रही ।
कहै 'रतनाकर' तपाकर को चद जान,
मान सुख चकई-बियोग-ताप म्वै रही ॥
जोगी भयौ चाहत सँजोगी, भोगी जोगी भयौ,
मति जुवती मे पच-पावक मे प्वै रही ।
पैठ जात सिमिट भवानी के पटबर मे,
अबर की चाह यो दिगबर को ह्वै रही ॥१३॥

*

बिहरति रहै बनराज जू मे आठौ जाम,
और सो न काम, गान गावैं नदलाला क ।
फाटी सी पिछौरिया मे, राजत हजार चीर,
दिपत अनूप रूप, छौने मृगछाला के ॥
'लाल बलबीर' स्यामा-स्याम जू के रंग भरे,
तिनको न व्यापत कसाला भूलि पाला के ।
ओढि-ओढि साधु प्रेम-कुटी मे निवास करै,
गूदरी गूँथेवाँ मान मारत दुसाला के ॥१४॥

*

मृगमद--केसर--अगर--धूर--धूम काँपि,
सीत-भीत काँपन की रीतिहि बुझावै है ।
कहै 'रतनाकर' त्यो परदे दरीचिन के,
हिलि-हिलि हिलन अजोगता सुझावै है ॥
मग-दुख संपति न दंपति बिहाइ सकै,
प्रीति सो परस्पर यो भाषि अरुझावैं है ।
सिसिर-निसा मे निसरन को न बाह कहूँ,
गिलिम-गलीचा पाँय गहि समुझावै हैं ॥१५॥

मंजुल मकंदनि के कोपल सचोप लख,
लागे गान गुनन मलिंद छिन छैक ते ।
कहै 'रतनाकर' गुलाबन मे बौडी लगी,
औडी ओप औरही अनूप इन छैक ते ॥
केसरि--कुरंगसार--लेप न सुहात अंग,
कन घनसार के मिलावै किन छैक तें ।
दाबी रहै हौसन कौ हुमस न ही मे अब,
फाबी फाब सीत पै गुलाबी दिन छैक ते ॥१६॥

*

साथ प्राननाथ के सिसिर मे समोद बाल,
सरित सरोवरादि मॉहि अवगाहै ना ।
बार-बार धूप ही मे बैठै छवि वारी जाय,
सीत-छोभ मॉहि छकी चाहै छनौ छॉहै ना ॥
'हरिऔध' सी-सी करै, सीतल समीर लगै,
सीतलता वाकी अजौ सुमुखी सराहै ना ।
चॉदनी मे कढ़ै नैकौ चित मे उमाहे नॉहि,
चंदमुखी चाव कर चंद हू को चाहै ना ॥१७॥

*

मृगमद--केसर--अगर--धूम--जालन कौ,
सुखद दुसालन कौ जदपि सहारौ है ।
कहै 'रतनाकर' पै आनत बिचार आन,
कॉपि जात गात सब हहरि हमारौ है ।
तन की कहा है अब आनि मन हू पै परयौ,
ऐसौ कछु सिसिर-प्रभाव कौ पसारौ है ।
प्रान हू तें प्यारौ मान लागत सखी पै आज,
मान हू तें प्यारौ लगै, पीत पट वारौ है ॥१८॥

*

थिर-चल सकल प्रबल भयभीत ह्वै कै,
जगत जुराफा सम गति दरसत है ।
ठौर-ठौर बरसा ज्यो बरसै बरफ-पुंज,
आलय हिमालय चहूँघा सरसत है ॥

उदित प्रभाकर की मुदित मयूखै र,
पुहुमी पियूष-धर कैसी परसत है।
सोचित सरोजन कौ, पोचित बदन पेखि,
रोचित कुमोदिनी कै मोद बरसत है॥१९॥

*

भानु सीतभानु के समान लघु भान भय,
वारी बरसान सो कृसान हू की साला मे।
दीपगन बारन भयौ है पौन बारन कै,
'सेवक' सितारन सु तारन की माला मे॥
मार्यौ फूल-फूल द्वै अतूल तूल हू कौ तूल,
तैसौ मखतूल भोग लोचन के जाला मे।
मदत मसाला की नवाला बिन बाला होत,
पाला सम लागत दुसाला सीत काला मे॥२०॥

★

चद-छबि पागि, आगि औरै चलै भानु भागि,
सीत जागि-जागि जग ऐसै गरसत है।
रदन सो बोलै रद, बदन बिकासै कौन,
नदन की गौन-रौन सूधौ सरसत है॥
लागी जऊ झाँपै, मची झर की झरापै, तऊ-
'सेवक जू' काँपै, न दुराब दरसत है।
दृढ बरसाला फोरि, साल हू दुसाला फोरि,
सकल मसाला फोरि, पाला बरसत है॥२१।

★

डोलत चहूँघा, मतवारे सम बोलत है,
सबै नर-नारि सुध भूले है सदन की।
केसर के रग बीच भीजे, अग राजत है,
सहित गुलाल सोभा साजत वदन की॥
काहू कै विसेप नख-रेख है उरोजन पै,
काहू कै कपोलन निसानी है रदन की।
'रसिक बिहारी' हिय सोहिनी बिलोको वनी,
सिसिर है, कैवौ ये मोहिनी मदन की॥२२॥

पावक जुड़ानी, विषधरन गँवाई रिस,
चंडकर सकल प्रचंडता विहाई है ।
चोर-विभिचारी निसि भ्रमन विहाय बैठे,
सिंह-वृक वृंद पैठ्यौ गुहन लुकाई है ॥
भीति वस जाके दिन दीन ह्वै कै सिमिटत,
पाला मिसि कीरति अपार जासु छाई है ।
'पूरन' विलोको जग सातुकी बनावन को,
सातमयी, सीतमयी सिसिर सुहाई है ॥२३॥

*

तंग पयोद लसै गिरि-सृंग, मिल्यौ चलि सीतलता सरसावत ।
त्यौं तरु-जूहन पै बिरमाय, घने सुख-साजन को लहरावत ॥
मंजु दरी निकरी जलधार, बसै पुनि सीकर संग लै धावत ।
ग्रीषम हू मे कँपावत गात, सुवात हिमाचल छ्वै जब आवत ॥२४॥

*

कोपि कासमीर ते चल्यौ है दल साज वीर,
धीर ना धरत गलगाजिवे को भीम है ।
सुन्न होत साँझ ते, बजत दंत आधी रात,
तीसरे पहर मे दहल दै असीम है ॥
कहै 'कवि गंग' चौथे पहर सतावै आनि,
निपट निगोरौ मोहि जानि कै यतीम है ।
बाढी सीत-सका, काँपै उर है अतंका, लघु-
संका के लगे ते होत लंका की मुहीम है ॥२५॥

*

मकर सीत बरसत विषम, कुमुद-कमल कुम्हिलात ।
बन-उपबन फीके लगत, पियरे जोउत पात ॥
पियरे जोउत पात, करत जाडौ दारुन अति ।
सो दूनौ बढि जात, चलत मारुत प्रचंड गति ॥
भए नैक माहौठि, कठिन लागै सुठि हिमकर ।
'सेनापति' गुन इहै, कुपित दंपति संगम कर ॥२६॥

*

लोक सीत-साँसत सहत, ढुरि दिन बितवत घाम ।
सिसिर माँहि कुहरा पर, मचत महा कुहराम ॥२७॥

शिशिर-विलास

कहूँ बौरे सरस रसाल बन-बागत मे,
सुखद सुगध चाह अमित बढावै है ।
कहूँ नव नागरी अनग-रग छाकी, हिय-
हुलसि बहार ते, बहार सुर-गावै है ॥
'रसिक बिहारी' कहूँ संग निज प्रीतम के,
नागरी छबीली बिपरीत-रीति छावै है ।
सिसिर की सीत कहूँ, मीत सो मिलन कहूँ,
कहूँ निज प्यारे को बसंत लै बधावै है ॥२८॥

*

सुदर गुलाबी सीस महल बनौ सुभल,
विमल बनाती लगे परदा चमकिकै ।
चारु-चारु चतुर चहूँ दिसि बिछाए भाए,
गिलगिली गिलम-गलीचा सु दमकिकै ॥
'सोभन' धुकायौ मृगमद औ अगर-धूप,
भूमि-भूमि भूमै सखिगन त्यो लमकिकै ।
लिपट रँगीले लाल सिसिर के सीत-भीत,
अंग लावै लाडिली को, अति ही भमकिकै ॥२९॥

*

गुन के निधान दोऊ, रूप के विधान दोऊ,
परम सुजान दोऊ, मिलि बतरावही ।
प्रीति-रीति देखै दोऊ, रहै अनमेखै दोऊ,
मुदित अलेखै दोऊ, रस बरसावही ॥
राधा-मनमोहन अनग की तरंगन सो,
सिसिर की रजनी मे सुख सरसावही ।
अगिनि परसि अरु पुलकित गात धरै,
प्रेम मे विवस ह्वै कै दोऊ लपटावही ॥३०॥

*

राजत है इहिं भाँति बन्यौ गृह, बात न बात जहाँ बिन काजै ।
है हँसती-हँसती चहुँघा, अरु त्यौ हँसती ब्रज-बाल बिराजै ॥
पानन को सनमान महा, बहु तान तरगन की धुनि गाजै ।
'बल्लभ' राधिका-स्याम तहाँ लखु, सैसिर के सुख मे सुभ भ्राजै ॥३१॥

भावै न सरित-सर तीर नीर बीर, और—
आतप हुतासन की तपनि सुहावै है ।
शिशिर की सक-बंक, अधिक उतग पर-
यक पै छबीली सग सुख उँमगावै है ॥
अंग-अंग भंपै तऊ मिटत न सकै उर,
सी-सी करि रदन बतीसी बँधि जावै है ।
'रसिकबिहारी' राग-रग मे अभग मोद,
तन पुलकावै, घनौ मदन जगावै है ॥३२॥

*

रतन जटित त्यो घटित घर चारो ओर,
दरन दिवारन किवारन मुदाए है ।
परदा पसम के असम के पडे है, गोल—
गेदुआ गलीचन, गिलम गुदवाए है ॥
'मजु कवि' आतस अँगीठी धूप धूमि-धूमि,
धूम झूमि-झूमि सुचि सौरभ सुहाए है ।
केलि, कल क्रीडा-बीडा, हँसन-बसन दुति,
दंपति दिपति दिव्य सीत सिसिराए है ॥३३॥

*

बैठे चित्रसाला मे बिसाला रूप बाला-लाला,
एक बेस बाला हू मे, अंग उजियाला है ।
दीन्हे गल बाँई, तन-मन सो लगाई, मानो-
सुंदर अमोल कठ मेली बनमाला है ॥
'लाल बलबीर' ब्यापै हिम की न पीर बीर,
प्रेम रनधीर पिएं, रूप-रस प्याला है ।
देखि छबि आला, बाला होत है निहाला, संग-
राजै प्रतिपाला, राधे छैल नदलाला है ॥३४॥

*

आज रंग महल बिराजैं, श्री स्यामा-स्याम,
जग-मग चारो ओर दीपक उजाले है ।
विविध बनातन के, परदे परे द्वारन पै,
'लाल बलबीर' झब्बा झूमत निराले है ॥

विद्रुम पलंग, तापै गादी मलमली, जापै-
बसन रँगीले, तर-अतर मसाले है ।
कहा सीत-पाले, खाँय गरम मसाले, पिएे-
प्रेम-मधु प्याले, ओढ़ै चौहरे दुसाले है ॥३५॥

*

गरम गिलौरी है नकुल नौनी नेजन की,
व्यंजन अनेकन मे, गरम मसाला है ।
सुंदर मधुर मीठे मेवा धरे थारन में,
पराके सुधा से भरे कचन के प्याला है ॥
'लाल बलबीर जू' कपाला के कसाला कहा,
आय-आय लागत नवीन उर बाला है ।
जरै दीप-माला, सेज सुंदर बिसाला जाकैं,
साल है, दुमाला है, बिसाला चित्रसाला है ॥३६॥

*

पौन प्रविसै न, परे परदे, दिऐ है पट,
आतसी अबास, आस-पास के भरे रहे ।
दिपै दीप झुंडन, दिवारन दिवालगीर,
फरसी फनूस चहुँ रौसन धरे रहै ॥
अगर की धूप, सेज अबर अतर रूप,
'सेवक' मसाले मौज मन के करे रहैं ।
दपटे मनोज, तेऊ झपटे सिसिर-सीत,
छपटे दुसालन मे, लपटे परे रहै ॥३७॥

*

कचन के पलँग बिछाए सीसमहल मे,
चद्दर सुपेदी, सनी सौरभ रसाला मे ।
ओढै ऊन अबर सकल नख-सिख तऊ,
नैक हू न मानै मन रहत कसाला मे ॥
'कवि बसरूप' साजे दीपगन माला स्वच्छ,
अधिक उतंग त्यो अनंग चित्रसाला मे ।
मदत मसाला है, बिसाला जे दुसाला आला,
पाला सम लागै, बाला बिन सीत-काला मे ॥३८॥

राजै आस-पास दासी खासी कर बीन लै-लै,
गावत सुहावनी अनूप तान ताला मे ।
चारो ओर द्वारन पै परदे पसमीनन के,
राखे भर अतर अमोल दीपमाला मे ॥
'लाल बलबीर' प्याला भरे खीर पन्नन के,
पानन के बीरे भर राखे है मसाला मे ।
सजा सेज आला, आवै मदन गोपाला आजु,
ओढ़ि कै दुसाला बाला बैठी चित्रमाला मे ॥३९॥

*

सोभित सखीन मध्य सुंदर नवेली बाल,
ऐसी छबि देत है अनूप तिहि काला मे ।
जैसे उडुगन मध्य राजत सुधाधर जू,
फैल रही जगा-जोति जोबन उजाला मे ॥
'लाल बलबीर' अग भूषन नवीन राजै,
जडित जवाहिर अमोल हेम-माला मे ।
सजा सेज आला, आवै मदनगोपाला आजु,
ओढ़ि कै दुसाला बाला बैठी चित्रसाला मे ॥४०॥

*

बैठी केलि-मदिर मे सुंदर सिंगार साजि,
आगम बिलोक रही प्यारे नद-लाला
द्वारन मे परदे परे है मखतूलन के,
तूल भरे दमदमात, लाल रग गाला के ॥
'लाल बलबीर' के रिझावन विचित्र चित्र,
रचे चित्रसाला मे अनेक केलि-माला के ।
पाला के कसाला के नसावन बिसाला, जहाँ-
राजत अनेक वस्त्र रेसमी दुसाला के ॥४१॥

*

चमचमात चाँदनी चँदोवा लगै चंद्रमा से,
राजै तसवीरै बिपरीति-रीति बाला की ।
चौलग दिवालगिरी, सोहत फनूस-झाड,
चहकै चिराग, छबि छाई दीपमाला की ॥

'लाल बलबीर' सजी, सुंदर सजीली सेज,
गिलम–गलीचे–गादी सुरख दुसाला की।
शिशिर के पाला के कसाला काटिवे के हेत,
रची है बिसाला चित्रसाला नंद-लाला की ॥४२॥

★

सुभग पलंग पै बिराजै नाथ साथ सब,
विविध सिंगार साजि जेती पुर–बाला है
ओढि कै दुसाला, उर कंचुकी कसाला,
गरे मोतिन की माला, हीर-हारहू बिसाला है ॥
कंचन–अंगीठी सो सु मीठी-मीठी धूम उठै,
मन काम स्याम हेतु, रचे धूम जाला है।
'मोभन' भनत एते उदित मसाला जामै,
तामै बिच केलि करै ओढिकै दुसाला है ॥४३॥

★

कारचोबी कीमत के परदा बनाती चारु,
चमक चहुँघा समादान जोत–जाला मे।
फरस गलीचन के बीच मसनद, तापै—
मखमली गोल–गोल गुलगुली गाला मे ॥
'ग्वाल कवि' आला सेजबंद सेज सुंदर पै,
आला मे मसाला धरे, अगर मसाला मे।
चाहत लला को चित्रसाला मे सुबाला आज,
सौतन दुसाला दिए लिपट दुसाला मे ॥४४॥

★

खंभेदार रावटी बनाती लाल डेरन मे,
अगर अँगीठी करी सीत की भजाई है।
कहै 'सिवराम' पसमीने की बिछाइत पै,
तखत के रूप सेज सरस सजाई है ॥
मोरछली अलकै, अनूप सीसफूल छत्र,
सजित कौ सोर काम नौबत बजाई है।
प्यारे कौ मिलाप, प्यारी पातस्याही पाई, रीझि–
सौतिन को सालै, दई सखिन रजाई है ॥४५॥

सेवत सनेह तें सनेह निरधूम आग,
पागि-पागि रस चाखै, गरम मसाला को ।
मादक कौ प्याला हू न पाला-दुख टाला नैक,
तूल हू कौ गाला औ रिसाला तेज ज्वालाको ॥
बिसद बिसाला झाँपि साला औ दुसाला-साल,
साल ना सकत दुख दीह हिम-माला को ।
कहै 'नाथ' साथ कौ न खोवत कसाला वो,
बाला सीत वाला उर लाऐं बिन बाला को ॥४६॥

*

गिरै ब्यौम बरफ, झरफ के सनाका चलै,
मखमली गादी चाँदी-पेचुआ लगे रहे ।
भनत 'दिवाकर' दुसाला वे बिसाला आला.
हरत कसाला, रस-ख्याला ते पगे रहे ॥
छाती से लगाय छाती, ताती कुच थाती मिलि,
मैन-मदमाती, करामाती मे जगे रहे ।
सिसिर के सीत कन भीत समसीत चीत,
जीत लेत पाला, जो सुबाला के सँगैं रहे ॥४७॥

*

सीतल समीर आय, उर हू मे साल होत,
जगत बिहाल होत, बचत न भागे तें ।
हाथ-पाँय कँपैं जाँय, बसन न धरे रहै,
रैन कंप जाय, न रजाई तन त्यागे तें ॥
'राय कवि' दंपति बिनोद चहुँ कोद करें,
सिसिर मे होत घर-बाहर सभागे तें ।
अगिनि के आगे तें, न जागे तें, न बागे तें,
सु सीत जात उन्नत उरोज उर लागे तें ॥४८॥

*

मानिक-महल मे प्रमानिक बिछाऐं सेज,
हीरन के हार तेज सेज पै धरैं भलै ।
'द्विज बलदेव' त्यौंही कचन लता सी बाल,
पूर मन मोद कै कपूर अंग में मलै ॥

अमित अरामै, भोग देत बसु जामैं,
अरु सीत के तमामै,ते समामै जायकै जलै ।
सिसिर की सी करन, सोई है बसीकरन,
ही करन हेतु पिया तौ करत है गलै ॥४६॥

*

बेर-बेर ढाँकैं, बडे डर-डर झाँकैं, तऊ-
कड-कड दाँत बाजि-बाजि जुरि-जुरि जात ।
नैक होत न्यारे, तौपै थर-थर काँपैं प्यारे,
ओढि-ओढि साल माल हू तें लुरि-लुरि जात॥
'सोभन' अनत भाग आग आगे तात लखि,
छार हू के भार पुनि-पुनि मुरि-मुरि जात ।
सिसिर के सीत मे, अनीत सीत मान भीत,
सेज मे पुनीत मीत दोऊ दुरि-दुरि जात ॥५०॥

*

जान-जान जानिकै, प्रमानन गलीचे गोल,
तापै मसनद कामबद सरसत है ।
तापै कारचोबन बितान तान दीने बेस,
मोतिन की झालरै, झलक दरसत है ॥
'मजु कवि' तामै परयौ, पुरट पलंग पास,
पद्मिनी प्रवीन परिचर्य्या परसत है ।
मोहिनी मनोहर मजे मे मोह भरि-भरि,
सुघर विलास वर, नर बरसत है ॥५१॥

*

चित्र छबि-धामैं, रूप-रासि बसुधा मे
अनुराग-बल तामे, सो सुधा मे है रखायौ है ।
देत मन कामै, 'बलदेव' कहो कामै बाल,
कामै की कटाक्ष करि कामै को लजायौ है ।
सेवत सुबामै, ते तमामै है समामै जानि,
हरष हमामै, भोर सामै ना जनायौ है ।
सिसिर अरामै-रस, रस-रस रामैं कस,
जामैं काज, जामै हित, जामै चित लायौ है ॥५२॥

शिशिर–विरह

बैठी चित्रसाला मैं बिलोकत पिया की बाट,
होय गौ कहा री खाय गरम मसाला मे ।
सीतल समीर अग तीर सी लगै है बीर,
मानो ये लिपट आई बरफ हिमाला ते ॥
'लाल बलबीर' पीर कब लौं सहू मै बीर,
कीजिऐ उपाय री, बचाओ काम-ज्वाला त ।
भई मै बिहाला, बिन ए री नंदलाला, नही–
सिसिर कौ सीत जाय, साल औ दुसाला ते ॥५३॥

*

कौने बिरमाए,छैल अज हू न आए, अबै—
मन लेत दाए, को बचावै सीत–काला ते ।
दौरि-दौरि आली झुकि-झाकत झरोखन मे,
लगन लगी है मेरी मदन गुपाला तें ॥
'लाल बलवीर' बिन, जागी बिरहा की पीर,
जाइऐ जरूर, दौर लाइऐ उताला तें ।
भई मै बिहाला, बिन ए री नदलाला, नही–
सिसिर कौ सीत जाय, साल औ दुसाला ते ॥५४॥

*

देत है न कल, एकौ पल ए हो रघुनाथ !
पौन पछिवाँही बहै अगन छिलत सौ ।
पानी की कहानी, सो तौ जाती न बखानी कछू,
नैक परसत पानि पाय पिघलत सौ ॥
कैसे कै हिमत-अत सिसिर कौ ह्वै है पल–
पट के टरत, पेट पीठ सो मिलत सौ ।
अब सो उयौ है आज, तब सो देखि सखी,
तरनि कौ तेज, सीत आवत मिलत सौ ॥५५॥

*

पूस कौ मास सु बीति गयौ, हिय जोस भरी बिरहागिन पैठी ।
दोऊ कहौ किहि कौ कहिऐ, अब तो सन होत है जाऊँ मै कैठी ॥
याद ह्वै बोल मसोसत है जिय, होस परी रहै तासु अँगैठी ।
नैक तजै अफसोस कियौ, जिहि हाय ! सो तीनसौ कोस पै बैठी ॥५६॥

अब आयौ माह, प्यारे लागत है नाह, रवि–
करत न दाह, जैसौ अवरेखियत है।
जानिऐ न जात, बात कहत बिलात दिन,
छिन सो न तातै, तनकौ बिलेखियत है॥
कलप सी रात, सो तौ सोए न सिरात क्यो हू,
सोइ–सोइ जागे, पै न प्रात पेखियत है।
'सेनापति' मेरे जान दिन हू ते रात भई,
दिन मेरे जान सपने मे देखियत है॥५७॥

*

परे तें तुसार, भयौ झार पतझार, रही–
पीरी सब डार, सो बियोग सरसत है।
बोलत न पिक, सोई मौन ह्वै रही है, आस–
पास निरजास, नैन नीर बरसत है॥
'सेनापति' केली बिन, सुन री सहेली! माह–
मास न अकेली, बन–बेली बिलसत है।
बिरह तें छीन, तन भूषन–बिहीन दीन,
मानहु बसंत–कंत काज तरसति है॥५८॥

*

लागै न निमेष, चार जुग सौ निमेष भयौ,
कही न बनति कछु, जैसी तुम कंत की।
मिलन की आस ते उसास नाँही छूटि जात,
कैसे सहौ सासना मदन मयमंत की॥
बीती है अवधि, हम अबला अबध, ताहि–
बधि कहा लैहौ, दया कीजै जीव–जंत की।
कहियो पथिक परदेसी सो, कि धन पीछे–
ह्वै गई सिसिर, कछु सुधि है बसंत की॥५९॥

*

सीत समय परदेस को पीय–पयान सुन्यो, वह रोवन लागी।
या रितु मे हरि क्यो हूँ रहै, घर देवता पूजि मनावन लागी॥
और उपाय तक्यौ न कछू, तब साजिकै बनि बजावन लागी।
प्यारी प्रबीन भरे सुर मेघ-मलार अलापि कै, गावन लागी॥६०॥

(राग सोरठ)

मनमोहन खेलत फाग री, हौं क्यों कर निकसौं ।
मेरे संग की सबै गईं, मोहि प्रगट भयौ अनुराग ॥
एक रैन सपनौ भयौ री, नंदनँदन मिले आय ।
मैं सकुचत घूँघट कढ़्यौ, उन भेंटी भुज लपटाय ॥
अपनौ रस मोको दियौ री, मेरौ लीयौ घूँट ।
बैरिन पलकैं उघरि ते, मेरी गई आस सब छूट ॥
फिर मैं बहुतेरौ कियौ री, नैक न लागी आँख ।
पलक मूँदि परचौ लियौ, मैं जाम एक लौं राख ॥
ता दिन द्वारै ह्वै गयौ री, होरी-डाँडौ रोप ।
सास-ननद देखन गईं, मोहिं घर-रखवारी सोंप ॥
सास उसासन त्रासही री, ननद खरी अनखाय ।
देवर डग धरिबौ गिनैं, मेरौ बोलत नाह रिस्याय ॥
तिखने चढि ठाढी रहौं री, लेवौं करौं कन हेर ।
रात-दिवस हो-हो रहै, बिच वा मुरली की टेर ॥
ऐसी मन मे आवही री, छाँडि लाज-कुल-कान ।
जाय मिलो 'ब्रज-ईस' सो, रतिनायक रस की खान ॥६५॥

★

(राग सारंग)

आज हरि खेलत फाग बनी ।
इत गोरी रोरी भरि भोरी, उत गोकुल कौ धनी ॥
चोबा कौ ढोवा करि राख्यौ, केसर-कीच घनी ।
अबीर-गुलाल उडावत-गावत, सारी जात सनी ॥
हाथन बनी कनक पिचकाई, ग्वालन छूटि घनी ।
'नंददास' प्रभु सँग होरी खेलत, मुरि-मुरि जात अनी ॥६६॥

★

(राग सारंग)

खेलि फाग घर आयौ लाड़िलौ, जसुमति करत बधाई ।
विविध उपहार लिए सब गोपिन, ब्रज जन मगल गाई ॥
कनक-थार भर मुक्ताफल, लै आरती उतराई ।
नदनँदन की या छवि ऊपर, 'सूरदास' बलि जाई ॥६७॥

होली की धूम-धाम

(राग जैतश्री)

नंद-कुँवर खेलत राधा सँग, जमुना-पुलिन सरस रँग होरी ।
नव घनस्याम मनोहर राजत, स्यामा सुभग तन दामिनि गोरी ॥
केसरि के रंग कलस भरे बहु, संग सखा हलधर की जोरी ।
हाथन लिऐं कनक पिचकारी, छिरकें ब्रज की नवल किसोरी ॥
चोर-अबीर उड़ावत, नाँचत कटि सों बाँधि गुलाल की झोरी ।
मगन भईं क्रीडत सब सुंदरि, प्रेम-समुद्र-तरंग झकोरी ॥
बाजत चंग-मृदंग-अधौटी, पटह-झाँझ-झालरि सुर घोरी ।
ताल-रबाब-मुरलिका-बीना, मधुर सब्द उघटत धुनि थोरी ॥
अति अनुराग बढ़्यौ तिहिं औसर, कुल-लज्जा मर्यादा तोरी ।
मदनगोपाल लाल सँग बिहरत, देह-दसा भूली भई बौरी ॥
एक गहत फेंटा फगुवा को, एक करत ठाडी जुठठोरी ।
एक जु आँख आँजि कै भाजी, एक बिलोकि हँसी मुख मोरी ॥
एकन लई छिनाइ मुरलिका, देत गारि मोहन को भोरी ।
एक फुलेल-अरगजा-चोवा, कुमकुम रस-गागर सिर ढोरी ॥
विविध भाँति फूल्यौ वृंदाबन, कुंजत कीर-खटपद-पिक-मोरी ।
निरखत नेह भरी अँखियन सों, यों चितवत निसि चंद चकोरी ॥
थके देव-किन्नर-मुनिगन सब, मनमथ निज मन गयौ लज्योरी ।
'परमानंदास' या सुख को जाँचत, विमल मुक्ति पद छोरी ॥६८।

★

(राग गौरी)

खेलत मदनमोहन पिय होरी ।
लरिका संग सकल गोकुल के, करत कुलाहल ब्रज की खोरी ॥
भवन-भवन ते निकसि द्वार ह्वै, अति प्रफुलित मन नवल किसोरी ।
सोंधौ लिऐ कनक-बेला भर, अरगज-कुमकुम सों घसि छोरी ॥
एक गुवालि गुलाल लिऐ कर, एकन लई बहुत कर रोरी ।
एक पलास कुसुम-रंग बरसत, एक लिऐ बीरा भर झोरी ॥
बाजत ताल-मृदंग-झाँझ-डफ, बिच-बिच मोहन मुरलि धुन थोरी ।
मधुर बचन हँसि कहत परस्पर, 'गोविंद' प्रभु लीनो चित चोरी ॥६६॥

(राग गौरी)

खेलत नंद किसोर ब्रज मे, अति रस बाढ़यौ हो-हो होरी ।
गौरी राग अलापत-गावत, मधुर मुरलि कर घोरी ॥
कटि पियरौ पट फैंट बनी, छवि सीस चंद्रिका-मोर ।
मनमथ-मान हरन हँसि चितवन, चपल नैन की कोर ॥
बालक वृंद स्याम सँग सोभित, उत सोहत ब्रज-नारी ।
विविध सिगार सजे मिल झुंडन, देत भामती गारी ॥
देखि समाज मदनमोहन कौ, भई मगन उल्लास ।
तिनमे मुख्य राधिका नागरि, सकल सुखन की रास ॥
दुंदभि-झाँझ-मुरज-ढप बाजै, मृदग-उपग अरु तार ।
दुहुँ दिसि मात्यौ खेल परस्पर, घोषराय दरबार ॥
चोवा-साख-अरगजा चदन, केसर सुरग मिलाय ।
तकि-तकि तरुनि गुपालै छिरकत, करन कनक-पिचकाय ॥
उत मन मुदित लिये कर सोंधौ, सखन सहित बलबीर ।
जुवति कदबन ऊपर बरसत, सुरग गुलाल अबीर ॥
जुवती-जूथ पेलि सनमुख ह्वै, मोहन पकरे जाय ।
काजर नैन आँजि प्रीतम के, मुरली लई छिनाय ॥
पिय-प्यारी की जोट बनाई, अचल सों पट जोरि ।
सैनहि सैन परसि कर सों कर, हँसत सबै मुख मोरि ॥
मगन भईं, तन की सुधि बिसरी, हृदै बढ्यौ अनुराग ।
ये सुख तीन लोक मे नाँही, गोपिन कौ बड भाग ॥
चीर-हार अँग-अंगन भीजै, कीच मची ब्रज-खोर ।
मानहुँ प्रेम-समुद्र अधिक बल, उमँगि चल्यौ मित छोर ॥
'चतुर्भुजदास' विलास फाग कौ, कहत न बरन्यौ जाय ।
लीला ललित देव गन मोहे, गिरि गोवरधन-राय ॥७०॥

★

(राग रामकली)

होरी के मदमाते आए, लागै हो मोहन मोहिं सुहाए ।
चतुर खिलारिन बस करि पाए, खेलि-खेल सब रैन जगाए ॥
दग अनुराग गुलाल भराए, अंग-अग बहु रंग रचाए ।
अबीर-कुमकुमा केसरि लैकै, चोवा की बहु कींच मचाए ॥
जिहिं जाने तिहि पकरि नँचाए, सरवस फगुवा दै मुकराए ।
'आनँदघन' रस बरसि सिराए, भली करी हम ही पै छाए ॥७१॥

(राग कल्यान)

होरी खेलत कुंज-बिहारी ।
संग लिऐ केसर-कुमकुम भरि, पिय पर प्यारी डारी ॥
चोबा-चंदन-अगर-अरगजा, चरचित ब्रज की नारी ।
तकि-तकि छिरकत हैं मोहन को, किलक देत कर-तारी ॥
मदनगोपाल गहे श्री राधा, हमहि देहु फगुवारी ।
श्रीगिरिधरलाल दियौ तहाँ सरवस, 'रामदास' बलिहारी ॥७२॥

*

(राग नट)

बहुरि डफ बाजन लागे हेली ॥ ध्रु० ॥
खेलत मोहन साँवरौ हो, किहि मिसि देखन जाँय ।
सास-ननद बैरिन भई, अब कीजै कौन उपाय ।
ओजत गागर डारिऐ, जमुना-जल के काज ।
इहिं मिस बाहर निकसि कै, हम जाय मिलैं तजि लाज ॥
आओ बछरा मेलिऐ, बन कों देहि बिडार ।
वे दै है हम ही पठै, हम रहेगी घरी द्वै-चार ॥
हा-हा री हौं जात हों, मोपै नाहिन परत रह्यौ ।
तू तो सोचत ही रही, तैं मान्यौ न मेरौ कह्यौ ॥
राग-रंग गहगड मच्यौ री, नंदराय-दरबार ।
गाय-खेलि-हँसि लीजिऐ, फाग बडौ त्यौहार ॥
तिन मे मोहन अति बने, नाँचत है सब ग्वाल ।
बाजे बहु विधि बाजही, रुंज-मुरज-डफ-ताल
मुरली-मुकट विराजही, कटि पट बाधैं पीत ।
नृत्यत आवत 'ताज' के प्रभु, गावत होरी-गीत ॥७३॥

*

(राग सारंग)

नैनन मे जिन डारो गुलाल, तिहारे पाँय परत नंदलाल ।
होत है अंतर पिय दरसन मे, बिन दरसन बेहाल ॥
कनक-बेलि वृषभान-नंदिनी, प्रीतम स्याम तमाल ।
रितु बसंत वृंदाबन फूल्यौ, नाँचत गोपी-ग्वाल ॥
ब्रज के लोग सबै जुरि आए, करत कुलाहल ख्याल ।
'रामदास' प्रभु गिरिधर नागर, पीक-रंग सोहै गाल ॥७४॥

(राग काफी)

ब्रज मे हरि होरी मचाई ॥
इत तें आई सुघर राधिका, उत तें कुँवर कन्हाई ।
हिल-मिल फाग परस्पर खेले, सोभा बरनी न जाई ।
नंद-घर बजत बधाई ॥
बाजत ताल-मृदग-बाँसुरी, बीना-डफ-सहनाई ।
उडत अबीर-गुलाल-कुमकुमा, रह्यौ सकल ब्रज छाई ।
मानो मघवा झर लाई ॥
लै-लै रग कनक-पिचकारी, सनमुख सबै चलाई ।
छिरकत रग, अग सब भीजे, झुकि-झुकि चाचर गाई ।
परस्पर लोग-लुगाई ॥
राधा सैन दई सखियन को, झुड-झुंड घिर आई ।
झपटि लपट गई स्यामसुंदरसो, परबस पकड़ लै धाईं ।
लाल जी को नाँच नँचाई ॥
छीन लई मुरली-पीतांबर, सिर ते चुनरि उढाई ।
बैनी भाल, नैन बिच कजरा, नकबेसर पहराई ।
मनो नई नारि बनाई ॥
मुसकत हौ, मुख मोडि-मोडि कै, कहाँ गई चतुराई ।
कहाँ गए तेरे तात नंद जी, कहाँ जसोदा माई ।
तुम्हे अब लै न छुडाई ॥
फगुवा दिए बिन जान न पावो, कोटिक करो उपाई ।
लैहौं काढ़ि कसक सब दिन की, तुम चित-चोर, चबाई ।
बहुत दधि-माखन खाई ॥
रास-विलास करत वृंदावन, जहाँ-तहाँ यदुराई ।
राधा-स्याम जुगल जोरी पर, 'सूरदास' बलि जाई ।
प्रीति उर रही समाई ॥७५॥

★

(राग कान्हरौ)

मोसों होरी खेलन आयौ ।
लटपटी पाग, अटपटे बैनन, नैनन बीच सुहायौ ॥
डगर-डगर मे, बगर-बगर मे, सबहिन के मन भायौ ।
'आनँदघन' प्रभु कर दृग मींड़त, हँसि-हँसि कंठ लगायौ ॥७६॥

(राग सारंग)

अहो खेलत होरी, प्यारौ लाल बिहारी, सग वृषभान-दुलारी ।
जमुना-पुलिन सुहावनौ, जहाँ फूलि रहे द्रुम भारी ॥
गुंजत मधुप, कीर-पिक कुंजत, स्रवन सुनत सुखकारी ।
इतही गोप-कुमार विराजत, उत सब गोकुल-नारी ॥
इत नायक बल-मोहन दोऊ, उत चद्रावलि प्यारी ।
इतकैं कर गेंदुक फूलन की, उत गुहि माल सँभारी ॥
पहरावत पीतम प्यारे को, देत-दिवावत गारी ।
बाजत ताल-मृदंग-झाँझ-डफ, तूर-भेरि-सहनारी ॥
ढोलक-ढोल-निसान-महूवर, बिच मुरली मनहारी ।
इनन लई भरि कनक-कटोरी, उनन लई पिचकारी ॥
अति कसि बाँधें फेंट गुलालन, मुठी अबीर उड़ारी ।
बूका-बदन उडत चहूँ दिसि, दिन निसि ज्यो अँधियारी ॥
नैन-सैन दै हँसत परसपर, धाय गहे गिरिधारी ।
चोवा-केसरि-मृगमद घोरी, दियौ सीस तें ढारी ॥
रोरी हरद कपोलन मीडत, आँखि आँजि अनियारी ।
एकन लियौ झपट पीतांबर, एक भरत अँकवारी ॥
श्री राधा सो कर गठजोरौ, नाँचत दै कर-तारी ।
भीज्यौ रस खेलत रगन मे, रँगमगे भूषन-सारी ॥
अधर-माधुरी पिवत-पिवावत, मेटी मदन-व्यथा री ।
क्रीडत देख नंदनंदन, सुर करत कुसुम बरखा री ॥
रस-बस खेल मच्यौ जु परस्पर, बरनै कवि कहा री ।
अविचल रहो सदा ये जोरी, 'कृष्णदास' बलिहारी ॥७७॥

*

(राग आसावरी)

आजु हरि खेलत होरी, सँग वृषभान-किसोरी ।
पूनौ निसि डहडही उजियारी, बाँह-बाँह मे जोरी ॥
चाँदनि मे गुपाल की चमकनि, अरु बुक्कन की झोरी ।
जमुना तीर स्वेत बारू मधि, अति सोभित भइ होरी ॥
इत सब सखा खेल बौराने, उत मदमाती गोरी ।
अद्भुत छवि 'हरिचंद' देखिकै, रह्यौ हरषि तृन तोरी ॥७८॥

(राग सारग)

मोहन हो-हो, हो-हो होरी ।
काल्ह हमारे आँगन गारी दै आयौ, सो को री ॥
अब क्यो दुर बैठे जसुदा ढिग, निकसो कुंजबिहारी ।
उमँगि-उमँगि आई गोकुल की, वे सब भई धन बारी ॥
तबहि लला ललकारि निकारे, रूप-सुधा की प्यासी ।
लपट गईं घनस्याम लाल सो, चमकि-चमकि चपला सी ॥
काजर दै भजि भार भरु वाके, हँसि-हँसि ब्रज की नारी ।
कहै 'रसखान' एक गारी पर, सौ आदर बलिहारी ॥७६॥

*

(राग आसावरी)

बरसाने की नवल नारि मिलि, होरी खेलन आई ।
बरचट धाय, जाय जमुना-तट, घेरे कुँवर कन्हाई ॥
अति झीनी, केसरि-रगभीनी, सारी सुरग सुहाई ।
कंचन बरन कंचुकी ऊपर, झलकत जोबन-झाई ॥
केसर-कस्तूरी-मलयागिरि, भाजन भरि-भरि लाई ।
अबीर-गुलाल भेट भरि भामिनि, करन कनक-पिचकाई ॥
खेलत-खेलत रसिक-सिरोमनि, राधा जु निकट बुलाई ।
'ऋषीकेस' प्रभु रीझि स्याम घन, बनमाला पहराई ।८०॥

*

(राग सोरठ)

हौ कैसै जमुना जल जाऊँ, री हरि मो तन हेरै ।
मेरे संग की जान देत, वु मेरौ ही मग घेरै ॥
नीचौ है, घूँघट तकै, मेरे सनमुख दरपन लाय ।
मुख-प्रतिबिंब निरखि कै, छिन-छिन लेय बलाय ॥री हरि०
डगर बुहारै काँकरी, री डारै दूर उठाय ।
मधुर बैन मोसो कहै, चरनन जिन चुभि जाय ॥री हरि०
जब ही हौ गागर भरौ, री तब ही पैठ अन्हाय ।
तू जिन परसै सीत मे, कहि मोही पै जु भराय ॥री हरि०
हँसि कर कलस उचावही, री मिस कर पकरै बाँह ।
क्यो हू हटक्यौ ना रहै, मेरी छल कर पकरै छाँह ॥री हरि०
यदपि सकल ब्रज-सुदरी, री सब सो खेलै फाग ।
मन-क्रम-वच 'ब्रज-ईस' के, नित मोही सो अनुराग ।८१॥री०

(राग सारग)

अहो पिय ! मोसो ही खेलो, हौ खेलौ तुम संग ।
जो कोऊ और खेलि है तुम सो, कर हौं तामैं भग ॥
हौ ही आँजौ तुम्हारे नयना, जानै न और गँवारि ।
तुम मेरे मुख मृगमद माँढ़ो, हौ भेटौ अकवारि ॥
तुम डफ लेहु आपुने ही कर, हौ गाऊँगी गारि ।
कुमकुम रग जो छिरको भरि-भरि रत्नजटित पिचकारि ॥
तुम सो कहे लेत फगुवा मै, हौ आलिंगन लेहौ ।
'ब्रजपति' आज आन बनिता कौ, लागन लाग न देहौ ॥८२॥

*

(राग सारग)

हो-हो होरी खेलन जैऐ, जाय खिलैऐ कुँवर कन्हैऐ ।
अपने सग तें फूटि परै छिन, वाहि नियारै न पत्यैऐ ॥
बहुत गुलाल केसरि कौ रस लै, समाज खिलारत न धैऐ ।
अपने रंग मे ऐसै बोरिऐ, स्याम रंग हूँ ढयौ नहिं पैऐ ॥
इकतन, इकमन होय सखीरी, बाँह पकरि, वाकौ सीस नवैऐ ।
भाज चलै तौ तारी दै हँसि, सब ब्रज मे री वाहि लजैऐ ॥
फगुवा के मिसि फेंट पकरि कै, मृदु मुसिकाय बदन-तन चहिऐ ।
'जगन्नाथ कविराय' के प्रभु सो, हिलि-मिलिकै रस सिधु बढैऐ ॥८३॥

*

(राग विहागरौ)

रसिक दोऊ खेलन लागे होरी ।
उतते निकसे नदनंदन, इत बरसाने की गोरी ॥
बाजत ताल-मृदंग-झाँझ-डफ, मुरलि मधुर धुनि थोरी ।
गोपी-ग्वाल सबै जुर आए, भवन रह्यौ नहि को री ॥
भवन-भवन ते भामिनि निकसीं, छिरकत चंदन-रोरी ।
बाजत बीन-रबाब-किन्नरी, मनमथ-मान लज्यौ री ॥
भरत भामते मदनगोपालै, हो-हो-हो करि दौरी ।
स्यामा-स्याम की या छवि ऊपर, सब डारत तृन तोरी ॥
तारी दै ललितादिक भाषत, भली बनी ये जोरी ।
केसर और मँगाय विविध रग, दियौ सीस तें ढोरी ॥
खेल मच्यौ ब्रज-बीथिन महियाँ, कुंज-कुज वर खोरी ।
'मुरारिदास' प्रभु फगुवा दीयौ, लोचन लगी ठगोरी ॥८४।

(राग सारग)

होरी खेलि न जानै, तू कब की खिलवारि ।
बरजत हौ रहि ग्वालिनि ! खेनै कीरति–सुकुमारि ॥
जब आवत कर कमल-नाल लै, थोरौ सौ घूँघट डारि ।
चलत दृगचल, अंचल औ भल मूर्ति मैन--उर मारि ॥
गरुवे वचन, बोल हरुवे, दै जात मवन को मारि ।
कर पर कर, धर चिबुक अँगुरिया, इकटक रही निहारि ॥
दक्खिन चरन उठाय उलटि, धरनो जो अगूठा धारि ।
एकटक देखि रहत ठाडी, धर रूप त्रिभगी नारि ॥
कबहुँ सकुचि घूँघट गहरौ दै, गावत सरस धमार ।
बहुत गुलाल उडाय गगन, फिर देखत बदन उघार ॥
तुलत न रति नख-सिख एकौ अँग, को कहि सकै विचार ।
मनहरनी व्रज–तरुनि सबै, ये 'मोहन' मन फँदवार ॥८५॥

*

(होली डफ का)

मै तो चौक उठी, डफ बाजन सो ।
सोवत रही अपने आँगन मे, जागी गारी गाजन सो ॥
देख्यौ तो द्वारे मोहन ठाडे, सजे छैल सब साजन सो ।
'हरीचद' मेरौ नाम लियौ, नित गारी दई बिन लाजन सो ॥८६॥

*

(होली डफ की)

पीरी परि गई, रसिया के बोलन सो । पीरी० ॥
आयौ जानि छैल होरी कौ, डरी लाज के खेलन सो ॥
एक प्रीति, दूजै होरी सिर पर, कैसे बचि हो ठठोलन सो ।
'हरीचंद' सब कोउ जानेंगे, मेरी गलियन डोलन सो ॥८७॥

*

नित–नित होरी व्रज मे रहो ।
विहरति हरि सँग व्रज–जुवती गन, सदा अनंद लहो ॥
प्रफुलित फलित रहो वृंदाबन, मधुप कृष्ण-गुन कहो ।
'हरीचंद' नित सरस सुधामय, प्रेम–प्रवाह बहो ॥८८॥

होली-बिरह

(राग गौरी)

एरी बिरह बढावन, आयौ फागुन मास री ।
हौं कैसी अब करूँ, कठिन परी गाँस री ॥
औरै रितु ह्वै गयी, बयारहुँ और री ।
औरै फूले फूल, और बन ठौर री ॥
औरै मन ह्वै गयौ, और तन पीय कौ ।
और चटपटी लगी, काम की जीय कौ ॥
बन के फूलन देखि, होत जिय सूल री ।
बिनु पिय मेटै कौन, बिरह की हूल री ॥
बिसरयौ भोजन, पान-खान सुख-चैन री ।
वही खुमारी चढ़ी रहत, दिन-रैन री ॥
रजनी नींद न आवै, जिय अकुलाय री ।
चौंकि-चौंकि हौं परौं, चित्त घबराय री ॥
अटा-अटा चढ़ि डोलौं, पिय के हेत री ।
कहूँ नहीं मेरे लाल, दिखाई देत री ॥
सपने में जो कहुँ, पिय-रूप दिखात री ।
तौ यह बैरिन नींद चौंकि तजि जात री ॥
जो कहुँ बाजन बाजै, गोकुल-गैल री ।
तौ उठि धाऊँ, आवत जानूँ छैल री ॥
या घर में सखि ! क्यों नहिं लागत आग री ।
जाके डर, हौं खेलन जात न फाग री ॥
बैरिन मेरी सास-जिठानी है सबै ।
देखन देत न मोहन कौ मुख री अबै ॥
जरौं लाज, ये ऐहै कौन काम री ।
जो नहिं देखन देत, पिया घनस्याम री ॥
मोहि अकेली निरबल-अबला जान री ।
तानि कान लौं खींच्यौ, मदन कमान री ॥
कहा करौं कहँ जाउँ, बताओ मोहि री ।
कहै किन और उपाय, सपथ है तोहि री ॥
जदपि कलंकित कहत, सबै ब्रज-लोग री ।
तऊ मिटत नहिं, मुख लखिवे कौ सोग री ॥
रोवन हूँ नहिं देत, प्रगट मोहि हाय री ।

क्यौं ऐसौ दुख मिटै, बताउ उपाय री ॥
फिरि डफ बाजत, सुनि सखि आए स्याम री ।
होरी खेलत, प्राननाथ सुखधाम री ॥
अब कैसे रहि जाय, मिलौगी धाइ कै ।
लाज छाँड़ि, जग नेह-निसान बजाइ कै ॥
'हरीचद' उठि दौरी भामिनि प्रीति सों ।
बरजे हू नहि रही, मिली मन-मीत सों ॥८९॥

★

(राग खभाती)

अरी, निसि नींद न आवै, होरी खेलन की चोप ।
स्याम सलौना, रूप रिझौना, उलह्यौ जोबन कोप ॥
अबही ख्याल रच्यौ जु परस्पर, मोहन गिरिधर भूप ।
अब बरजत मेरी सास-नँनदिया, परी बिरह के कूप ॥
मुरली टेर सुनाइ, जगावै सोवत मदन अनूप ।
पै जिय सोच रही हौ अपने, जाय मिलौ हरि हूप ॥
इत डर लोग, उत चोप मिलन की, निरखि-निरखि वो रूप ।
'आनँदघन' गुलाल घुमड़न में, मिलि हौ अँग-अँग गूप ॥९०॥

★

(राग बिहाग)

बिनु पिय आजु अकेली सजनी होरी खेलौ ।
बिरह-उसास उड़ाइ गुलालहि दृग-पिचकारी मेलौ ॥
गावो बिरह-धमार, लाल तजि हो-हो बोलि नवेली ।
'हरीचंद' चित माँहि जराऊँ होरी, सुनो हो सहेली ॥९१॥

★

(ठुमरी)

उड़ि जा पछी, खबर ला पी की ।
जाय बिदेस मिलो पीतम से', कहो बिथा बिरहिन के जी की ॥
सौने की चोच मढाऊँ मै पछी, जो तुम बात करो मेरे ही की ।
'माधवी' लाओ पिय कौ सँदेसवा, जरनि बुझाओ बियोगिन ती की ॥९२॥

★

होरी नाहक खेलूँ मै बन मे, पिया बिनु होरी लगी मेरे मन मे ।
सूनौ जगत दिखात स्याम बिनु, बिरह-बिथा बढी तन मे ॥पिया बिनु०
काम कठोर दवारि लगाई, जिय दहकत छिन-छिन मे ।
'हरीचंद' बिनु बिकल बिरहिनी, बिलपति बालापन मे ॥९३ पिया बिनु०

फाग-अनुराग

फूलि रही सरसो चहुँ ओर, जो सौने के बेस बिछायत साँचै ।
चीर सजे नर-नारिन पीत, बढी रस-रीति, बरंगना नाँचै ॥
त्यो 'कवि ग्वाल' रसाल के बौरन, भौरन-भौरन ऊधम माँचै ।
काम गुरू भयौ, फाग सुरू भयौ, खेलिऐ आजु बसत की पाँचै ॥६४॥

*

गावै राग बानी वर, मानो सुधा सानी,
सुनि मोहे सब ज्ञानी ध्यानी, ध्यानी अलसत री ।
केसर कुसभ रग कंचन के जत्र भरे,
भोरी भरि रोरी औ गुलाल बरसत री ॥
चोबा और अतर-फुलेल के फुहारे चलै,
मलै देव मीडै मुख, सुर सोहसंत री ।
'मनीराम' माघ सुदी पचमी पियारे कान्ह,
सजि ब्रजराज आजु खेलत बसत री ॥६५॥

*

फागुन लाग्यौ सखी जब ते, तब ते ब्रजमंडल धूम मच्यौ है ।
नारि नवेली बचै नही एक, विसेष इहै सबै प्रेम अँच्यौ है ॥
साँभ-सकारे कही 'रसखान' सुरग गुलाल लै खेल रच्यौ है ।
को सजनी निलजी न भई, अरु कौन भटू जिहि मान बच्यौ है ॥६६॥

*

ठौर-ठौर चाँचर, चुहुल मची चगन की,
अंगन की औरै दसा, औरै रूप छायौ है ।
आनँद उरन अति, अमित अखड छायौ,
नागर मिलन दिन दाब दरसायौ है ॥
लाज औ रुखाइयत, सग लै विवेक पति,
भाज्यौ ब्रज मे ते मार बानन दबायौ है ।
प्रौढी प्रीति जागन, नवल नेह लागन को.
फागुन सनेहिन के भागन ते आयौ है ॥६७॥

*

फाग मची बरसाने के बाग मे, पूर रह्यौ थल तान-तरग सो ।
गोप-बधू इत ठाड़ी, गोपाल उतै, 'रघुनाथ' बढ़े सब संग सो ॥
घूँघट टारि, सखीन की ओट ह्वै, प्यारी चलाई जो प्रेम-उमगसो ।
लागी तौ मूठ अबीर की आय पै, प्यारौ अन्हाय गयौ वह रंगसो ॥६८॥

होली–बहार

बाजै डफ, ढोल बाजैं, फागु के समाज साजैं,
ग्वालन के झुंड लै गोविंद फौज जोरी है ।
बाधे सिर चीरा, हीरा झलकै कलंगिन मे,
अंगन तरंग रंग भूषन करोरी है ।।
केसरिया बागे, अनुराग-प्रेम पागे, मन-
माखन सभागे फहरात पट-छोरी है ।
लीन्है भरि झोरी, पिचकारी रंग बोरी,
आजु होरी, आजु होरी, बरसाने आजु होरी है ।।९९।।

*

खेलत सुफाग महाराज ब्रजराज आज,
नाँचै बार-अगना सभा मे छल छूटि-छूटि ।
'सेवक' बखानै सुर सकल समाँ के मँचै,
महत मनोज के मजा की मौजि लूटि-लूटि ।।
घूमि-घूमि ताल सो, उझकि-झुकि झूमि-झूमि,
हाव-भाव भूमि लौ बताव तान जूटि-जूटि ।
पूतरी सी, पातरी, नगी सी, पन्नगी सी, नरी,
किन्नरी सी, किन्नरी-परी सी, परै टूटि-टूटि ।।१००।।

*

मोहन औ मोहिनी ने फाग की मचाई लाग,
बाग मे बजत बाजे, कौतुक विसाल है ।
केसर के रंग बहै छज्जन पै, छातन पै,
नारे पै, नदी पै औ निकास पै उछाल है ।।
'ग्वाल कवि' कुंकुम की घालन रसालन पै,
तालन तमालन पै, फूटत उताल है ।
गंजन गुलालन पै, लालन पै, ग्वालन पै,
बाल-बाल-बालन पै घुमड्यौ गुलाल है ।।१०१।।

*

केसर की पिचका परिपूरन, पूर कपूर गुलाल कौ दौना ।
आई सबै ललना ललितादिक, खेलत फाग निकुंज के कौना ।।
केसरिया पट मे दृग पावै, गुलाल के त्रासन स्याम सलौना ।
मानो कहूँ बिछुर्यौ निज साथ ते, सोनजुही मे छिप्यौ मृग-छौना ।।१०२।।

कीरति-किसोरी संग स्यामै लखि भई भोरी,
होरी देखि आई आज प्यारे बलबीर की ।
सारी जरतारी की किनारी मे गुलाल राजै,
तैसी छबि छाजै उत कासमीरी चीर की ॥
हरै-हरै आवै, मंद-मंद सुर गावै दोऊ,
मिलि मुसकावै, दुति धावै री सरीर की ।
नैन कारे ओर पर, बरुनी की छोर पर,
भौहन-मरोर पर, ओप है अबीर की ॥१०३॥

*

खेलो मिलि होरी, घोरो केसर-कमोरी, फे को-
भरि-भरि झोरी लाज जिय मे बिचारो ना ।
डारो बहु रंग, सग चगऊ बजावो, गावो,
सबहि रिझावो, सरसावो सक धारो ना ॥
जोरि कर कहनि निहोर 'हरिचद' प्यारे,
मेरी बिनती है एक, ताहि तुम टारो ना ।
नैन है चकोर, मुख चद सो परैगी ओट,
याते इन आँखिन गुलाल लाल डारो ना ॥१०४॥

*

एक सग धाए नदलाल औ गुलाल दोऊ,
दृगन गए जे भरि, आनँद मढै नही ।
धोय-धोय हारी 'पद्माकर' तिहारी सौह,
अब तौ उपाय एकौ चित्त मे चढै नही ॥
कहा करौ, कहाँ जाऊँ, कासौ कहौ, कौन सुनै,
कौऊ तौ निकारो, ताते दरद बढै नही ।
ऐरी मेरी बीर, जैसै-तैसे इन आँखिन ते-
कढिगौ अबीर, पै अहीर कौ कढै नही ॥१०५॥

*

खेलिऐ फागु, निसंक ह्वै आजु, मयकमुखी बड भाग हमारो ।
लेहु गुलाल दोऊ कर मे, पिचकारिन रग हिए मँहि मारो ॥
भावै तुम्है सो करो मोहि लाल, पै पाँउ परौ, जिन घूँघट टारो ।
'बीर' की सो, हम देखि है कैसै, अबीर तो आँख बचाय कै डारो ॥१०६॥

फागु के भीर अभीरन तें गहि, गोविदै लै गई भीतर गोरी ।
भाय करी मन की 'पद्माकर', ऊपर नाय अबीर की झोरी ॥
छीन पितंबर कमर ते, सु बिदा दई मीड़ि कपोलन रोरी ।
नैनन चाइ, कह्यौ मुसक्याइ, लला ! फिर खेलन आइयो होरी ॥१०७॥

*

बातै लगाय, सखानते न्यारौ कै, आजु गह्यौ बृषभान-किसोरी ।
केसर सो तन मंजन कै, दियौ अंजन आँखिन मे बरजोरी ॥
हे 'रघुनाथ' कहा कहौं कौतुक, प्यारे गोपालै बनाय कै गोरी ।
छाँडि दियौ इतनौ कहि कै, बहुरौ इत आइयो खेलन होरी ॥१०८॥

*

लालहि घेरि रही ललना, मनो हेम-लता लपटानि तमालहि ।
मालहि टूटत जात न जानत, लूटत है रस-रासि रसालहि ॥
सालहि सौतिन के उर मे, चलरी उठि बेगि, दै ताल उतालहि ।
तालहि देत उठी ततकाल, लगाय गुपाल के गाल गुलालहिं ॥१०९॥

*

घेरि लिए घनस्याम, चहूँ दिसि दामिनि सी मिली चेटक कै गई ।
पीत पिछौरी रही कर खैचि कै, बाँसुरिया हँसि छीनि कै ल गई ॥
प्रेम के रंगन सो भरिकै, अरु फाग के रंगन मोहिनी वै गई ।
केसर सो मुख मीडि गोपाल कौ, खजन से दृग अंजन दै गई ॥११०॥

*

होरी कौ औसर हेरि लला, हरुए ढिग आय गली मे लई गहि ।
री छरकायल छूटि गई, 'रघुनाथ' छबीले न फेरि सके लहि ॥
रीझि औ खीझि दोऊ प्रकटी, बृषभान-लली इमि दूर खरी रहि ।
नैन नँचाय कछू कहिबे को, पै चाह्यौ कह्यौ, नहि आयौ कछू कहि ॥१११॥

*

फाग की रैन अँधेरी गलीन मे, मेल भयौ सखि ! साँवरे जी कौ ।
हौ धरि लीन अचानक दौरि, लगावन काज गुलाल कौ टीकौ ॥
वा नें गुलाल लगायौ अली जब, लीन्हो मुठी मे अबीर सो नीकौ ।
वखहुँ छाँड़ि कन्हैया गयौ, न भयौ सखि ! हाय मनोरथ जी कौ ॥११२॥

*

रस भिजये दोऊ दुहुँनि, तऊ टिक रहे. टरै न ।
छवि सो छिरकत प्रेम-रँग, भरि पिचकारी नैन ॥११३॥

थोरी-थोरी बैस की अहीरन की छोरी मग,
भोरी-भोरी बातन उचारत गुमान की।
कहै 'रतनाकर' बजावत मृदंग-चंग,
अंगन उमंग भरी जोबन उठान की।
घाघरे की घूमनि समेटि कै कछोटी किए,
कटि-तट फेटि कोछी कलित विधान की।
झोरी भरै रोरी, घोरि केसर कमोरी भरै,
होरी चली खेलन किसोरी वृषभान की॥११४॥

*

चौरासी समान, कटि किंकिनी बिराजत है,
साँकर ज्यों पग जुग घुंघरू बनाइ है।
दौरी बे सँभार, उर-अंचल उघरि गयौ,
उच्च कुच कुंभ, मनु चाचरि मचाई है।
लालन गुपाल, घोरि केसर कौ रंग लाल,
भरि पिचकारी मुँह ओर को चलाई है।
'सेनापति' धायौ मत्त काम कौ गयंद जानि,
चोप करि चपै, मानों चरखी छुटाई है॥११५॥

*

आयौ जुरि उततें समूह हुरिहारन कौ,
खेलन को होरी वृषभान की किसोरी सों।
कहै 'रतनाकर' त्यों इत ब्रजनारी सबै,
सुनि-सुनि गारी गुनि ठठकि ठगोरी सों॥
आँचर की ओट-ओटि चोट पिचकारिन की,
धाइ धँसी धूँधर मचाइ मंजु रोरी सों।
ग्वाल-बाल भागे उत, झभरि उताल इत,
आपै लाल गहरि गहाइ गयौ गोरी सों॥११६॥

*

पिय के अनुराग सुहाग भरी, रति हेरै न पावत रूप रफै।
रिझवारि महा रसरासि खिलार, सु गावत गारि बजाय डफै॥
अति ही सुकुमार उरोजन भार, भरै मधुरी डग, लंक लफै।
लपटै 'घनआनंद' घायल ह्वै, दृग पागल छ्वै गुजरी गुलफै॥११७॥

नवल किसोरी भोरी केसर ते गोरी, छैल-
होरी मे रही है मद जोबन के छकि कै।
चपे कैसौ ओज, अति उन्नत उरोज पीन,
जाके बोझ खीन कटि जाति है लचकि कै॥
लाल है चलायौ, ललचाइ ललना को देखि,
उघरारौ उर, उरबसी ओर तकि कै।
'सेनापति' सोभा कौ समूह कैसै कह्यौ जात,
रह्यौ है गुलाल अनुराग मो झलकि कै॥११८॥

★

केसर के हौजन पै मौज मची आनँद की,
दामिनी सी दमकत मग सुकुमारी की।
हँसन चलाइन, बचाइन अदाइन सो,
मुरन-दुरन कोर भीजी तनु सारी की॥
रसिक कुँवर जू के हाथन की लाघवता,
कहाँ लौ सराहो उतै खेलन खिलारी की।
जघन सघन कद कुचन-कपोलन पै,
मन की भरन, तहाँ परन पिचकारी की॥११९॥

★

खेलत खिलार गुन-आगर उदार राधा,
नागरि छबीली फाग-राग सरसात है।
भाग भरे भाँवते सो, औसर फब्यौ है आनि,
'आनद के घन' की घमंड दरसात है॥
औचक निसक अंक चोप खेल बूँधरि मे,
सखीन त्यो सैनन ही चैनन सिहात है।
केसू रग ढोरि गोरे कर स्यामसुंदर को,
गोरी स्याम रंग बीचि बूडि-बूडि जात है॥१२०॥

★

बैस नई, अनुराग मई, सु भई फिरै फागुन की मतवारी।
कौंवरे हाथ रचै मिहदी, डफ नीकै बजाय रहै हियरा री॥
साँवरे भौर के भाय भरी, 'घनआनँद' सोनि मे दीसत न्यारी।
कान्ह है पोषत प्रान-पियें, मुख अबुज च्वै मकरद सी गारी॥१२१॥

या अनुराग की फागु लखो, जहाँ रागती राग किसोर-किसोरी ।
त्यो 'पद्माकर' घाली घली, फिर लाल ही लाल गुलाल की झोरी ॥
जैसी की तैसी रही पिचकी कर, काहू न केसर-रग मे बोरी ।
गोरी के रग मे भीजिगौ साँवरो, साँवरे के रँग भीजिगी गोरी ॥१२२॥

*

आई खेलि होरी, कहूँ नवल किसोरी भोरी,
बोरी गई रगन सुगंधन झकोरै है ।
कहै 'पद्माकर' इकत चलि चौकी चढि,
हारन के बारन के बद-फद छोरै है ॥
घाघरे की घूमनि, उरुन की दुबीचै पारि,
आँगी हू उतारि, सुकुमार मुख मोरै है ।
दंतन अधर दाबि, दूनरि भई सी चाप,
चौवर-पचौवर कै चूनरि निचौरै है ॥१२३॥

*

रौक्यौ रहै अब क्यो करि के, मिलि खेलन हौस कौ ओज बढ्यौ है ।
राख्यौ दुराव दुराय हिए, अनुराग सु बाहिर आनि कढ्यौ है ॥
साँवरे छैल गरयारिनि गारिन गायके दोहरा एक पढ्यौ है ।
चौपनि चौगुनिऐ पुट लागि है, आजु तौ सौगुनौ रग चढ्यौ है ॥१२४॥

*

फागु खेल स्याम सग सदन सिधारी प्यारी,
राजै दुति दामिनी सी भामिनी भरी अनग ।
'कवि राव राना' बैठ रतन सिहासन पै,
दर्प भरी दर्पन लै भूषन सँभारै अंग ॥
चद मुख चदन तें चद की कला सी खाति,
कंचन की झारिन मे जल भरि लाई गग ।
कोमल कपोलन ते धोवती गुलाल-लाली,
त्यो-त्यो होत आली ! अति गहब गुलाबी रग ॥१२५॥

*

राधा नवेली सहेली समाज मे, होरी कौ साज सजे अति सोहै ।
मोहन छैल खिलार तहाँ रस-प्यास भरी अँखियान सो जोहै ॥
डीठि मिले, मुरि पीठि दई, हिय-हेत की बात सकै कहि कोहै ।
सैनन ही बरस्यौ 'घनआनँद', भीजनि पै रँग-रीझनि मोहै ॥१२६॥

नौल बसंत उठै अकुलाय, सुनै कल कोकिल की किलकारी।
भाँवरै सी भरें साँवरे-साँवरी, होत निछावर ते सहचारी॥
'देव' दुहूँ को दुहूँ दुरिकै रँग दै पठई, अँग-अंग उजारी।
केसरिया खुलै नद किसोर, किसोरी के केसर की रँगी सारी॥१२७॥

*

खेलिवे को फागु देव-दारा सी उतर आई,
दीरघ दृगन देखि लगत नहि पलकैं।
उडत दुकूल, दरसात भुज-मूल वर,
उन्नत उरोज हार-हीरन के झलकै॥
'बैनी कवि' भू पर धरत मद-मद पाँय,
आनन के ऊपर अनूप छवि छलकै।
लाल-लाल रग भरी, मदन-तरग भरी,
बाल भरी आनँद, गुलाल भरी अलकै॥१२८॥

*

होरी की बातन के चलतें, तुव बोलनि क्यो लरजाय गई॥
अग लता तुव कंचन सी; किमि हाय रोमंचन छाय गई॥
'अंबिकादत्त' को देखत ही, झुकि झाँकती क्यों सरमाय गई।
धूम धमारन की सुनतें अली, स्वेद क बिंदु नहाय गई॥१२९॥

*

घन नव बीथिन ते घर-घर घेरि रहे,
लाल पीरे लागत न जानि परै कारे से।
गावन समाज, करे आवत न बाज राज,
करो ये निलज्ज छके छाक मतवारे से॥
'गोकुल' बसंत मे वियोगिनी के जारिवे को
होरी सी हिए मे हरपित निरधारे से।
भीजे मकरंद, सो पराग लपटाने देखो,
मधुकर डोलत फिरत फगुहारे से॥१३०॥

फाग रच्यौ नँद-नंद प्रबीन, बजैं बहु बीन, मृदंग रबावैं।
खेलती वे सुकमारि तिया, जिन भूषन हू की सही नहि दावै॥
सेत अबीर के धूँधर मे, इमि बालन की बिकसी मुख-आवै।
चाँदनी में चहुँ ओर मनो, 'नृप सभु' बिराज रहीं महतावै॥१३१॥

आज नँद जू के आनंद भरे खेलै फाग,
कोटि चद ते दुचद, भाल–दुति लाल की ।
आभरन हीरन पै मानिक–ललाई आई,
तैसो छबि छाई है बिसाल बनमाल की ॥
अबिर उडावैं, मुठि-मूठि सी चलावै, सखी–
देखिऐ लुनाई, नटनागर गोपाल की ।
सजे पीत पट पर, मुरली–लकुट पर,
मोर के मुकुट पर गरद गुलाल की ॥१३२॥

*

उतते कन्हाई लरिकाई के सखन लीन्है,
करि चतुराई वलि होरी की मचाई है ।
इत वृषभान की कुमारी सुकुमारी प्यारी,
आली गन आली मे रसाली सी सोहाई है ॥
लालन गुलालन की लालन पै डारै मूठि,
चलै पिचकारी, सुखकारी दुहुँ घाई है ।
केंसर के रग साने, सुरग नेह सरसाने,
मानो बरसा ने बरसाने झरि लाई है ॥१३३॥

*

होरी-होरी करत अबीर भरि झोरी लीन्हैं,
खोरी-खोरी फिरै ग्वाल–बाल समुदाई है ।
तामै नदलाल लाल चीरा जरी धरै, गरै,
भावत विसाल बनमाल की सोहाई है ॥
कीरति–किसोरी सग गोरी यूथ-यूथ मिलि,
भरी अनुराग फाग स्यामा सो मचाई है ।
केसर के रग साने, सुरग नेह सरसाने,
मानो बरसा ने बरसाने झरि लाई है ॥१३४॥

*

गरजै डफ-झाँझ सु झिल्लिन के गन, बादर लाल गुलाल की झोरी ।
वहु बुदन की पिचकारिन सो, भिजवै हटि कै हरि पीत पिछोरी ॥
कल कूजित कोकिल-चातक के गन; गाय रिझावत फाग गनोरी ।
सजि कुजन मे मनमोहन सो, जनु पावस पीतम खेलत होरी ॥१३५॥

दुहुँ ओर सो फागु-मढी उमडी, जहॉ श्री-चढी भीर ते भीर भिरी ।
धधकी दे गुलाल की धूँधरि मे, धरी गोरी लला मुख-मीडि सिरी ॥
कुच कचुकी कोर छुवै छरकै, 'पजनेस' पँदी फरकै ज्यो चिरी ।
भरपै, झॅपै, कौवें, कढै तडिता, तरपै मनो लाल घटा मे घिरी ॥१३६॥

*

लै-लै कर झोरी जुरि आई इतै गोरी,
उतै होरी खेलिवे को लाल जाल हू बनायौ कीच ।
छाइगौ छिनै मे यो गुलाल मेघ-माल ऐसौ,
'द्विजदेव' जासो ना जनायो परै ऊँच-नीच ॥
ऐसी भई धूँधरि धँमारि की सु ताही समै,
पावस के भोरै मोर सोर कै उठे अपीच ।
घन के समान ज्यो-ज्यो दौरै घनस्याम, त्यो-त्यो-
संपा सी दुरति आली, चंपा-घन-बन बीच ॥१३७॥

*

जुरि खेलै तिया-हरि होरी भलै, बहु मीन मृदंग बजै रमकै ।
कर कुंकुम लै रॅग कंजमुखी, पिय के मुख लावन को झमकै ॥
तहँ लाल गुलाल के धूँधर मे, बहु बालन की दुति यो दमकै ।
जनु सावन-साँझ ललाई के माँझ, चहुँ दिसि ते चपला चमकै ॥१३८॥

*

मोती कल गग, नील सारी कालिदी सग,
डरयौ लाल रग रूप भारती कौ भरिगौ ।
'सेवक' भनत, कै हिए कौ अनुराग जागि,
उमँगि अदाग आज ऊपर उघरि गौ ॥
ललकि लला ने मूँठि बादला की मारी, तापै-
सनख उरोज पर ऐसौ अनुसरिगौ ।
मानो भानु पूर कला आपनी को सूरमनि,
ह्वै कै चद चूर चद्रचूर पै बगरि गौ ॥१३९॥

*

रोरी की झोरी भरै ब्रज गोरी, सु खेलती होरी जहाँ छवि छाई ।
आयौ तहाँ सुख सो सनि कै, वर बानक सो बनिकै ब्रजराई ॥
जौलौ चलायौ चहै लखिकै, उन पै भरि मूठि चहूँकित धाई ।
तौलौ कियौ सबकौ मुख लाल, गोपाल गुलाल विना मुसकाई ॥१४०॥

अनुक्रमणिका

पद्य-संख्या सहित कवि-नामानुक्रमणिका

★

१. बसंत

न

प

ब

भ

म

र

श

स

ह

२. ग्रीष्म

३. वर्षा

४. आरद्ध

५. हेमंत

६. शिशिर

❀ इति शुभम् ❀